मूल्य: ₹30
नवम्बर–दिसम्बर 2021
आई. एस. ओ. 9001: 2015 संगठन

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय पत्रिका

फल फूल

भाकृअनुप
ICAR

आज़ादी का अमृत महोत्सव

www.icar.org.in

मैदानी क्षेत्रों में भी होगी सेब की बागवानी

देश में सेब की खेती अब जम्मू-कश्मीर, हिमाचल और उत्तराखंड जैसे ठंडे प्रदेशों में ही नहीं बल्कि गर्म मैदानी क्षेत्रों में भी देखने को मिलेगी। हिमाचल प्रदेश के एक किसान ने सेब की एक ऐसी नई किस्म विकसित की है, जिसमें फूल आने और फल लगने के लिए लंबी अवधि तक ठंडक की जरूरत नहीं होती है। सेब की इस प्रजाति की बागवानी देश के मैदानी, उष्ण कटिबंधीय और उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। इस किस्म की सबसे बड़ी खासियत यह है कि इसके पेड़ घर की छत या किचन गार्डन में भी लगाए जा सकते हैं। ये 13 महीने में फल भी देने लगते हैं। इसकी व्यावसायिक खेती मणिपुर, जम्मू, हिमाचल प्रदेश के निचले इलाकों, कर्नाटक, छत्तीसगढ़ और तेलंगाना में प्रयोग के तौर पर शुरू भी हो चुकी है।

हिमाचल प्रदेश के बिलासपुर जिले के पनियाला गांव के प्रगतिशील किसान **श्री हरिमोहन शर्मा** ने सेब की नई किस्म, *'एचआरएमएन-99'* को विकसित किया है। श्री शर्मा के अनुसार वर्ष 1998 में उन्होंने बिलासपुर के घुमारवीं गांव से उपभोग के लिए कुछ सेब खरीदे थे और बीज को अपने घर के पिछवाड़े में फेंक दिया था। वर्ष 1999 में उन्होंने अपने घर के पिछवाड़े में सेब का एक अंकुर देखा, जोकि पिछले वर्ष उनके द्वारा फेंके गए बीजों से विकसित हुआ था। बागवानी में गहरी रुचि रखने वाले एक प्रयोगधर्मी किसान होने के नाते उन्होंने यह समझ लिया कि समुद्र तल से 1800 फीट की दूरी पर स्थित पनियाला जैसे गर्म स्थान पर उगने वाला सेब का यह पौधा असाधारण है। एक वर्ष के बाद, वह पौधा खिलना शुरू हो गया और वर्ष 2001 में उसमें फल भी लगा। श्री हरिमोहन शर्मा के अनुसार इस पौधे को 'मदर प्लांट' के रूप में संरक्षित किया गया। इसके बाद इसकी कलम (युवा कली) को ग्रॉफ्ट करके प्रयोग करना शुरू किया। इस प्रकार वर्ष 2005 तक सेब के

पेड़ों का एक छोटा बाग बनाया, जिनमें फल लगने अब भी जारी है। नेशनल इनोवेशन फाउंडेशन (एनआईएफ)-भारत, भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी) की एक स्वायत्त निकाय, ने सेब की इस नए किस्म में रुचि दिखाई। एनआईएफ ने इसकी शुरुआत करने वाले किसान के दावों की पुष्टि की और आण्विक एवं विविधता विश्लेषण अध्ययन तथा फलों की गुणवत्ता परीक्षण के जरिए सेब की इस किस्म की विशिष्टता व क्षमता का मूल्यांकन किया। एनआईएफ ने पौध किस्म संरक्षण और किसान अधिकार अधिनियम, 2001 के तहत सेब की इस प्रजाति के पंजीकरण में सहायता के अलावा इसकी नर्सरी की स्थापना तथा इसके प्रसार के लिए वित्तीय व तकनीकी सहायता भी प्रदान की है। ■

कजाकिस्तान में हुई थी सेब की उत्पत्ति

वैज्ञानिक मानते हैं कि सेब सबसे पहले मध्य एशियाई देश कजाकिस्तान में उगाया गया था। यहीं से सेब बाकी दुनिया तक पहुंचा। सेब की पहली किस्म *'मालस सिएवर्सी'* मानी जाती है। यह प्रजाति आज भी कजाकिस्तान के जंगलों में उगती है। वर्तमान में दुनियाभर में सेब की सैकड़ों किस्में फल-फूल रही हैं। भारत में इसकी विदेशी और देसी प्रजातियों को बड़ी संख्या में उगाया जा रहा है। देश में मौजूदा समय में अमेरिका, यूके, इजरायल, रूस, चीन, अर्जेंटीना, जर्मनी, कनाडा, आस्ट्रेलिया, स्विट्जरलैंड, नीदरलैंड, जापान, इटली, ईरान, पोलैंड, डेनमार्क, फ्रांस आदि अनेक देशों से लाई गई सेब की सैकड़ों किस्मों की बागवानी की जा रही है। भारत में सेब की रॉयल रेड डिलिशियस प्रजाति ही सर्वाधिक उगाई जाती है। इसका रेड गोल्डन और गोल्डन किस्मों से परागण होता है। अब सेब की लो चिलिंग (कम ठंडक) किस्में जैसे-सुपर चीफ, स्कारलेट स्पर टू, रेड विलोक्स, जेरोमाइन आदि भी विदेशों से मंगवाई जा चुकी हैं। ये प्रजातियां व्यावसायिक तौर पर बेहतर मानी जाती हैं।

आकार में बड़ा, नरम और मीठा है यह सेब

शोध के दौरान, यह पाया गया कि 'एचआरएमएन-99' के 3-8 वर्ष की उम्र के पौधों ने हिमाचल प्रदेश, सिरसा (हरियाणा) और मणिपुर के चार जिलों में प्रतिवर्ष प्रति पौधा 5 से 75 कि.ग्रा. फल का उत्पादन किया। सेब की अन्य किस्मों की तुलना में इसका फल आकार में बड़ा होता है। परिपक्वता के बाद यह बहुत नरम, मीठा और रसदार गूदे वाला होता है। पीले रंग की इसकी त्वचा पर लाल रंग की धारियां होती हैं।

भाकृअनुप
ICAR

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय द्विमासिकी
वर्षः 42, अंकः 6, नवम्बर-दिसम्बर 2021

संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. अशोक कुमार सिंह** — **अध्यक्ष**
   उप-महानिदेशक (कृषि विस्तार)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. **डा. सतेन्द्र कुमार सिंह** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक
   भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. **डा. आर.सी. गौतम** — **सदस्य**
   पूर्व डीन
   भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
4. **डा. एस.के. सिंह** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, नागपुर
5. **डा. वाई.पी.एस. डबास** — **सदस्य**
   निदेशक (प्रसार)
   जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
   पंतनगर
6. **श्री सेठपाल सिंह** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
7. **श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **श्री अशोक सिंह** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक

संपादक
अशोक सिंह
संपादन सहयोग
सुनीता अरोड़ा

प्रभारी (उत्पादन एकक)
पुनीत भसीन
मुख्य तकनीकी अधिकारी
अशोक शास्त्री

प्रभारी (व्यवसाय एकक)
जे.पी. उपाध्ये

दूरभाषः 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12
एक प्रतिः रु. 30.00 वार्षिक : रु. 150.00
E-mail : phalphul@gmail.com

डिस्क्लेमर
लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुनः प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों-कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें। समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र दिल्ली होगा।

विषय सूची

संपादकीय **औषधीय पौधों की खेती को बढ़ावा देने का अभियान**—अशोक सिंह

लाभकारी — 4
सेब की बागवानी से अधिक आय
जगदीश चन्द्र कैम

वैज्ञानिक प्रणाली — 7
तरबूज की उन्नत खेती
साबले पी.ए., सुषमा साबले **और** प्रीति एच. दवे

नियंत्रण — 10
टमाटर के प्रमुख रोगों की रोकथाम
आरती शुक्ला, मीनू गुप्ता, अनुराग शर्मा **और** डी.डी. शर्मा

विशिष्ट — 13
कॉस्टस का औषधीय महत्व
अंजली पटेल

तकनीक — 15
वायु दाब से तैयार करें अमरूद के पौधे
जितेन्द्र सिंह **और** सन्दीप कुमार

आमदनी — 17
ड्रैगनफल की व्यावसायिक खेती
मोती लाल मीणा **और** धीरज सिंह

शाक-भाजी — 20
चौलाई के फायदे अनेक
गोपाल कतना, जी.डी. शर्मा **और** वाई.एस. धारीवाल

मसाला — 22
मिर्च की आधुनिक खेती
बलराज सिंह

प्रबंधन — 25
मटर के मुख्य रोगों की रोकथाम
आदित्य, आर.एस. जारियाल, कुमुद जारियाल **और** जे.एन. भाटिया

बगीचा — 28
अमरूद की अति सघन बागवानी
प्रतीक सिंह, आकाश, दीक्षा मिश्रा, आनंद कुमार सिंह **और** बिनोद कुमार सिंह

बागवानी — 31
नीबूवर्गीय फलों की खेती
अंजना खोलिया, ए.के. पाण्डेय **और** रंजीत पाल

प्रौद्योगिकी — 34
सौर प्रशीतित बैटरीरहित पूसा फार्म सनफ्रिज
संगीता चोपड़ा, प्रतिभा जोशी, इंद्रमणि मिश्रा, **और** रेंडोल्फ बौड़ी

रोकथाम — 37
कद्दूवर्गीय सब्जियों में कीट प्रबंधन
अंकुर प्रकाश वर्मा, आदित्य पटेल, हेम सिंह **और** अनुज शाक्य

बचाव — 39
मसाला फसलों में समेकित कीट प्रबंधन
गजेन्द्र सिंह **और** अर्चना अनोखे

विषय सूची

दुर्लभ 41
लुप्त होने की कगार पर है राजस्थान का कल्पवृक्ष
नरपत सिंह, चेतन कुमार दौतानिया, सुचित्रा **और** प्रवेश सिंह चौहान

संजीवनी बूटी 43
सहजन है एक औषधीय पेड़
संदीप कुमार **और** प्रियंका कुमावत

विधि 45
प्याज उत्पादन तकनीक
शोभाराम अंजनावे, आशीष शर्मा, रजनी शर्मा, विकास जैन **और** प्रदीप मिश्रा

स्वरोजगार 48
बटन मशरूम की खेती
निधि त्यागी **और** सीमा ठाकुर

मुनाफा 50
शुष्क क्षेत्रों में तुम्बा की खेती है लाभकारी
राम निवास, चारू शर्मा, चंद्र प्रकाश मीणा **और** सुनील शर्मा

स्वास्थ्य 52
गिलोय है बहुपयोगी औषधीय पादप
मोरध्वज सिंह, कनिका इस्सर **और** संजय सिंह नेगी

विशेष 54
चूसने वाले आम की प्रमाणित किस्में
इंदिरा देवी, नव प्रेम सिंह **और** सुमनजीत कौर

वैज्ञानिक विधि 57
खाद्य कोटिंग से फल भंडारण गुणवत्ता में वृद्धि
अर्चना महापात्र, मनोज कुमार महावर, ज्योति ढाकणे-लाड, शर्मिला पाटिल, **और** अशोक कुमार भारीमल

नर्सरी 59
आधुनिक तकनीक से सब्जी पौध उत्पादन
आर.एन. शर्मा; एस.के. बैरवा **और** बी.एल. कुम्हार

पुष्प 62
सिम्बिडियम ऑर्किड्स की जैविक खेती
राकेश कुमार सिंह, लक्ष्मण चन्द्र डे **और** मीना छेत्री

विशेष 64
ट्यूबरस बिगोनिया है पहाड़ी राज्यों का कंदीय पुष्प
जसबीर सिंह वजीर **और** अजय कुमार

सफलता गाथा 68
आम की 'सदाबहार' किस्म

जानकारी 69
नवंबर-दिसंबर में बागों के कार्यकलाप
हरे कृष्ण

नवोन्मेष
मैदानी क्षेत्रों में भी होगी सेब की बागवानी **आवरण II**

सार-समाचार
- **भारत की सबसे तीखी मिर्च 'किंग चिली' का लंदन में निर्यात**
- **लीची की तीन नई किस्में विकसित** **आवरण III**

संपादकीय

औषधीय पौधों की खेती को बढ़ावा देने का अभियान

परंपरागत फसलों की खेती के बदले व्यावसायिक महत्व के खाद्यान्नों की फसलों की ओर देश के कृषकों का रुझान हाल के वर्षों में तेजी से बढ़ा है। इस क्रम में सरकार द्वारा वर्ष 2022 तक किसानों की आय दोगुनी किए जाने का संकल्प और बहुसंख्यक कृषकों का आधुनिक कृषि तकनीकों के प्रति जागरूक होना, निस्संदेह काफी महत्वपूर्ण कहे जा सकते हैं। केंद्रीय कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा इस दिशा में देशव्यापी स्तर पर कई प्रकार के कार्यक्रमों एवं योजनाओं पर गंभीरतापूर्वक काम किया जा रहा है। कमोबेश राज्य सरकारों के कृषि विभागों द्वारा भी इसी प्रकार की योजनाओं का बड़े पैमाने पर कार्यान्वयन किया जा रहा है। देश में साल दर साल बढ़ते खाद्यान्न उत्पादन एवं बागवानी फसलों की रिकार्ड उपज से संकेत मिलता है कि उपरोक्त योजनाओं के सकारात्मक परिणाम सामने आ रहे हैं।

इसी सोच के आधार पर अब केंद्रीय आयुष मंत्रालय द्वारा एक नई पहल की घोषणा की गई है। इसके अंतर्गत राष्ट्रीय औषधीय पादप बोर्ड ने आजादी के अमृत महोत्सव के दौरान देशभर में जड़ी-बूटियों की खेती को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से एक राष्ट्रव्यापी स्तर पर अभियान की शुरूआत की है। यह वास्तविकता है कि पिछले दो वर्षों के दौरान कोविड महामारी ने ऐसे हर्बल उत्पादों की मांग में और वृद्धि ला दी है और अश्वगंधा, गिलोय, तुलसी, कालमेघ, मुलैठी जैसी कई प्रमुख जड़ी-बूटियों की मांग में काफी बढ़ोतरी हुई है। इस अभियान के प्रारंभ में औषधीय पौधों की पांच प्रजातियां वितरित की गई हैं जिनमें पारिजात, बेल, नीम, अश्वगंधा और जामुन के पौधे शामिल हैं। जानकारी के अनुसार आगामी एक वर्ष की अवधि में देश के विभिन्न राज्यों में अतिरिक्त 75 हजार हैक्टर क्षेत्रफल में जड़ी-बूटियों की खेती की जाएगी। इससे उम्मीद है कि किसानों की आय में बढ़ोतरी होगी और हरित भारत का सपना भी साकार होगा।

देश में मौजूद जलवायु विविधता के कारण औषधीय पौधों की खेती की भरपूर संभावनाओं को देखते हुए इस अभियान की शुरूआत की गई है। इससे देश में जड़ी-बूटियों की न सिर्फ उपलब्धता बढ़ेगी बल्कि आयुर्वेदिक औषधियों के उत्पादन में भी चहुमुंखी वृद्धि होगी। इसका असर औषधीय पादप उत्पादक किसानों की बढ़ी आय एवं आयुर्वेदिक औषधियों के निर्यात में तेजी के रूप में देखने को मिल सकता है। यहां यह उल्लेखनीय है कि हाल के वर्षों में भारत सहित वैश्विक स्तर पर औषधीय पौधों एवं जड़ी-बूटियों से तैयार औषधियों की मांग में तेजी देखने को मिल रही है।

सरकार द्वारा संचालित इस अभियान के दौरान ऐसी औषधियों के प्रति जनसाधारण के बीच जागरूकता बढ़ाने हेतु व्याख्यानों एवं वेबीनारों का भी बड़े पैमाने पर आयोजन किए जाने की योजना है। इन औषधियों के महत्व से परिचित करवाने हेतु आयुष दवाओं का वितरण भी इसी अभियान का अभिन्न हिस्सा है।

ऐसे अभियानों के सफल कार्यान्वयन से उम्मीद की जानी चाहिए कि जड़ी-बूटियों की ओर कृषकों का रुझान आने वाले वर्षों में और बढ़ेगा और परंपरागत फसल उगाने के साल-दर-साल के चक्र से निकलकर कृषि आमदनी बढ़ाने का विकल्प उन्हें बड़ी संख्या में आकर्षित करेगा।

(अशोक सिंह)

सेब की बागवानी से अधिक आय

जगदीश चन्द्र कैम*

शीतोष्ण फलों में सेब अपने विशिष्ट स्वाद, सुगंध, रंग व अच्छी भण्डारण क्षमता के लिए प्रख्यात है। इसका उपयोग ताजे एवं प्रसंस्करित उत्पादों जैसे-जैम, जेली, चटनी, जूस, मुरब्बा इत्यादि के रूप में किया जाता है। सेब में कार्बोहाइड्रेट, वसा, प्रोटीन, खनिज-लवण के साथ-साथ अनेक प्रकार के विटामिन भी पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं, जो स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत लाभप्रद हैं। वर्तमान में राज्य में औद्यानिक फसलों के अंतर्गत लगभग 3250 करोड़ रुपये का वार्षिक व्यवसाय है। इसमें सेब का अनुमानित 358.50 करोड़ रुपये का कारोबार है, जो कि उत्तराखण्ड राज्य में कुल औद्यानिक फसलों के व्यवसाय का 11.03 प्रतिशत है।

सेब, शीतोष्ण जलवायु का फल है। इसकी खेती समुद्र तल से 2000-2500 मीटर तक की ऊंचाई वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जाती है। सेब की सफल बागवानी के लिए 0.5-28 डिग्री सेल्सियस तापमान तथा 1000-1500 मि.मी. वार्षिक वर्षा की आवश्यकता होती है।

इसकी सफल बागवानी के लिए अच्छे जल निकास वाली गहरी मटियार दोमट भूमि, जिसका पी-एच 5.5-6.5 हो, उपयुक्त होती है। क्षारीय एवं कंकरीली/पथरीली भूमि इसकी खेती के लिए अनुपयुक्त पाई गई है। अधिक अम्लीय भूमि में मूलसंधि विगलन रोग लगने की आशंका बनी रहती है।

किस्में

देश में उगाई जानी वाली अधिकतर किस्में विदेशों से आयातित हैं। परिपक्वता के आधार पर व्यावसायिक किस्मों का विवरण निम्नानुसार है:

शीघ्र पकने वाली

अर्ली शनबरी, फैनी, बिनोनी, ग्रीन स्वीट, चौबटिया प्रिन्सेस, चौबटिया अनुपम, रेड स्ट्रैकेन और समरक्वीन

*अपर निदेशक, उद्यान एवं खाद्य प्रसंस्करण विभाग, उत्तराखंड, राजकीय उद्यान, सर्किट हाउस, देहरादून (उत्तराखंड)

मध्यम पकने वाली

किंग ऑफ पीपिन, मैकेइन्टोश, स्पार्टन, रेड डेलीशियस, रॉयल डेलीशियस, बांस डेलीशियस और रिच-ए-रेड

देर से पकने वाली

राइमर, बर्किंघम, पैक्स प्लीजेन्ट, ग्रेनी स्मिथ और गोल्डन डेलीशियस

घाटी के लिए

अन्ना, ट्रॉपिकल ब्यूटी, वेरेड, नावमी, माइचल और इनसिंमर

स्पर प्रजातियां

सघन बागवानी के लिए स्पर किस्मों का महत्व अत्यधिक है। ये किस्में अत्यधिक बौनी तथा स्पर पर खूब फलती हैं। लंबी टहनियों पर असंख्य स्पर पाए जाते हैं, जिनमें पुष्पन एवं फलन अच्छा होता है। स्पर प्रजातियों में रेड चीफ, रेड स्पर, वैल स्पर, सिल्वर स्पर, गोल्डन स्पर, आरगन स्पर, गेलगाला, समर रेड मुख्य हैं।

पादप प्रवर्द्धन

देश में सेब का प्रवर्द्धन सामान्यत: बीजू मूलवृन्त के ऊपर कलम बांधकर व चश्मा

एंटीहेलनेट का प्रयोग

परागण एवं फलन

सेब की बहुत सी किस्मों में स्व:निषेच्यता पाई जाती है। इससे पेड़ों में फल तब तक नहीं आते, जबतक किसी परागणकर्ता किस्म का रोपण न किया जाए। अच्छे फलन के लिए 30-33 प्रतिशत तक परागण किस्मों के पौधों का समावेश होना चाहिए तथा अर्ली किस्मों, जैसे-टाइडमैंस अर्ली वारसेस्टर, डेलीशियस किस्मों में रेड गोल्ड व पछेती प्रजातियों राइमर व बर्किंघम को एक साथ रोपा जाना चाहिए। स्पर प्रजातियों में गोल्डन स्पर, स्कारलेट गाला, रेड फ्यूजी व क्रेब एप्पल को परागणकर्ता प्रजातियों के रूप में रोपित करना चाहिए। एक हैक्टर सेब के प्रभावी परागण के लिए 02-03 स्वस्थ पूर्ण विकसित मधुमक्खी की कॉलोनियां रखनीं चाहिए।

पोषण का खजाना सेब

चढ़ाकर किया जाता है। कलिकायन, मई-जून में एवं रोपण सुषुप्तावस्था (दिसंबर-फरवरी) में किया जाता है। रोपण (ग्राफ्टिंग) के बाद मूलवृन्त से निकलने वाली शाखाओं को काट देना चाहिए, ताकि प्रांकुर शाखा में उचित वृद्धि हो सके।

सेब के मूलवृन्त

- **अधिक ओजस्वी:** एम-16, एम-12 एवं एम-25
- **ओजस्वी:** एमएम-104, एम एम-111 एवं एम एम-109
- **मध्यम बौनी:** एम एम-106, एम-7 एवं एम-26
- **बौनी:** एम-8 एवं एम-9
- **अत्यधिक बौनी:** एम-27

पौध रोपण

सेब का रोपण सामान्यत: 6×6 मीटर दूरी पर किया जाता है। पौध रोपण के लिए गड्ढे का आकार 1×1×1 मीटर होना चाहिए। प्रत्येक गड्ढे में उपजाऊ मृदा के साथ 30-40 कि.ग्रा. अच्छी सड़ी गोबर की खाद, 500 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट एवं 50 ग्राम क्लोरोपायरीफॉस धूल को मिलाकर गड्ढे को 15-20 सें.मी. की ऊंचाई तक भर देना चाहिए। रेखांकन एवं गड्ढे की खुदाई अक्टूबर-दिसंबर में कर देनी चाहिए। रोपण दिसंबर-फरवरी तक करना उचित रहता है। रोपण के समय 30-33 प्रतिशत परागण किस्मों का समावेश करना उत्पादन की दृष्टि से उपयुक्त होता है।

खाद एवं उर्वरक

सेब के पौधों में 05 कि.ग्रा. गोबर या कम्पोस्ट खाद, 25 ग्राम नाइट्रोजन, 20 ग्राम फॉस्फेट, 25 ग्राम पोटाश प्रतिवर्ष प्रति पौध की दर से देनी चाहिए। यह मात्रा 20 वर्षों तक लगातार पौधे की आयु के अनुसार बढ़ाते हुए प्रयोग करनी चाहिए। जैविक खाद को वर्षा ऋतु के समाप्त होने के बाद सितंबर-अक्टूबर में थाले में पौधे के तने से 20-25 सें.मी. की दूरी पर चारों तरफ फैलाकर लगभग 20-25 सें.मी. गहरी गुड़ाई कर मृदा में अच्छी प्रकार मिला देना चाहिए। नाइट्रोजन की 3/4 मात्रा और फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा कली खिलने से 2-3 सप्ताह पूर्व अर्थात फरवरी के दूसरे पखवाड़े तथा नाइट्रोजन की शेष 1/4 मात्रा फल तोड़ने के बाद तने से पर्याप्त दूरी रखकर प्रयोग करनी चाहिए।

सिंचाई

देश में सेब की बागवानी मुख्य रूप से वर्षा पर ही निर्भर रहती है। 1000 मि.मी. या इससे अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सिंचाई की आवश्यकता होती है। प्रारम्भिक अवस्था में सिंचाई करना आवश्यक

राजकीय उद्यान, जरमोला, उत्तरकाशी स्पर प्रजाति-रैड चीफ

होता है। बौने मूलवृन्त पर सेब की सघन बागवानी में पौधों की सिंचाई प्रारम्भिक अवस्था से ही की जाती है। पर्वतीय क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा के अभाव में पलवार का प्रयोग, नमी संरक्षण के लिए लाभकारी होता है। इसके लिए 400 गेज की काली पॉलीथीन का प्रयोग करना आर्थिक दृष्टि से उपयुक्त होता है।

फलों की तुड़ाई व श्रेणीकरण

सेब के फलों की उचित समय पर तुड़ाई करना आवश्यक है। यह समय, किस्म विशेष, समुद तल की ऊंचाई और जलवायु पर निर्भर करता है। बागवान फलों की परिपक्वता का अनुमान फलों एवं रंग, फलों के स्वाद, फलों के दाब परीक्षण व कुल घुलनशील ठोस पदार्थों आदि के आधार पर लगाते हैं। फल जून-नवंबर तक किस्म तथा स्थान विशेष के अनुसार पकते हैं। फलों की तुड़ाई 03-04 दिनों के अंतराल पर सूखे दिनों में डंठल सहित करना अच्छा रहता है। फलों की तुड़ाई के बाद उनका श्रेणीकरण (सॉर्टिंग, ग्रेडिंग) करना आवश्यक होता है। यह करते समय ध्यान रखना चाहिए कि फलों को किसी प्रकार की चोट न लगे। श्रेणीकरण के लिए ग्रेडर मशीन का प्रयोग किया जाना उत्तम रहता है।

फलों से लदे पेड़

वृद्धि नियामकों का प्रयोग

सेब में पैक्लोब्यूट्राजाल (0.4-2.0 ग्राम प्रति वर्गमीटर) का प्रयोग फरवरी में तने के चारों तरफ मृदा में करना चाहिए। यह पुष्प कलिका विभेदन में सहायक होता है। अगले वर्ष इसकी आधी मात्रा का प्रयोग करना चाहिए। फूल आने के समय अल्फा-2 नेफ्थाक्सी प्रोपाइनिक एसिड 100 पी.पी.एम. घोल का छिड़काव करने से फलों की संख्या, आकार एवं गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

ग्रेडिंग उपरान्त कोरोगेटेड बॉक्स में पैकिंग

कटाई-छंटाई

पौधों को निश्चित आकार देने के लिए रोपाई के 04-05 वर्षों तक ट्रेन्ड करना आवश्यक होता है। इस प्रकार वे फलों के वजन को सम्भाल सकें व पौधों को सूर्य की रोशनी भलीभांति मिल सके। ट्रेनिंग के लिए मॉडीफाइड सेन्टर लीडर विधि सबसे उत्तम पाई गई है। इस विधि में जमीन से 50-70 सें.मी. की ऊंचाई तक तने से शाखाएं नहीं निकलने देनी चाहिए। बाद में अलग-अलग दिशा में 30-40 सें.मी. की दूरी पर मुख्य शाखा से 6-7 उप शाखाएं लेने के बाद मुख्य शाखा को ऊपर से काट देना चाहिए। कमजोर, रोगग्रस्त एवं सूखी टहनियों को समय-समय पर काटकर निकालते रहना चाहिए।

उपज

इसकी उपज क्षेत्रीय जलवायु, स्थान विशेष व किस्म आदि पर निर्भर करती है। सेब की औसत उपज 40-100 कि.ग्रा. प्रति पेड़ प्रतिवर्ष होती है।

तरबूज की उन्नत खेती

साबले पी.ए.*, **सुषमा साबले**** और **प्रीति एच. दवे*****

तरबूज एक बेलवाली गर्मी के मौसम में उगाई जाने वाली कद्दूवर्गीय महत्वपूर्ण फसल है। तरबूज हमारे देश में एक बहुत ही लोकप्रिय फल है। गर्मी में तरबूज का फल, फ्रूट डिश, जूस, शरबत, स्क्वैश आदि अनेक रूप से उपयोग होता है। तरबूज के पोषण और स्वास्थ्य लाभ भी कई हैं। इसकी खेती आर्थिक रूप से फायदेमंद मानी जाती है। यह एक बेहतरीन और ताजगीदायक फल है। प्रति 100 ग्राम तरबूज में 95.8 ग्राम पानी होता है। इसी लिए गर्मियों मे तरबूज का सेवन धूप की वजह से होने वाले निर्जलीकरण से बचाता है और शरीर को ताजगी से भरे रखता है। तरबूज गर्मियों में अक्सर होने वाले मूत्रमार्ग के संक्रमण से निजात पाने में भी सहायक है। इसमें उपलब्ध पोटेशियम हमारे हृदय को स्वस्थ एवं रक्तचाप को संतुलित बनाए रखने के लिए काफी महत्वपूर्ण होता है। तरबूज लगभग 119 मि.ग्रा. पोटेशियम देता है, जो कि हृदय के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है।

तरबूज एक लो-कैलोरी फल है, जो सिर्फ 16 किलो कैलोरी ऊर्जा प्रदान करता है। यह प्रोटीन और वसा का निम्न स्रोत है। इसीलिए मोटे व्यक्ति भी तरबूज का सेवन बिना वजन बढ़ने की चिंता के कर सकते हैं। यह उपयोगी विटामिन 'ए' एवं विटामिन 'सी' भी प्रदान करता है। तरबूज लौह तत्व का एक बढ़िया स्रोत है और लगभग 7.9 मि.ग्रा. लौह तत्व देता है। इसलिए तरबूज किशोरी, सगर्भा एवं धात्री माता के लिए लौह

क्यारियों पर फैले पलवार पेपर

*सहायक प्राध्यापक (वैज्ञानिक) बागवानी, ***सहायक प्राध्यापक (वैज्ञानिक) आहार एवं पोषण, के.वि.कें., सरदार कृषिनगर दांतीवाड़ा कृषि विश्वविद्यालय, साबरकांठा (गुजरात); **पी-एचडी. छात्र (कृषिविज्ञान), महात्मा फुले कृषि विश्वविद्यालय, राहुरी (महाराष्ट्र)

किस्में एवं संकर

तरबूज की प्रमुख किस्मों एवं संकर में शुगर बेबी, अर्का मानिक एवं अर्का ज्योति प्रमुख मानी जाती हैं। इसके अलावा कई बहुराष्ट्रीय बीज कंपनियों के बीज किसानों में प्रचलित हैं। बुआई के लिए उपयुक्त प्रजाति का चयन बाजार में मांग, उत्पादन क्षमता एवं जैविक अथवा अजैविक प्रकोप की प्रतिकारक क्षमता पर निर्भर करता है।

कोकोपीट प्रोट्रे में तरबूज के पौधे

का एक अच्छा स्रोत है। छह माह पूरे होने के तुरंत बाद जब बच्चों को पूरक आहार देना होता है, तब तरबूज का रस एक स्वादिष्ट एवं स्वास्थ्यप्रद विकल्प है।

भूमि और जलवायु

मध्यम काली, रेतीली दोमट मृदा, जिसमें प्रचुर मात्रा में कार्बनिक पदार्थ एवं उचित जल क्षमता हो, तरबूज की सफल खेती के लिए उचित मानी जाती है। तटस्थ मृदा (6.5-7 पी-एच मान वाली) इसकी खेती के लिए बेहतर मानी जाती है। मृदा में घुलनशील कार्बोनेट और बाइकार्बोनेट क्षार उपयुक्त नहीं हो सकते। नदी किनारे की रेतीली दोमट मृदा अच्छी मानी जाती है। तरबूज फल के मीठा होने के लिए गर्मी का मौसम उचित माना जाता है। गर्मी के मौसम में तरबूज की फसल लेने के लिए इसका रोपण/बुआई जनवरी-फरवरी में कर सकते हैं। खरीफ मौसम में तरबूज की फसल लेने के लिए इसकी बुआई जून-जुलाई में कर सकते हैं। तरबूज फसल के लिए गर्म और शुष्क जलवायु उचित मानी जाती है। फल की वृद्धि और विकास के दौरान गर्म दिन (30 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान) और ठंडी रात तरबूज फल की मिठास के लिए अच्छी मानी जाती है।

तरबूज फूल और फल धारण समय

तरबूज फल विकास

भूमि की तैयारी

गहरी जुताई के समय अच्छी तरह से विघटित गोबर या कम्पोस्ट खाद 15-20 टन प्रति हैक्टर मृदा में दें, ताकि खेत साफ, स्वच्छ एवं भुरभुरा तैयार हो। इससे अंकुरण प्रभावित हो सकता है।

तरबूज रोपाई प्रत्यारोपण

बीज दर एवं बीजोपचार

तरबूज की उन्नत किस्मों के लिए बीज दर 2.5-3 कि.ग्रा. और संकर किस्मों के लिए 750-875 ग्राम प्रति हैक्टर पर्याप्त होती है। बुआई के पहले बीज को कार्बेन्डाजिम फफूंदनाशक 1 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल में लगभग तीन घंटे तक डुबोकर उपचारित कर सकते हैं। उसके बाद उपचारित किए हुए बीजों को नम जूट बैग में 12 घंटे तक छाया में रख सकते हैं और फिर खेत में बुआई कर सकते हैं।

बुआई/रोपण की वैज्ञानिक विधि

भूमि की तैयारी के बाद 60 सें.मी. चौड़ाई और 15-20 सें.मी. ऊंचाई वाली क्यारियां (रेज्ड बेड़) तैयार की जाती हैं। क्यारियों में 6 फीट का अंतर रख सकते हैं। क्यारियों पर बीचों-बीच में लेटरल्स फैलाने चाहिए। क्यारियों को 4 फीट चौड़ाई के 25-30 माइक्रॉन मोटे मल्चिंग पेपर से कसकर फैलाना चाहिए। क्यारियों पर कसकर फैले मल्चिंग पेपर में बुआई/रोपण के कम से कम एक दिन पहले 30-45 सें.मी. की दूरियों पर छेद कर लेना चाहिए। इससे मृदा की गर्म हवा को बाहर निकाल सकते हैं।

बुआई/रोपण से पहले क्यारियों की सिंचाई करें। प्रोट्रे में कोकोपीट का उपयोग करके 15-21 दिनों की आयु के पौधों का रोपाई के लिए उपयोग करें।

सिंचाई

रोपाई का काम सुबह या शाम किया जाना चाहिए और आधा घंटा टपकन सिंचाई चालू रखें। पहले 6 दिन मृदा प्रकार अथवा जलवायु के अनुसार सिंचाई करें (प्रत्येक दिन 10 मिनट), शेष सिंचाई प्रबंधन फसल वृद्धि और विकास के अनुसार करें। तरबूज फसल पानी की जरूरत के प्रति बहुत संवेदनशील होती है। प्रारंभिक स्थिति में पानी की आवश्यकता कम होती है। वृद्धि और विकास अवस्था के अनुसार पानी की जरूरत बढ़ जाती है। यदि प्रारंभिक अवस्था में पानी अधिक हो जाता है, तो अंकुरण, रोपाई की वृद्धि और कीट एवं रोग संक्रमण पर हानिकारक प्रभाव करता है। जल प्रबंधन मृदा के प्रकार और फसल के विकास पर निर्भर पड़ता है। सामान्यत: 5-6 दिनों के अंतराल पर पानी देना चाहिए। फलधारण से पानी का तनाव नहीं होना चाहिए। सुबह 9 बजे तक सिंचाई करें। अनियमित सिंचाई से फल फटना, विकृत आकार वाले फल एवं अन्य विकृतियों की आशंका होती है।

कैल्शियम की कमी के लक्षण

खाद एवं उर्वरक प्रबंधन

मृदा जांच के आधार पर खाद और उर्वरक का प्रयोग करना उचित रहता है। अच्छी तरह से विघटित गोबर या कम्पोस्ट खाद 15-20 टन प्रति हैक्टर खेत तैयार करते समय मृदा में दें। नीम खली (नीम केक) 250 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर दे सकते हैं। जैविक उर्वरक एजोटोबॅक्टर 5 कि.ग्रा., पी.एस.बी. 5 कि.ग्रा. और ट्राइकोडर्मा 5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर रासायनिक उर्वरक प्रयोग से लगभग 10वें दिन के बाद देना उचित माना जाता है। पानी में घुलनशील जैव उर्वरक टपकन सिंचाई से भी दे सकते हैं। जैव उर्वरक का रासायनिक उर्वरक के साथ प्रयोग न करें। तरबूज फसल के लिए रासायनिक उर्वरक के रूप में प्रति हैक्टर 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन की मात्रा (यूरिया 109 कि.ग्रा.), 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस (एस.एस.पी. 313 कि.ग्रा.) एवं 50 कि.ग्रा. पोटाश (एम.ओ.पी. 83 कि.ग्रा.) बुआई/रोपण के समय दिया जाना चाहिए। शेष नाइट्रोजन की मात्रा 50 कि.ग्रा. (यूरिया 109 कि.ग्रा.) को बुआई के 30, 45 एवं 60 दिनों में समान भाग में देना चाहिए। खाद का उपयोग मृदा में उपस्थित आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता एवं मृदा परीक्षण के ऊपर निर्भर रहता है।

बोरॉन की कमी से प्रभावित फल

टमाटर के प्रमुख रोगों की रोकथाम

आरती शुक्ला*, मीनू गुप्ता, अनुराम शर्मा*** और **डी.डी. शर्मा***

उत्पादन की दृष्टि से टमाटर एक मुख्य सब्जी है। कम या अधिक, इसका उपयोग सभी सब्जियों में किया जाता है। इसकी खेती वर्षभर की जा सकती है। टमाटर उत्पादन के दौरान यह सब्जी फसल किसी न किसी रोग से ग्रसित होती है। इससे किसानों को अत्यधिक नुकसान होता है। किसान समय पर यदि इन रोगों की रोकथाम करें, तो इनके द्वारा होने वाले आर्थिक नुकसान से बचा जा सकता है।

टमाटर एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक महत्व की सब्जी है। प्राय: किसानों को इस फसल में लगने वाले रोगों के कारण नुकसान उठाना पड़ जाता है। टमाटर की फसल में लगने वाले प्रमुख रोग और उनकी रोकथाम के उपाय इस प्रकार हैं:

फफूंदजनित रोग

कमर तोड़ रोग

रोगकारक: *पिथियम, फाइटोफ्थोरा, फ्यूजेरियम की किस्में तथा राइजोक्टोनिया सोलेनाई*

लक्षण: इस रोग के लक्षण पौधों पर

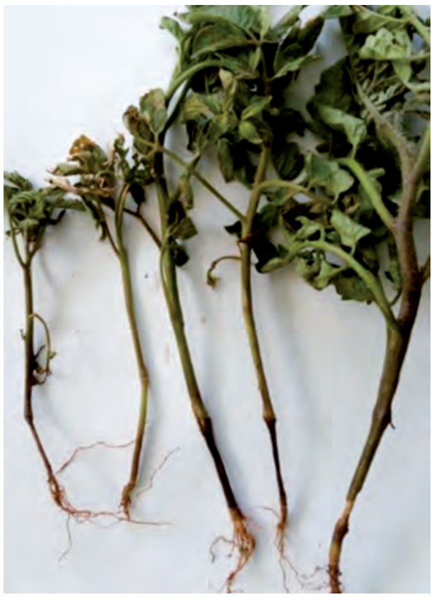

कमरतोड़ रोग

दो रूप में दिखाई देते हैं। पहली अवस्था में बीज अंकुर भूमि की सतह से निकलने से पहले ही रोगग्रस्त हो जाते हैं तथा मर जाते हैं। इससे पौधशाला की पौध संख्या में बहुत कमी आ जाती है।

दूसरी अवस्था में इस रोग का संक्रमण पौधे के तनों पर होता है। तने का विगलन होने पर पौध भूमि की सतह पर लुढ़क जाती है तथा मर जाती है।

रोकथाम

- पौधशाला का स्थान प्रत्येक वर्ष बदल दें।
- पौधशाला की मृदा का उपचार फार्मेलिन (एक भाग फार्मेलिन तथा सात भाग पानी) या सौर ऊर्जा से करें।

*कृषि विज्ञान केंद्र, कंडाघाट, सोलन (हिमाचल प्रदेश); **पादपरोग विभाग, नौनी विश्वविद्यालय, सोलन (हिमाचल प्रदेश)

- बिजाई से पूर्व बीज को कैप्टॉन (3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) और स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (1 ग्राम/10 लीटर पानी) के घोल से उपचारित करें।
- जब पौध 7 से 10 दिनों की हो जाए, तो उसकी मैन्कोजेब (25 ग्राम/10 लीटर पानी) व कार्बेंडाजिम (10 ग्राम/10 लीटर पानी) से सिंचाई करें।
- पानी उतना ही दें, जितना जरूरी है। अधिक पानी रोग को पनपने में सहायता करता है।

बकाई फल सड़न रोग

रोगकारक: *फाइटोफ्थोरा निकोशियानी* उपप्रजाति पैरासिटिका

लक्षण: इस रोग के लक्षण केवल हरे फलों पर ही दिखाई देते हैं। प्रभावित फलों पर हल्के तथा गहरे भूरे रंग के गोलाकार धब्बे चक्र के रूप में दिखाई देते हैं। ये हिरण की आंख की तरह लगते हैं। रोगग्रस्त फल आमतौर से जमीन पर गिर जाते हैं तथा सड़ जाते हैं।

रोकथाम

- पौधों को सहारा देकर सीधा खड़ा रखें।
- भूमि की सतह से 15-20 सें.मी. तक की पत्तियों को तोड़ दें।
- वर्षाकाल के आरंभ होते ही उपयुक्त जल निकास के लिए नालियां बनाएं।
- समय-समय पर रोगग्रस्त फलों को इकट्ठा करके गड्ढे में दबा दें।
- वर्षा ऋतु के आरंभ होने से पहले खेत की सतह पर घास की पत्तियों का पलवार बिछाएं।
- मानसून की वर्षा के आरंभ से ही फसल पर साइमोक्जानील+मैन्कोजेब (25 ग्राम/10 लीटर पानी) का छिड़काव करें। इसके उपरांत मैन्कोजेब (25 ग्राम/10 लीटर पानी) या कॉपरऑक्सीक्लोराइड (30 ग्राम/10 लीटर पानी) या बोर्डो मिश्रण (800 ग्राम नीला थोथा + 800 ग्राम अनबुझा चूना+100 लीटर पानी) का छिड़काव 7 से 10 दिनों के अंतराल पर करें।

बकाई फल सड़न रोग

अल्टरनेरिया धब्बा रोग

रोगकारक: *अल्टरनेरिया सोलेनाई, आ. अल्टरनाटा, आ. अल्टरनाटा* उप प्रजाति *लाइकोपरसिसी*

लक्षण

अल्टरनेरिया सोलेनाई: पत्तों पर गहरे भूरे रंग के गोलाकार चक्रनुमा धब्बे बनते हैं, जो लक्ष्य पटल की तरह दिखाई देते हैं। नम वातावरण में ये धब्बे आपस में मिल जाते हैं और गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं। पत्ते समय से पहले पीले पड़ जाते हैं तथा गिर जाते हैं। इस रोग के लक्षण फलों पर भी धंसे हुए धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं।

अल्टरनेरिया अल्टरनाटा: धब्बे आकार में छोटे, गोलाकार, बिखरे हुए तथा गहरे भूरे रंग के होते हैं। पुराने धब्बे चक्रनुमा पीले क्षेत्र से घिरे हुए होते हैं।

अल्टरनेरिया अल्टरनाटा* उप प्रजाति *लाइकोपरसिसी: हल्के भूरे रंग के कोणीय धब्बे बनते हैं, जो आकार में छोटे होते हैं। धब्बे किसी चक्रनुमा पीले क्षेत्र से घिरे नहीं होते। इस रोग के लक्षण तने पर भी देखे जा सकते हैं।

रोकथाम

- रोगग्रस्त पौधों के अवशेषों को इकट्ठा कर के नष्ट कर दें।
- बीज का कैप्टॉन (3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) से उपचार करें।
- फसल पर मैन्कोजेब (25 ग्राम/10 लीटर पानी) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (30 ग्राम/10 लीटर पानी) का छिड़काव करें।

जीवाणुजनित रोग

जीवाणु धब्बा रोग

रोगकारक: *जैन्थोमोनास वेसीकेटोरिया*

लक्षण: इस रोग के लक्षण पौधों के पत्तों तथा तनों पर छोटे-छोटे धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं, जो बाद में गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं। धब्बे आपस में मिल जाते हैं तथा इनका आकार बड़ा हो जाता है। फलों पर भूरे काले रंग के उभरे हुए धब्बे बनते हैं, जिनके किनारे अनियमित होते हैं। बाद में ये धब्बे धंस जाते हैं।

रोकथाम

- फसलचक्र अपनाएं तथा रोगग्रस्त पौधों के अवशेषों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें।

पछेता झुलसा रोग

रोगकारक: *फाइटोफ्थोरा इन्फेसटेन्स*

लक्षण: इस रोग के लक्षण अधिकतर अगस्त के अंतिम व सितंबर के पहले सप्ताह में पत्तों पर गहरे भूरे रंग के धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं, जो बाद में भूरे काले धब्बों में परिवर्तित हो जाते हैं। नम व ठण्डे मौसम में ये धब्बे फैलने लगते हैं तथा 3-4 दिनों के पौधे पूरी तरह से झुलस जाते हैं। फलों पर भी गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं।

रोकथाम

- फसलचक्र अपनाएं और खेत में उपयुक्त जल निकास का प्रबंध करें तथा फसल को खरपतवार से मुक्त रखें।
- सितंबर के पहले सप्ताह में फसल पर मैन्कोजेब (25 ग्राम/10 लीटर पानी) का छिड़काव करें। इसके उपरांत साइमोक्जानील+मैन्कोजेब (25 ग्राम/10 लीटर पानी) या बोर्डो मिश्रण का 7 से 10 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

जीवाणु धब्बा रोग

- बीज को स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (1 ग्राम/10 लीटर पानी) में 30 मिनट तक उपचारित करें।
- फसल पर रोग के लक्षण दिखते ही स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (1 ग्राम/10 लीटर पानी) का छिड़काव करें। इसके बाद 7 से 10 दिनों के अंतराल पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (30 ग्राम/10 लीटर पानी) का छिड़काव करें।

मुरझान रोग

रोगकारक: *रालस्टोनिया सोलेनेसिएरम*

लक्षण: संक्रमित पौधों के पत्ते अचानक ही नीचे की तरफ लटक जाते हैं तथा उनमें पीलापन दिखाई नहीं देता है। पूरा पौधा ही मुरझा जाता है।

रोकथाम

- प्रभावित खेतों में फसलचक्र अपनाएं। रोग से प्रभावित खेत में प्याज, लहसुन, मक्का, गेहूं या गेंदा जैसी फसलें लगा सकते हैं।
- प्रभावित खेतों को गर्मियों के दिनों में (मार्च से जून के बीच) 30 से 45 दिनों तक सफेद पारदर्शी पॉलीथीन (100 गेज मोटा) से सिंचाई करने के बाद ढककर रखने से भी रोग का संक्रमण कम हो जाता है।
- रोपण से पहले पौध की जड़ों को स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (1 ग्राम/10 लीटर पानी) में 30 मिनट तक डुबोकर रखें तथा फिर रोपें।

मुरझान रोग

विषाणुजनित रोग

चित्तीदार मुरझान रोग

रोगकारक: *टोमेटो स्पोटिड विल्ट* विषाणु

लक्षण: रोगग्रस्त पौधों के पत्तों का रंग कांस्य की तरह का हो जाता है। पत्ते मुरझा जाते हैं। पौधों की लंबाई भी कम हो जाती है। फलों की सतह पर लाल-पीले रंग के चक्र बनाते हुए धब्बे भी दिखाई देते हैं। बाद में रोगग्रस्त पौधे मर जाते हैं।

परपोषक फसलें (होस्ट रेंज)

किसी भी विषाणु की अपेक्षा इस विषाणु की मारक क्षमता बहुत अधिक है। यह विषाणु शिमला मिर्च, लैट्यूस, मटर, तम्बाकू, आलू, टमाटर और बहुत सी सजावटी पौधों की प्रजातियों को संक्रमित करता है।

संचारण

प्राकृतिक रूप से इस विषाणु का संचारण 'थ्रिप्स' नामक कीट द्वारा होता है।

चित्तीदार मुरझान रोग

इस विषाणु के कीट का लार्वा गहन पोषण से प्राप्त करता है और इसका संचारण वयस्क कीट ही करता है।

रोकथाम

- पौध को जालीनुमा घर में ही उगाएं, ताकि थ्रिप्स पौधशाला में प्रवेश न कर पाएं।
- यदि फसल पर रोग के लक्षण दिखाई दें, तो तत्काल प्रभावित पौधों को जड़ से निकालकर नष्ट कर दें तथा फसल पर डेसिस (10 मि.ली./10 लीटर पानी) का छिड़काव करें। ■

कॉस्टस का औषधीय महत्व

अंजली पटेल*

कॉस्टस *(कॉस्टस स्पेशिओसस)* जिंजेबरेसी कुल का बारहमासी पौधा है। इसका उत्पत्ति स्थल इंडोमालयन क्षेत्र है। यह पौधा डायोसजेनिन नामक तत्व का स्रोत है, जिसका उपयोग व्यापक रूप से स्टेरॉयड हार्मोन के व्यावसायिक उत्पादन में किया जाता है। कॉस्टस को बौना शंकु अदरक, भारतीय सिर अदरक, लाल बेंत, लाल बटन अदरक आदि नामों से भी जाना जाता है। आमतौर पर ये पौधे गरम जलवायु में जीवित रहने वाले होते हैं। ये अधिक ठंड सहन नहीं कर पाते हैं। कॉस्टस के पौधे सर्पिल तनों वाले और 1-1.8 मीटर ऊंचे होते हैं। इनकी पत्तियां वैकल्पिक और सर्पिल रूप से व्यवस्थित होती हैं। अंडाकार, नुकीले शीर्ष सहित 8-25 सें.मी. लंबी व 4-10 सें.मी. चौड़ी पत्तियां चमकदार हरे रंग की होती हैं। कॉस्टस के फूल लाल रंग की पंखुड़ियों के साथ खिले होते हैं। पुष्पक्रम अंडाकार 5-15 सें.मी. लंबे व 2-3 सें.मी. व्यास के होते हैं, जिनमें चमकदार लाल धारियां बनी होती हैं।

कॉस्टस का पौधा सामान्यत: तटीय जलोढ़ से लेकर भारी वनीय मृदा में उगाया जाता है। इसके लिए बलुई तथा चिकनी दोमट मृदा सबसे उपयुक्त है, जिसका पी-एच मान 5.7-7.5 होता है।

*इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर

जलवायु

कॉस्टस सामान्यत: उष्ण तथा उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु का पौधा है। यह समुद्र तल से लगभग 1500 मीटर की ऊंचाई तक उगाया जाता है, लेकिन 400 से 600 मीटर की ऊंचाई, जहां की औसत वार्षिक वर्षा 1000 से 1500 मि.मी. के बीच हो, सबसे उपयुक्त मानी जाती है।

खेती

प्रवर्द्धन

कॉस्टस के पौधे को बीज, स्टेम कटिंग और राइजोम से प्रवर्धित किया जाता है, लेकिन व्यावसायिक रूप से इसे प्रकंद (राइजोम) कटिंग के माध्यम से उगाया जाता है।

औषधीय महत्व

- कॉस्टस एक जड़ीबूटी है, जो स्वास्थ्य के लिए बहुत फायदेमंद होती है। इसकी जड़ के तेल का इस्तेमाल दवा बनाने के लिए किया जाता है।
- इसके पौधे में बहुत सारे पोषक तत्व पाए जाते हैं, जो हमारे स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होते हैं जैसे-कार्बोहाइड्रेट, वसा, प्रोटीन, एमाइलोज, लिपिड, विटामिन 'ए' आदि।
- इसमें एंटीऑक्सीडेंट घटक पाए जाते हैं, जैसे-बीटा कैरोटिन, एस्कॉर्बिक अम्ल (विटामिन 'सी'), टोकोफेरॉल आदि।
- इसकी जड़ का उपयोग कृमि संक्रमण के इलाज के लिए किया जाता है।
- पेट के रोगों व पेट के कीट के लिए कॉस्टस बहुत ही लाभकारी है। इसके लिए इसकी जड़ का पाउडर बनाकर उसे कुछ दिनों तक बच्चों को चटाएं। पाउडर की मात्रा बच्चे की उम्र के अनुरूप होनी चाहिए।
- इसके आवश्यक तेल में कई औषधीय गुण होते हैं। इससे हमारे शरीर के कई रोगों को खत्म किया जा सकता है। जिन लोगों में तनाव ज्यादा रहता है, उनके लिए यह बहुत असरकारक औषधि है।
- इसके तेल का उपयोग अस्थमा, खांसी, गैस और आंतों के गंभीर रोगों जैसे पेचिश और हैजा के लिए किया जाता है।
- इसका प्रयोग टॉनिक के रूप में और पाचन को उत्तेजित करने के लिए किया जाता है।
- सर्दी व बुखार के लिए 1/2 ग्राम कॉस्टस जड़ पाउडर को शहद के साथ देना चाहिए।
- यह कैंसर के इलाज में भी फायदेमंद होता है।
- पत्तियों के रस का उपयोग खुजली और त्वचा के रोगों के लिए किया जाता है।
- इसकी जड़ के पाउडर का आधे से एक ग्राम दिन में दो बार इस्तेमाल पैरालिसिस या पक्षाघात के उपचार के लिए किया जाता है।

कॉस्टस का पौधा

भूमि की तैयारी

खेत की 2-3 बार जुताई कर मृदा को अच्छी तरह भुरभुरी बना लिया जाता है। 15 टन प्रति हैक्टर की दर से गोबर खाद को खेत में डालकर अच्छी तरह मिलाया जाता है। 50 सें.मी. की दूरी पर कूंड़ बनाए जाते हैं।

रोपण

प्रकंद के टुकड़ों को 8-10 सें.मी. की गहराई पर रखा जाता है। ध्यान रखना चाहिए कि प्रकंद की कलियां ऊपर की ओर हों। क्षैतिज रूप से इन्हें 50 सें.मी. की दूरी पर कूंड़ों में रखकर मृदा से ढक दिया जाता है। रोपण के तुरंत बाद फसल की सिंचाई की जाती है। मोटे आकार के टुकड़ों में अंकुरण धीमी गति से, 40-45 दिनों में होता है। यह अक्सर इन टुकड़ों पर कलियों के सुषुप्तावस्था के कारण होता है, जो विकसित होने में समय लेती हैं। यह अधिकतर अप्रैल में रोपित फसलों में देखा जाता है।

खाद एवं उर्वरक

कॉस्टस एक प्रकंद फसल है और इसके बायोमास उत्पादन की भरपाई के लिए भारी खाद की आवश्यकता होती है। वल्लिककारा में किए गए एक परीक्षण के दौरान, डायोसजेनिन नामक तत्व की इस पौधे से अधिकतम उपज प्राप्त करने के लिए 15 टन प्रति हैक्टर गोबर खाद के साथ 45 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर को इष्टतम माना गया है।

सिंचाई

पौधों को विकास के लिए कुछ मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है। अप्रैल में लगाए गए पौधों को मानसून के आगमन तक प्रत्येक महीने कम से कम 2-3 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है।

निराई

एक निराई फसल की अंकुरण अवधि के दौरान तथा बाद में दो और निराइयां फसल को खरपतवारों से मुक्त रखती हैं।

कटाई एवं उपज

यह देखा गया है, कि जब पौधा वानस्पतिक वृद्धि की अंतिम अवस्था में होता है, तब उसमें डायोसजेनिन की मात्रा अधिकतम प्राप्त होती है। पहले वानस्पतिक भाग की कटाई की जाती है और फिर प्रकंदों की खुदाई करते हैं। ट्रैक्टरचालित कल्टीवेटर को खेत में 2 से 3 बार आड़े-तिरछे चलाएं और साथ ही उखड़े हुए प्रकंदों को स्वयं एकत्रित करें। ताजे प्रकंदों की उपज 28-30 टन प्रति हैक्टर होती है। ■

तकनीक

वायु दाब से तैयार करें अमरूद के पौधे

जितेन्द्र सिंह* और **सन्दीप कुमार***

अमरूद को वैज्ञानिक भाषा में *सीजियम ग्वाजावा* के नाम से जाना जाता है। इसका उत्पत्ति स्थान अमेरिका है। यह उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु का पौधा है, जो मिर्टेसी कुल से संबंधित है। अमरूद को स्वाद एवं पोषक तत्वों में धनी होने के कारण गरीब आदमी का सेब भी कहा जाता है। इसका फल गूदेदार तथा स्वादिष्ट होता है। इसके फलों का उपयोग खाने एवं प्रसंस्करण उद्योग में मुख्य रूप से जैम, जेली और रस बनाने में होता है। अमरूद में प्रतिकूल जलवायु, अधिक गर्मी, शुष्कता तथा लवणीय भूमि को सहने की अद्भुत क्षमता होती है। इसकी सख्त प्रकृति, कम लागत, लगातार उच्च उत्पादन, अच्छी भंडारण क्षमता आदि के कारण इसका क्षेत्रफल लगातार बढ़ता जा रहा है।

फलदार पौधों में वर्ष 2018-2019 के आंकड़ों के अनुसार क्षेत्रफल की दृष्टि से आम, नीबूवर्गीय फलों व केले के बाद अमरूद सर्वाधिक क्षेत्रफल पर उगाया जाता है। वर्ष 2018-19 के दौरान भारत में अमरूद का कुल क्षेत्रफल लगभग 0.26 मिलियन हैक्टर तथा फल उत्पादन 4.05 मिलियन टन एवं उत्पादकता 15.50 टन प्रति हैक्टर थी। भारत में अमरूद की खेती उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश तथा राजस्थान में की जाती है। उत्तर प्रदेश के प्रयागराज (इलाहाबाद) जिले में उत्पादित होने वाले फल अपने स्वाद एवं गुणवत्ता के कारण पूरे भारत में प्रसिद्ध हैं। राजस्थान का सवाई माधोपुर जिला अमरूद उत्पादन में विशिष्ट

*उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालरापाटन, झालावाड़-326023 (कृषि विश्वविद्यालय, कोटा, राजस्थान)

वायु दाब के लाभ

- वायु दाब प्रवर्धन से प्राप्त पौधे शत-प्रतिशत मातृ गुणों के समान होते हैं
- बीजू पौधों की तुलना में जल्दी व अधिक उत्पादक होते हैं।
- वायु दाब से प्राप्त पौधे आकार में बीजू पौधों की तुलना में छोटे होते हैं, जिससे उद्यानिकी क्रियाओं जैसे-सधाई, कटाई, तुड़ाई इत्यादि में आसानी रहती है।
- इस विधि द्वारा कम समय में अधिक पौधे तैयार किये जा सकते हैं।
- वायु दाब की गई शाख से जड़ फुटान की दर लगभग 95-100 प्रतिशत होती है।

सारणी 1. अमरूद के फलों का पोषक मान

क्र. सं.	तत्व	मात्रा (प्रतिशत में)
1	जल	76.1
2	प्रोटीन	1.5
3	वसा	0.2
4	कार्बोहाइड्रेट	14.5
5	रेशा	6.9
6	कैल्शियम	0.01
7	फॉस्फोरस	0.04
8	लोहा	1.00
9	कैलोरी प्रति 100 ग्राम	66.00
10	विटामिन बी$_1$	30 (मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम)
11	विटामिन बी$_2$	30 (मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम)
12	विटामिन-'सी'	260.00 (मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम)

वायु दाब की तैयारी

वायु दाब के लिए मातृ वृक्ष का चयन

स्थान रखता है। राजस्थान में सवाई माधोपुर, के अतिरिक्त पाली, कोटा, जयपुर, अजमेर, अलवर, श्रीगंगानगर, जालौर, बांसवाड़ा, भीलवाड़ा, झुंझुनू, सिरोही, बीकानेर, बाड़मेर, जोधपुर एवं जैसलमेर जिलों में भी अमरूद की खेती की जा रही है।

पोषक तत्वों से भरपूर अमरूद

अमरूद फल ओमेगा-3, टोमेगा-6 बहु असंतृप्त वसीय अम्ल और विशेष रूप से आहार रेशा से समृद्ध होते हैं। आहार रेशा भोजन पचाने व पाचन तंत्र को मजबूती प्रदान करने में सहयोग करता है, जिससे कब्ज रोग से छुटकारा मिलता है। अमरूद के फलों व पौधे के अर्क का उपयोग पारंपरिक चिकित्सा जैसे-मलेरिया, उदर गैस, उल्टी, दस्त, पेचिश, घाव, अल्सर, दांत दर्द, खांसी, गले में खराश, मसूड़ों की सूजन आदि रोगों के निवारण में किया जाता है। अमरूद का पोषक तत्व मान सारणी-1 में प्रदर्शित है।

पोषण से भरपूर, आकर्षक व स्वादिष्ट अमरूद के फलों की वर्षभर बाजार मांग रहती है। इसकी बागवानी सरल होने के कारण यह किसानों में लोकप्रिय है। इसके बागवानी विस्तार की प्रचुर संभावना है।

सरलता से तैयार होता है अमरूद का पौधा

अमरूद के पौधों का प्रवर्धन बीज और वानस्पतिक विधियों से किया जाता है। बीज से तैयार पौधे देर से फलन में आते हैं। ऐसे पौधों के फलों की गुणवत्ता भी अनिश्चित होती है। वानस्पतिक विधि से तैयार पौधा जल्दी फलन में आता है और उत्पादित फलों की गुणवत्ता भी बेहतर होती है। वानस्पतिक विधियों में वायु दाब विधि से अमरूद आसानी से तैयार किया जा सकता है। वायु दाब से पौधे तैयार करने के लिये एक वर्ष पुरानी या पिछली ऋतु में विकसित हुई शाखा, जिसका आकार पेंसिल की मोटाई के समान हो, चयन किया जाना चाहिए। चयनित शाखा के आधार से लगभग 10 से 15 सें.मी. दूर, 2.5 से 3 सें.मी. (गर्डलिंग) आकार में छाल को हटाया जाता है। इस हिस्से को नम मॉस घास उपयोग कर ढक दिया जाता है। छाल कटान वाले भाग को मॉस घास के साथ बांधने से अधिक समय तक बेहतर नमी बरकरार रहने के कारण इस भाग से आसानी से जड़ निकल आती है। इसके बाद मॉस घास को पतली पारदर्शी पॉलीथीन पट्टी से ढककर सुतली से बांध दिया जाता है। लगभग 2-3 माह बाद पारदर्शी पॉलीथीन पट्टी से जड़ें दिखाई देने लगती हैं। अब प्रवर्धित शाखा को 2-3 बार में कटान लगाकर मातृ पौधे से अलग कर देते हैं। इसके बाद पौधशाला में आंशिक छाया में पॉलीथीन हटाकर मृदा या पॉलीथीन में लगा दिया जाता है। वायु दाब प्रवर्धन मुख्यत: जुलाई-अगस्त में करना चाहिए। इस समय वातावरण में अधिक नमी होने से शत-प्रतिशत जड़ फुटान मिलती है।

सुतली से पारदर्शी पॉलीथीन को बांधना

सावधानियां

- वायुदाब के लिए मातृ वृक्ष के तौर पर अधिक उत्पादन वाले पेड़ का चयन करना चहिए।

प्रवर्धित शाखा से जड़ का निकलना

- मातृ पौधा कीट व रोगों से ग्रसित नहीं होना चहिए।
- वायु दाब वर्षा ऋतु (जुलाई-अगस्त) में करना चाहिए। इस समय वातावरण में उपलब्ध प्रचुर नमी के कारण जल्दी व अधिक जड़ें निकलती हैं।
- शाखा से छाल निकालते (गर्डलिंग क्रिया) समय इसका ध्यान रखना चाहिए कि छाल पूरी तरह हट जाए।
- स्फैगनम घास प्रयोग से पहले घास को पानी में रात भर अच्छी तरह से भिगो लेना चाहिये, जिससे वे अच्छी तरह जल चूस लें।
- स्फैगनम घास लगाने के बाद पॉलीथीन को अच्छी तरह से लपेटकर दोनों तरफ से सुतली से बांधना चहिए, ताकि स्फैगनम बांधे गये स्थान पर बना रहे।
- वायु दाब वाले स्थान से अच्छी तरह जड़ निकलने के बाद मातृ पौधे से अलग करने के तुरन्त बाद मृदा या पॉलीथीन बैग में लगा देना चहिए।
- तैयार पौधे पौधशाला में अधिक दिनों तक रखने के कारण इन पौधों की जड़ें भूमि में प्रवेश करने लगती हैं। अत: वायु दाब से तैयार पौधा पौधशाला में 1 वर्ष से अधिक समय तक रखा हो, तो उसे वहां से हटाकर स्थान परिवर्तन कर देना चहिये। पौधों की भूमि में गई हुई जड़ों को काट देना चहिये।

उपयोगी स्फैगनम मॉस घास

स्फैगनम मॉस घास को लपेटना

यह सतत नम वातावरण में चट्टानों पर उगने वाली घास होती है। इसमें जल शोषण की अधिक क्षमता होती है। स्फैगनम का एक इकाई भाग 20 इकाई भाग जल अवशोषित करता है। अवशोषित जल वायु दाब के लिए तैयार की जा रही शाखा को लंबे समय तक जल उपलब्ध करवाता रहता है, जो जड़ फुटान हेतु आवश्यक होता है। यही कारण है कि इसके प्रयोग से वायु दाब की हुई शाखा से जड़ें निकल आती हैं। स्फैगनम का स्वभाव अम्लीय (3.5-4.0) होता है, इस कारण इसके प्रयोग से शाखा पर कवक और जीवाणु नहीं पनप पाते हैं, जो जड़ फुटान के लिये अनुकूल हैं।

ड्रैगनफल की व्यावसायिक खेती

मोती लाल मीणा* और **धीरज सिंह***

ड्रैगनफल *(हाइलोसिरस अनडेटस)* कैक्टस प्रजाति का उष्णकटिबंधीय फल है। अपने अद्वितीय पौष्टिक और स्वास्थ्यवर्द्धक गुणों के कारण मध्य अमेरिका के इस फल ने भारतीय बाजार में धमाकेदार प्रवेश किया है। इस अनोखे फल की बढ़ती मांग एवं लोकप्रियता के कारण भारतीय किसानों के लिए भी इस विदेशी फल की खेती फायदे का सौदा साबित हो रही है। मध्य अमेरिका से चलकर इजराइल, वियतनाम, ताइवान, निकारागुआ, ऑस्ट्रेलिया, मलेशिया, थाईलैंड का लंबा सफर करते हुए अब ड्रैगनफल धीरे-धीरे भारत के खेतों में भी दस्तक दे रहा है। देश में अनेक राज्यों के किसान इसकी खेती कर अच्छा खासा मुनाफा कमा रहे हैं। राजस्थान में इस फल की खेती 4-5 वर्षों से की जा रही है। वर्तमान में राजस्थान के किसानों द्वारा उन्नत गुणवत्ता के ड्रैगनफलों का उत्पादन किया जा रहा है। इसको घरेलू खपत के साथ-साथ देश के अन्य राज्यों में भी ऊंची कीमत (200-400 रुपये प्रति कि.ग्रा.) पर बेचा जा रहा है और विदेशों में निर्यात भी किया जा रहा है।

ड्रैगनफल का गूदा सफेद और लाल रंग का एवं स्वाद में हल्का मीठा होता है। इसमें असंख्य छोटे-छोटे काले रंग के बीज पाए जाते हैं। इसके ताजे फलों को काटकर इसका गूदा (बीज सहित) चाव से खाया जाता है। ड्रैगनफल से जैम, जेली, आइसक्रीम, कैंडी, चॉकलेट, पेस्ट्री, योगर्ट, शीतल पेय पदार्थ आदि तैयार किए जाते हैं। इसके गूदे को पिज्जा में भी मिलाया जाता है। मलेशिया में ड्रैगनफल की मदिरा लोकप्रिय है। इसके पुष्प, कलियों और फलों से जायकेदार सूप और सलाद तैयार कर पांच सितारा होटलों में परोसा जाता है। ड्रैगनफल का इस्तेमाल चाय बनाने में फ्लेवर के लिए किया जाता है। इसके मांसल तने के गूदे का इस्तेमाल सौंदर्य प्रसाधन सामग्री बनाने में किया जाता है। इसको सजावटी पौधे के तौर पर भी घरों में लगाया जाता है। यह विटामिन 'सी' और आयरन का मुख्य स्रोत भी है। देश-विदेश में प्रकाशित शोध के अनुसार ड्रैगनफल के 100 ग्राम गूदे में जल 87 ग्राम, प्रोटीन 1.1 ग्राम, वसा 0.4 ग्राम, कार्बोहाइड्रेट 11 ग्राम, क्रूड फाइबर 3 ग्राम, कैल्शियम 8.5

*भाकृअनुप-काजरी, कृषि विज्ञान केन्द्र, पाली-मारवाड़- 306401 (राजस्थान)

मि.ग्रा., फॉस्फोरस 22.5 मि.ग्रा., आयरन 1.9 मि.ग्रा., विटामिन बी$_1$ (थयमीन) 0.04 मि.ग्रा., विटामिन बी$_2$ (राइबोफ्लेविन) 0.05 मि.ग्रा., विटामिन बी$_3$ (थियामिन) 0.06 मि.ग्रा. एवं विटामिन 'सी' 20.5 मि.ग्रा. के अलावा बहुत से एंटीऑक्सीडेंटस पाए जाते हैं। इसके गूदे का ब्रिक्स मान 11-19 तथा पी-एच 4.7 से 5.1 तक होता है। इतने सारे पौष्टिक तत्वों से भरपूर होने के कारण ड्रैगनफल को स्वर्ग का फल कहा जाता है।

जलवायु

ड्रैगनफल उष्णकटिबंधीय जलवायु के लिए अनुकूल पौधा है। इसकी खेती समुद्र तल से 1700 मीटर की ऊंचाई वाले क्षेत्रों में आसानी से की जा सकती है। ड्रैगनफल पौधे मौसम परिवर्तन और तापमान के उतार-चढ़ाव को आसानी से सहन कर लेते हैं। इसकी खेती 500-1500 मि.मी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में आसानी से की जा सकती है। इसके पौधे 40 डिग्री सेल्सियस तक का तापमान भी सहन कर लेते हैं। अधिक ठण्ड में पौधों की वृद्धि और विकास अवरूद्ध हो जाता है। फलों के विकास एवं पकने के समय गर्म एवं शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है।

सारणी 1 ड्रैगनफल के लाभ का आंकलन

वर्ष	पैदावार (कि.ग्रा.)	आय (रुपये)
पहला वर्ष	800-1000	120000-150000
दूसरा वर्ष	3000-5000	450000-750000
तीसरा वर्ष	4000-6000	60000-90000
चौथा वर्ष	4000-6000	60000-90000
पांचवां वर्ष	4000-6000	60000-90000
छठावां वर्ष	5000-7000	7000-80000
सातवां वर्ष	1500-2000	225000-300000
कुल आय रुपये 30,45,000-46,50,000		

पौधों की देखभाल

खेत में ड्रैगनफल के पौधे

ड्रैगनफल के पौधे एक वर्ष में ही फल देने के लायक हो जाते हैं। अनुकूल परिस्थितियों में इसके पौधों में मई-जून में फूल लगते हैं और अगस्त से दिसंबर तक फल आते रहते हैं। यह एक पर-परागित फसल है। इसके फलों में परागण की क्रिया तितलियों, मधुमक्खियों आदि द्वारा संपन्न होती है। यह कार्य सुबह के समय हाथ से भी किया जा सकता है। कुछ पुष्पों को खोलकर उनमें से फलालेन के कपड़े में परागकण एकत्रित कर अन्य पुष्पों पर फैला देने से फलों का विकास अधिक होता है। आमतौर पर 40 से 45 दिनों में पुष्पों से फल तैयार हो जाते हैं। एक ऋतु में इसके पौधों में प्राय: 3-4 बार फलन होता है। कच्चे फलों का रंग गहरा हरा तथा पकने पर फलों का रंग गुलाबी लाल हो जाता है। फलों का रंग 70 प्रतिशत लाल-गुलाबी या पीला हो जाने पर तुड़ाई कर लेनी चाहिए।

पौधों का प्रवर्द्धन

ड्रैगनफल का प्रवर्द्धन बीज और वानस्पतिक विधि द्वारा किया जा सकता है। बीज द्वारा पौधे देर में तैयार होते है तथा बीजू पौधे धीमी गति से बढ़ते हैं और उत्पादन भी 3-4 वर्ष में प्राप्त होता है। इसलिए व्यावसायिक खेती के लिए वानस्पतिक प्रवर्द्धन (तनों/टहनियों की कलम) ही सबसे सरल और उत्तम विधि है। इस विधि से लगाए गए पौधों में दूसरे वर्ष में फलन प्रारंभ हो जाता है। वर्षभर कभी भी कटिंग/पौध तैयार की जा सकती है। पौधों में फल तोड़ने

गमलों में लगे ड्रैगनफल के पौधे

लाभ-लागत

पहले वर्ष में ड्रैगनफल केवल 8 से 10 क्विंटल या 800-1000 कि.ग्रा. प्रति एकड़ उपज दे सकता है। 1 कि.ग्रा. ड्रैगनफल का थोक मूल्य लगभग 150 रुपये प्रति कि.ग्रा. रहता है, इसलिए 1000 कि.ग्रा. ड्रैगनफल बेचकर डेढ़ लाख तक की कमाई की जा सकती है। पहले वर्ष में इसकी पैदावार कम रहती है, लेकिन इसके बाद ड्रैगनफल की खेती में 75 प्रतिशत की वृद्धि हो सकती है। एक एकड़ में इसका उत्पादन 4 से 6 टन तक जा सकता है।

के बाद ही सुबह के समय कलम काटना उचित रहता है। रोपण के लिए 15-60 सें.मी. की कलमें (शाखाएं/टहनियां) अच्छी मानी जाती हैं।

पौधशाला की तैयारी

मानसून आगमन से पूर्व मुख्य खेत के पास पौधशाला तैयार कर कलम रोपण का कार्य संपन्न कर लेना चाहिए। कलमों से त्वरित जड़ों के प्रस्फुटन के लिए जड़ों के कटे हुए सिरों को पानी से गीला करने के बाद उन्हें पादप हार्मोन जैसे-आईबीए 10 ग्राम प्रति लीटर जल में 10 सेकेंड तक डुबोना चाहिए। सामान्य रूप से कलमों में जड़ विकसित होने में 40-50 दिनों का समय लगता है। इसके लिए 10×10 मीटर की पौधशाला में 1100 पौधे तैयार किए जा सकते हैं।

बाजार में बेचने के लिए तैयार ड्रैगनफल

पौध रोपण का तरीका

ड्रैगनफल के पौधे आरोही बेल प्रकृति के होते हैं। इसलिए इनके बढ़ने-चढ़ने के लिए 3×3 मीटर (पंक्ति से पंक्ति एवं पोल से पोल) की दूरी पर सीमेंट कंक्रीट के पोल (100-150 मि.मी. व्यास के 2 मीटर लंबे) लगाए जाते हैं। प्रत्येक पोल के ऊपर 2.5 फीट व्यास की रिंग (अथवा कंक्रीट का चौकोर ढांचा) लगाई जाती है, जिसमें चारों ओर एक-एक छेद होना चाहिए। वर्षा आगमन से पूर्व मुख्य खेत में 3×3 मीटर (पंक्ति से पंक्ति × पोल से पोल) की दूरी पर 60 सें.मी. गहरा एवं 60 सें.मी. चौड़ा गड्ढा खोदकर छोड़ देना चाहिए। वर्षा प्रारंभ होने के बाद जून-जुलाई में प्रत्येक पोल के चारों तरफ 4 पौधे रोपने चाहिए। मृदा, बालू और गोबर की खाद का 1:1:2 के अनुपात में मिश्रण बनाकर उसमें 100 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट मिलाकर गड्ढों में भरते हुए पौध रोपण का कार्य सम्पन्न करें। गोबर की खाद या वर्मीकम्पोस्ट की मात्रा 8-10 कि.ग्रा. प्रति गड्ढा रखनी चाहिए। खेत में 3×3 मीटर की दूरी पर गड्ढे करने से एक एकड़ जमीन में 449 पोल स्थापित होंगे तथा प्रति पोल 4 पौधे लगाने में प्रति एकड़ 1776 पौधे लगाने चाहिए। सामान्य तौर पर ड्रैगनफल के पौधे जून-जुलाई अथवा फरवरी-मार्च में रोपे जाने चाहिए। अधिक वर्षा या अधिक सर्दी वाले क्षेत्रों में इसे सितंबर अथवा फरवरी-मार्च में लगाया जा सकता है।

खाद व उर्वरक

जैविक खाद की मात्रा प्रति दो वर्ष में बढ़ाते रहना चाहिए। पौधों के समुचित विकास और उत्तम फलन के लिए समय-समय पर रासायनिक खाद भी देनी चाहिए। रोपण के समय जैविक खाद के साथ म्यूरेट ऑफ पोटाश+सिंगल सुपर फॉस्फेट+यूरिया को क्रमशः 30:70:50 ग्राम प्रति पौधा देना चाहिए। फूल आने से पहले और फल आने के समय प्रति पौधा 40 ग्राम यूरिया, 40 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट और 80 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश देना चाहिए। तीसरे वर्ष से 300:500:600 ग्राम क्रमशः यूरिया, सिंगल सुपर फॉस्फेट और म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति पौधा प्रतिवर्ष देना चाहिए।

उपज व लाभ का विश्लेषण

शुरुआती दौर में ड्रैगनफल के एक पौधे पर 10-12 तक फल लगते हैं। बाद में इसकी संख्या धीरे-धीरे बढ़ जाती है। एक पोल पर 40 से 100 फल तक लग सकते हैं। एक फल का औसत वजन 200-300 ग्राम संभावित है। एक एकड़ में अनुमानित 449 पोल स्थापित किए जाते हैं। प्रथम वर्ष में एक पोल से यदि 40 फल भी प्राप्त होते हैं, तो 200 ग्राम प्रति फल भार की दर से कुल 3592 कि.ग्रा. फल प्रति एकड़ प्राप्त हो सकते हैं। बाजार भाव कम से कम 125 रुपये प्रति कि.ग्रा. मान लिया जाए, तो प्रथम वर्ष 4,49,000 रुपये की कमाई होती है। इसमें से तीन लाख की उत्पादन लागत घटाकर 1 लाख 49 हजार रुपये प्रति एकड़ का शुद्ध मुनाफा प्राप्त हो सकता है।

स्वादिष्ट ड्रैगनफल

चौलाई के फायदे अनेक

गोपाल कतना*, **जी.डी. शर्मा*** और **वाई.एस. धारीवाल***

चौलाई, एक बहुपयोगी फसल है और इसकी खेती प्राचीन समय से हो रही है। भारत में इसे कई नामों से जाना जाता है जैसे-सियूल, कलगी, सलियारा, ढंखर और रामदाना। विश्वभर में इसकी लगभग 60 तथा भारत में 15-20 प्रजातियां पायी जाती हैं। चार मुख्य प्रजातियों *(एमरेन्थस हाइपोकौन्ड्रिएकस, ए. क्रुएण्टस, ए. कौर्डेटस तथा ए. इडुलिस)* को अनाज जबकि *ए. स्पाइनोरस, ए. लिवीडस* तथा *ए. डुबियस* को हरी सब्जी के लिए उगाया जाता है। इसकी खेती सभी प्रदेशों में की जाती है, लेकिन दक्षिण-पश्चिम व पहाड़ी क्षेत्रों में इसे मुख्य रूप से उगाया जाता है। चौलाई के पौधे 3-6 फीट ऊंचे तथा कई रंगों वाली पुष्पमंजरी के होते हैं। अनाज के लिए उगाई जाने वाली प्रजातियों के दानों का रंग सफेद, क्रीमी, सुनहरा व गुलाबी, जबकि बाकी सभी प्रजातियों का रंग चमकीला काला होता है।

चौलाई में अन्य अनाजों की अपेक्षा अधिक पोषक तत्व पाए जाते हैं। इसके बीज में प्रोटीन लगभग 17.9 प्रतिशत (जिसमें लाइसिन नामक अमीनो अम्ल की मात्रा अधिक) पाई जाती है। इसमें कार्बोहाइड्रेट, वसा, पौष्टिक रेशा, खनिज इत्यादि भी पाए जाते हैं। इसके अलावा चौलाई में एस्कॉर्बिक अम्ल 4.20, राइबोफ्लेविन 0.20, पोटेशियम 366.0, कैल्शियम 153.0, फॉस्फोरस 455.0, मैग्नीशियम 266.0, कॉपर 0.77 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम पाए जाते हैं।

चौलाई की फसल लगभग सभी प्रकार के वातावरण (समुद्र तल से 2500 मीटर तक) में उगाई जा सकती है। सीधा पौधा होने के कारण इसकी बढ़वार पर प्रकाशावधि व तापमान का बहुत प्रभाव पड़ता है। अच्छी फसल लेने के लिए 25-35 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त होता है। रेतीली दोमट से दोमट व चिकनी दोमट भूमि जिसका पी-एच 5.0 से 7.0 के बीच हो, अच्छी मानी जाती है। जिस खेत में जल जमाव हो, उसमें चौलाई की खेती नहीं करनी चाहिए।

खेत की तैयारी

पहली जुताई गहरी करनी चाहिए। उसके बाद 10-15 दिनों में दूसरी जुताई के साथ सड़ी हुई गोबर की खाद 25-30 क्विंटल प्रति हैक्टर मिला दें। इसके बाद पाटा लगाकर खेत को समतल कर लें। सिंचित क्षेत्रों में यदि नमी कम हो, तो बिजाई से दो-तीन दिनों पहले सिंचाई कर लेनी चाहिए। जल निकासी का उचित प्रबंध करें।

चौलाई पंजरी

अनुमोदित किस्में

अन्नपूर्णा, दुर्गा, सुवर्णा, पीआरए-1, पीआरए-2, पीआरए-3 इत्यादि

बिजाई

मैदानी क्षेत्रों में इसे मध्य नवंबर से मध्य दिसंबर में बोना चाहिए। पर्वतीय क्षेत्रों में ऊंचाई व मौसम के अनुसार इसकी बिजाई मध्य मई से मध्य जून तक कर लेनी चाहिए। असिंचित क्षेत्रों में बिजाई मानसून आने पर करनी चाहिए। 2-2.5 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर के लिए पर्याप्त होता है। बीजों को रेत या मृदा में मिलाकर, 45 सें.मी. की दूरी पर पंक्ति बनाकर, 2 सें.मी. गहराई में बिजाई

*चौ. सरवन कुमार हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर (हिमाचल प्रदेश)

करें। एक महीने के भीतर जरूरत से अधिक पौधों को उखाड़कर पौधे से पौधे की दूरी 10-15 सें.मी. कर दें।

खाद एवं उर्वरक

25-30 क्विंटल गोबर की खाद डालनी चाहिए। बिजाई के समय 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 20 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर देना चाहिए। 20 कि.ग्रा. सल्फर प्रति हैक्टर का प्रयोग लाभदायक पाया गया है। शेष 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन एक महीने बाद मिट्टी चढ़ाने के साथ दें।

निराई-गुड़ाई एवं सिंचाई

पहली निराई-गुड़ाई बिजाई के 20-25 दिनों के बाद और बाद में महीने के अंतराल पर करनी चाहिए। खरपतवारनाशी जैसे-एलाक्लोर (लासो) 1.0 कि.ग्रा. या पेन्डीमैथालिन (स्टॉम्प) 0.75 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से बिजाई के एक दो दिनों बाद छिड़काव से खरपतवारों पर नियंत्रण पाया जा सकता है। चौलाई में सिंचाई की आवश्यकता कम पड़ती है। यदि वर्षा समय से न हो, तो 20-25 दिनों के अंतराल पर पहली सिंचाई और दूसरी फूल आने पर करनी चाहिए। जल निकासी की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए।

बर्फी

सामग्री

500 ग्राम भुनी एवं पिसी हुई चौलाई, 50 मि.ली. ग्लूकोज का घोल, 250 ग्राम चीनी, 75 ग्राम देसी घी।

विधि

- चीनी तथा पानी को मिलाकर तीन-चार तार की चाशनी बनाएं।
- ग्लूकोज का घोल बनाने के लिए 10 ग्राम ग्लूकोज को 150 मि.ली. पानी में मिलाएं।
- अब चाशनी में घी तथा ग्लूकोज का घोल ड़ाल कर अच्छी तरह हिलाएं।
- आंच से उतारकर इसमें धीरे-धीरे चौलाई का पाउडर मिलाएं। तब तक हिलाएं जब तक मिश्रण का तापमान 65 डिग्री सेल्सियस तक न पहुंच जाए। अब इसे नरम आटे की तरह गूंध लें।
- चिकनाई लगी ट्रे में एक सें.मी. मोटाई तक बेलें। बटर पेपर से समतल होने तक बेलें। चौरस टुकड़े काटें और हवारहित डिब्बों में भण्डारित कर लें।

चौलाई पौधे

चौलाई फसल

उपयोग

चौलाई का उपयोग मुख्यतः खाद्यान्न, साग, शोभाकारी पौधों व रंगों के लिए किया जाता है। इसकी कोमल पत्तियां साग बनाने के लिए इस्तेमाल की जाती हैं। ये पौष्टिक गुणों से परिपूर्ण होती हैं:

- दानों को हल्का भूनकर शक्कर के साथ मिलाकर लड्डू बनाए जाते हैं। भुने गए दानों को दूध व दही में मिलाकर उपवास में उपयोग में लाया जाता है।
- इसके दानों में 8-10 प्रतिशत तेल होता है, जिसे आधुनिक उपकरणों जैसे-कम्प्यूटर के कलपुर्जो के लुब्रिकेंटस के रूप में प्रयोग किया जाता है।
- गेहूं व मक्का के आटे में इसका आटा मिलाकर पौष्टिक आहार बनाया जा सकता है। इसका आटा ब्रेड, बिस्कुट और पेस्ट्री बनाने के लिए अच्छा होता है।
- शिशु आहार बनाने के लिए चौलाई के आटे को गेहूं (50:50) या जई (60:40) के साथ मिलाया जाता है।
- एनीमिया से ग्रसित महिलाओं के लिए इसे बहुत लाभप्रद माना जाता है।
- पारंपरिक चिकित्सा पद्धति में इसे सांप के डसने व पशुओं के खुरपका-मुंहपका रोग में दवाई के रूप में प्रयोग करते हैं।
- कुछ किसान इसे मक्के के खेत के चारों ओर लगाते हैं। इससे पक्षियों से फसल की रक्षा हो जाती है। इसके डण्ठल जलाने के काम आते हैं।

कटाई एवं उपज

फसल जब पीली पड़ जाती है, तो झुरमुटों/बालियों पर दाने पक जाते हैं, लेकिन बालियां व पौधे हरे ही दिखते हैं। इसलिए हरी बालियों को समयानुसार सुबह-सुबह ही काट लेना चाहिए। काटी गई फसल से दानों को कई तरीकों से निकाला जाता है जैसे-डंडों से पीटकर या पशु चलाकर या हाथ से रगड़कर। दानों (बीज) को धूप में सुखाकर, साफ करके वायुरोधक पात्रों में भण्डारित कर लें। यदि खेती पूर्णतः वैज्ञानिक ढंग से की जाए, तो 15-20 क्विंटल उपज प्रति हैक्टर प्राप्त होती है।

पौष्टिक आहार

निम्न खाद्य पदार्थों को चौलाई से बनाया जा सकता है:

पन्जीरी

सामग्री: 400 ग्राम चौलाई, 100 ग्राम मखाना, 150 ग्राम गरी बुरादा, 150 ग्राम बादाम गिरी, 100 ग्राम काजू, 50 ग्राम मगज, 300 ग्राम शक्कर, 400 ग्राम देसी घी।

विधि: चौलाई को भून लें। एक कड़ाही में देसी घी डालकर मखाने को धीमी आंच पर भून लें। ठण्डा होने पर दरदरा सा पीस लें। बचे घी में पिसी हुई चौलाई, दरदरा पिसा मखाना, बारीक कटे हुए मेवे तथा शक्कर डालकर अच्छी तरह मिलाएं। अब इसे हवारहित डिब्बों में भण्डारित कर लें।

लड्डू

सामग्री: 500 ग्राम भुनी एवं पिसी हुई चौलाई, 850 ग्राम चीनी, 375 ग्राम गरी बुरादा, 50 ग्राम तिल भुने हुए, 125 ग्राम देसी घी।

विधि

- भुनी एवं पिसी हुई चौलाई को एक कड़ाही में डालकर देसी घी मिलाकर अच्छी तरह भून लें। अब इसमें भुने हुए तिल तथा गरी बुरादा मिलाकर आंच से हटा दें।
- दूसरे बर्तन में चीनी तथा पानी की एक तार की चाशनी बना लें। चाशनी को चौलाई के मिश्रण में अच्छी तरह मिलाएं।
- मिश्रण से गोल-गोल लड्डू बना लें और ठण्डा होने पर इन्हें हवारहित डिब्बों में भण्डारित कर लें।

मसाला

मिर्च की आधुनिक खेती

बलराज सिंह*

भारत पूरे विश्व में मसाला फसलों का सबसे बड़ा उत्पादक, उपभोक्ता व निर्यातक देश है। मसालों में मिर्च का एक महत्वपूर्ण स्थान है। इसको एक अद्‌भुत मसाला फसल के रूप में जाना जाता है। मिर्च का भारत में उत्पादन मुख्य रूप से दो प्रकार से उपभोग के लिए किया जाता है। हरी मिर्च के रूप में देश के विभिन्न भागों में मिर्च का उत्पादन, उपभोग के लिए किया जाता है। इसके साथ ही सूखी लाल मिर्च के रूप में इसका देश के विभिन्न राज्यों में उत्पादन किया जाता है। इस रूप में इसका घरेलू खपत के अतिरिक्त बड़े पैमाने पर निर्यात भी किया जाता है।

वर्ष 2018-19 के दौरान भारत में 721145 हैक्टर भूमि पर विभिन्न राज्यों में मिर्च की खेती की गई। इससे लगभग 1689524 मीट्रिक टन उत्पादन प्राप्त हुआ। देश में आंध्र प्रदेश, मिर्च उत्पादन में सबसे अग्रणी राज्य हैं। तेलंगाना, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, ओडिशा व पश्चिम बंगाल भी इसके प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। भारत की घरेलू खपत के बाद वर्ष 2018-19 के दौरान 468500 मीट्रिक टन मिर्च का विभिन्न देशों को निर्यात किया गया। इसमें सूखी लाल मिर्च के निर्यात का प्रमुख स्थान रहा तथा इसके निर्यात से देश

तैयार हरी मिर्च फसल

*परियोजना समन्वयक (एआईसीआरपी-मधुमक्खी और परागणकर्ता), भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

को कुल 5411 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा भी अर्जित हुई।

पूरे विश्व में मिर्च के रंग, आकार, तीखेपन व उपयोग के आधार पर भिन्नता वाली लगभग 400 किस्में विद्यमान हैं। भारत में भी मिर्च का रंग, आकार, तीखेपन व उपयोग के आधार पर भिन्नता वाली लगभग 50 से अधिक किस्में मौजूद हैं। भारत, विश्व में सबसे बड़ा मिर्च उत्पादक देश है, जो दुनिया की लगभग 36 प्रतिशत से 38 प्रतिशत तक मिर्च का उत्पादन करता है। भारत, पूरी दुनिया की 25 प्रतिशत मिर्च की आवश्यकता की पूर्ति करने वाला सबसे बड़ा देश है। इसके बाद चीन 24 प्रतिशत निर्यात के साथ दूसरे स्थान पर है।

तीखेपन के आधार पर मिर्च की किस्मों का वर्गीकरण

- **अत्यधिक तीखी किस्में:** इनमें तीखेपन की मात्रा 80000 एसएचयू से अधिक होती है।
- **अधिक तीखी किस्में:** इनमें तीखेपन की मात्रा 25000 से 70000 एसएचयू होती है।
- **मध्यम रूप से तीखी किस्में:** इनमें तीखेपन की मात्रा 3000 से 25000 एसएचयू होती हैं।
- **हल्की तीखेपन वाली किस्में:** इन किस्मों में तीखापन 700 से 3000 एसएचयू तक होता है।
- **बिना तीखेपन वाली किस्में:** इन किस्मों में तीखापन नहीं के बराबर होता हैं तथा तीखेपन की सीमा 0 से 700 एसएचयू तक हो सकती है।

देश में मिर्च उत्पादन की मुख्य चुनौतियां

- प्रत्येक वर्ग में रोगरोधी संकर किस्मों की कम उपलब्धता।
- उत्पादन के समय किसानों द्वारा रोगों व कीटों की रोकथाम के लिए रसायनों का अंधाधुंध प्रयोग।
- अक्सर परंपरागत तरीके से पौध उत्पादन के दौरान पौध का विषाणु रोगों और सूत्रकृमियों से ग्रस्त होना।
- मिर्च उत्पादन के समय कृषकों को उत्पादन की उत्कृष्ट कृषि क्रियाओं के बारे में जानकारी न होना।
- लाल मिर्च के लिए उगाई गई मिर्च को तोड़ने के बाद सुखाने का सही व सुरक्षित तरीका न होने के कारण कई बार मिर्च के निर्यात में एफ्लाटॉक्सिन के कारण बाधा आना।

लाल मिर्च सुखाने के लिए सुरक्षित विधियों का प्रयोग

वर्तमान में लाल मिर्च को तोड़कर सुखाने का तरीका सुरक्षित नहीं है। इसके कारण अक्सर इसमें सुखाने के दौरान एफ्लाटॉक्सिन विकसित हो जाती है, जो निर्यात में एक बाधा का कारण बनती है। इस प्रकार मिर्च को सुखाने के लिए सुरक्षित व संरक्षित संरचनाओं का उपयोग करना चाहिए। इसमें वॉक-इन-टनल, हाई-टनल व ग्रीनहाउस आदि का भी उपयोग किया जा सकता है। मिर्च को सुखाने के लिए जमीन पर नहीं फैलाना चाहिए। इसे सुखाने से पूर्व उस क्षेत्र पर काले रंग के प्लास्टिक का इस्तेमाल किया जा सकता है। इसी प्रकार मिर्च को सुखाने के लिए साफ-सुथरे पक्के फर्श को भी उपयोग में लिया जा सकता है।

सारणी: भारत व चीन में वर्ष-2018 के दौरान हरी व सूखी लाल मिर्च का क्षेत्रफल एवं उत्पादन

क्र.सं.	देश	हरी मिर्च		सूखी लाल मिर्च	
		क्षेत्रफल (हैक्टर)	उत्पादन (मीट्रिक टन)	क्षेत्रफल (हैक्टर)	उत्पादन (मीट्रिक टन)
1	भारत	9634	79668	781737	1808011
2	चीन	771634	18214018	47753	321290

मिर्च के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी

- विश्वभर में हरी व लाल मिर्च का क्षेत्रफल लगभग 3.9 मिलियन हैक्टर और कुल उत्पादन लगभग 34.6 मिलियन मीट्रिक टन है।
- वर्ष 2018 के दौरान भारत में लाल मिर्च का क्षेत्रफल 781737 हैक्टर, जबकि चीन में लाल मिर्च का क्षेत्रफल 47753 हैक्टर था।
- वर्ष 2018 के दौरान भारत में हरी मिर्च का क्षेत्रफल 9634 हैक्टर, जबकि चीन में इसका क्षेत्रफल 771634 हैक्टर था।
- वर्ष 2018 के दौरान भारत में सूखी लाल मिर्च का उत्पादन 1.80 मिलियन मीट्रिक टन, जबकि चीन में इसका उत्पादन 0.32 मिलियन मीट्रिक टन था।
- वर्ष 2018 के दौरान चीन में हरी मिर्च का उत्पादन 18.21 मीट्रिक टन, जबकि भारत में इसका उत्पादन लगभग 79668 मीट्रिक टन के साथ विश्व के सबसे बड़े उत्पादक देश के रूप में रहा था।
- भारतीय मिर्च रंग व तीखेपन के कारण दुनिया भर में प्रसिद्ध है।
- वर्ष 2018 के दौरान भारत की मिर्च की विश्व बाजार में 50 प्रतिशत के लगभग हिस्सेदारी, जबकि चीन की 19 प्रतिशत हिस्सेदारी थी।

आधुनिक तकनीकों से मिर्च उत्पादकता व गुणवत्ता में वृद्धि

विषाणु रोगरहित पौध उत्पादन के लिए ग्रीनहाउस में प्लग ट्रे तकनीक द्वारा मृदारहित माध्यम के उपयोग से पौध तैयार करना:

- रोग व विषाणु रोगरहित पौध तैयार करना संभव
- परंपरागत तरीके के मुकाबले बीज दर में 30 से 40 प्रतिशत तक की बचत
- रोपाई योग्य पौध पूर्ण रूप से ओजस्वी होती है। इसमे जड़ों व तने का एक समान विकास होता है
- प्लग ट्रे विधि द्वारा तैयार पौध के रोपण उपरांत कोई मरण नहीं व पौध की शीघ्र स्थापना संभव
- कम क्षेत्र वाले ग्रीनहाउस के संरक्षित क्षेत्र में वर्षभर पौध उत्पादन संभव
- प्लग ट्रे विधि से तैयार पौध को दूरस्थ क्षेत्रों में किसानों तक पहुंचाना संभव
- इस पौध उत्पादन तकनीक को एक स्वरोजगार सृजन के रूप में विकसित करना संभव

जमीन से उठी हुईं क्यारियों, टपक सिंचाई प्रणाली व पलवार का उपयोग

मिर्च की खेती में उठी हुई क्यारियों के साथ टपक सिंचाई प्रणाली के उपयोग द्वारा निश्चित रूप से सिंचाई जल की बचत की जा सकती है। इसके साथ ही साथ इस प्रकार की फसल में उर्वरक की मात्रा भी फसल व किस्मों की आवश्यकतानुसार, फसल वृद्धि की विभिन्न अवस्थाओं के अनुरूप दी जा सकती है। इस प्रकार की फसल में सतही सिंचाई प्रणाली द्वारा उगाई गई फसल के मुकाबले रोगों व खरपतवारों का कम प्रकोप होगा। यदि टपक सिंचाई प्रणाली के साथ इसमे प्लास्टिक पलवार का उपयोग किया जाए, तो मिर्च की फसल को खरपतवारों की प्रतिस्पर्धा से बचाया जा सकता है। इस प्रकार की फसल में कीटों व रोगों का भी काफी हद तक प्रकोप कम होगा। फसल से अधिक उपज के साथ अधिक गुणवत्ता भी प्राप्त होगी।

रोगरोधी अधिक उपज देने वाली किस्मों का उपयोग

इस प्रकार की किस्मों को उगाने से रोगों व कीटों के नियंत्रण पर उपयोग होने वाले रसायनों के प्रयोग में काफी कमी आएगी। इससे फसल की उपज के साथ गुणवत्ता में वृद्धि होगी। ■

भारतीय बाजार में मिर्च की किस्में

किस्मों का उपयोग व आवश्यकता अनुरूप वर्गीकरण

- **दो उद्देश्य वाली किस्में:** हरी मिर्च व लाल सूखी मिर्च के लिए उपयोग में ली जाने वाली किस्में।
- **ताजा हरी मिर्च:** ऐसी किस्मों को अक्सर उनके तीखेपन और आकार के आधार पर विभिन्न उपयोग में लिया जाता है।

- **सूखी लाल मिर्च के लिए किस्में:** ऐसी किस्में केवल सूखी लाल मिर्च के लिए उगाई जाती हैं।
- **ताजी लाल मिर्च किस्में:** ऐसी किस्मों का उपयोग ताजे लाल रूप में विभिन्न व्यंजनों को बनाने में किया जाता है।
- **ऊपर की ओर फलन वाली किस्में:** ऐसी किस्मों में अक्सर फलों का आकार छोटा होता है। इनके फल नीचे की बजाय ऊपर की ओर लगते हैं। अक्सर ऐसी किस्मों में अत्यधिक तीखापन होता है तथा तीखेपन की मात्रा 80000 एसएचयू से अधिक होती है। इनमें नगा मिर्च, भूत झलोकिया जैसी प्रजातियां आती हैं। इनका औषधीय रूप में उपयोग होता है।

लाल सूखी मिर्च में विविधता

मटर के मुख्य रोगों की रोकथाम

आदित्य*, आर.एस. जारियाल, कुमुद जारियाल***** और **जे.एन. भाटिया******

रबी फसलों में मटर का महत्वपूर्ण स्थान है। इस फसल को कई प्रकार के रोग नुकसान पहुंचाते हैं। यदि इनका नियंत्रण समय पर न किया जाए, तो मटर की फसल घाटे का सौदा साबित होती है। प्रस्तुत लेख में मटर के मुख्य रोगों और उनकी रोकथाम के उपायों की जानकारी दी जा रही है।

जड़गलन तथा पौधों का मुरझाना

यह रोग कई प्रकार के मृदाजनित फफूंदों से फैलता है, जिनके बीजाणु पहले से ही मृदा में होते हैं। जड़गलन रोग के कारण पौधों की पत्तियां पीली पड़ जाती हैं और पौधे मुरझाकर सूख जाते हैं। रोगग्रस्त पौधों की जड़ों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। इससे जड़ गल जाती है और अंत में पौधा सूख जाता है।

उकठा (विल्ट)

इस रोग के कारण प्रभावित पौधों की नीचे वाली पत्तियां पीली पड़ जाती हैं। ऐसे पौधों के तने या जड़ को यदि लंबाई में चाकू से काट कर देखें, तो वे बदरंग दिखाई देती हैं। रोगग्रस्त पौधों में फलियां कम बनती हैं।

रोकथाम

- फसल की अगेती बिजाई न करें।
- बिजाई से पहले बोए जाने वाले बीजों को बाविस्टिन 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

फफूंद से संक्रमित मटर फली

मटर की फली में सफेद चूर्णी फफूंद रोग

एस्कोकाइटा ब्लाइट के लक्षण

*स्नातकोत्तर छात्र (पादप रोग),**एवं***पादप रोग विज्ञान विभाग, डा. वाई.एस. परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, बागवानी एवं वानिकी महाविद्यालय, नेरी-177001 (हमीरपुर), (हिमाचल प्रदेश); ****प्रधान वैज्ञानिक, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार-125004 (हरियाणा)

- रोगरोधी किस्मों का चयन करें।
- फसल में ज्यादा सिंचाई न करें, क्योंकि रोग की उग्रता मृदा में ज्यादा नमी से बढ़ती है।
- बेनलेट, टोपसिन एम., बाविस्टिन व फाइटोलान (0.1 प्रतिशत) में से किसी भी फफूंदनाशी के घोल से छिड़काव व मृदा का उपचार करें। यह क्रिया 10-15 दिनों के अंतराल पर दोहराएं।

सफेद चूर्णी फफूंद रोग/पाउडरी मिल्ड्यू

मटर का यह सबसे भयंकर रोग है। इसके बीजाणु मृदा में व जंगली पौधों की पत्तियों पर पनपते हैं। बाद में उपयुक्त वातावरण मिलते ही रोग की उत्पत्ति का कारण बनते हैं। इस रोग के लक्षण पौधों के सभी भागों पर देखे जा सकते हैं। ये लक्षण छोटे सफेद चूर्णी धब्बों के रूप में होते हैं, जो संख्या एवं आकार में बड़े होने पर एक-दूसरे से मिल जाते हैं। रोगग्रस्त पौधों की टहनियों पर जो फलियां आती हैं, वे प्रायः बहुत छोटी व सिकुड़ी हुई होती हैं। फलियां पकने से पहले ही सूखकर नीचे गिर जाती हैं।

रोकथाम

- फसल पर रोग के लक्षण दिखाई देते ही सल्फेक्स-80 (0 30 प्रतिशत)

मटर फसल

रतुआ रोग

इस रोग में पत्तियों की निचली सतह पर पीले और नारंगी रंग के उभरे हुए धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में इन्हीं धब्बों का रंग गहरा भूरा या काला हो जाता है। रोग का प्रकोप 17 से 22 डिग्री सेल्सियस तापमान और अधिक नमी तथा ओस व बार-बार हल्की बारिश होने से अधिक बढ़ता है।

रोकथाम

- रोगग्रस्त अवशेषों को नष्ट कर दें।
- जिन क्षेत्रों में इस रोग का अधिक प्रकोप होता है उनमें फसल का जल्द रोपण करें।
- रोगरोधी किस्में ही उगाएं।
- लंबा फसलचक्र अपनाएं और रोग परपोषी फसलें न लगाएं।
- फसल पर इंडोफिल एम-45 नामक दवा का 400 ग्राम प्रति एकड़ या कैलेक्सिन 200 मि.ली. प्रति एकड़ की दर से 200 लीटर पानी में मिलाकर 10 दिनों के अंतर पर 2-3 बार छिड़काव करें।

मटर का विषाणु रोग

रोगग्रस्त पौधे पीले पड़ जाते हैं तथा उनकी बढ़वार रुक जाती है। पत्तियां खुरदरी, मुड़ी-तुड़ी, झरीदार, चितकबरी व गुच्छानुमा हो जाती हैं।

रोकथाम

- रोगग्रस्त पौधों को शुरू में ही उखाड़कर फेंक दें, ताकि रोग दूसरे स्वस्थ पौधों में न फैल सके।
- यह रोग माहूं (एफिड) नामक कीट से फैलता है। इसकी रोकथाम के लिए 125 मि.ली. फॉस्फेमिडान या मैटासिस्टॉक्स या रोगोर 400 मि.ली. कीटनाशक का बदल-बदल कर छिड़काव करें।

मटर के पौधे में डाऊनी मिल्ड्यू रोग के लक्षण

या 0 1 प्रतिशत बेनलेट या बाविस्टिन या केराथेन के घोल का छिड़काव करें। 10-12 दिनों के बाद छिड़काव दोहराएं।

- फसल की कटाई के बाद रोगग्रस्त पौधों व पत्तियों को इकट्ठा करके जला दें।

डाउनी मिल्ड्यू

इस रोग से ग्रस्त पत्तों की ऊपरी सतह पर पीले से भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। नमी वाले मौसम में पत्तों की निचली सतह पर इन धब्बों पर बैंगनी रंग की वृद्धि देखी जा सकती है। फलियों पर भी पीले से भूरे

जीवाणु झुलसा रोग

इस रोग में पौधे के सभी ऊपरी हिस्सों पर जलसिक्त धब्बे बनते हैं। ये धब्बे पीले तथा बाद में भूरे और पपड़ी में बदल जाते हैं।

रोकथाम

- स्वस्थ व रोगरहित बीजों की बिजाई करनी चाहिए।
- फसल में ज्यादा सिंचाई न करें तथा जल की निकासी का समुचित प्रबंध करें।
- रोगग्रस्त पौधों को शुरू में ही उखाड़ कर फेंक दें।
- खरपतवार समय-समय पर निकालते रहें।
- रोगग्रस्त क्षेत्रों में 2-3 वर्ष मटर की खेती न करें।

रंग के अंडाकार धब्बे बन जाते हैं। फलियों में पनप रहे बीज पर भी छोटे और भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं।

रोकथाम

- रोगमुक्त बीज का चयन करें।
- फसल के रोगग्रस्त अवशेषों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें।
- खेत में जल निकासी का उचित प्रबंध करें।
- बीज को बोने से पहले ट्राइकोडर्मा (6-10 ग्राम ट्राइकोडर्मा पाउडर प्रति कि.ग्रा. बीज) से उपचारित करें।

एस्कोकाइटा ब्लाइट

इस रोग से प्रभावित पौधे मुरझा जाते हैं और जड़ें भूरी हो जाती हैं। पत्तों तथा तनों पर भूरे धब्बे बन जाते हैं। इससे फसल कमजोर हो जाती है।

रोकथाम

- मोटे एवं स्वस्थ बीजों का प्रयोग करें।
- रोगग्रसित पौधों को नष्ट कर दें।
- हल्की सिंचाई दें व जल निकासी का उचित प्रबंध करें।
- खड़ी फसल में रोग दिखाई देने पर पौधे पर नीम के अर्क का छिड़काव दो से तीन बार करना चाहिए।

सावधानी व सुझाव

- फफूंदनाशियों व कीटनाशकों की क्षमता बढ़ाने के लिए इनमें कोई चिपकने वाला पदार्थ जैसे-ट्राइटान या सेलवेट 100 मि.ली. प्रति 100 लीटर पानी की दर से मिलाकर छिड़काव करें।
- मटर की तुड़ाई छिड़काव करने से पहले या फिर छिड़काव के 5-7 दिनों बाद ही करें।

चीनिया केला है खास

फल और सब्जी के रूप में देशभर में केला काफी लोकप्रिय है। यह स्वादिष्ट, आयरन से भरपूर, आसानी से पचने वाला, सस्ता और लोकप्रिय फल है। केले का आटा और चिप्स बनाने में भी इस्तेमाल होता है। केले की प्रजातियों में चीनिया केला एक लोकप्रिय किस्म है। इसकी खेती बिहार में सबसे ज्यादा की जाती है। बिहार के वैशाली, समस्तीपुर और मुजफ्फरपुर जिलों में इसकी खेती बड़े पैमाने की पर की जाती है।

चीनिया केला के पौधे केले की दूसरी प्रजातियों की तुलना में ज्यादा कोमल, पतले और कम बढ़वार वाले होते हैं। चीनिया केले का तना लंबा, पतला और हल्के हरे रंग का होता है। इसके पत्ते चौड़े और लंबे होते हैं। इस केले की घौद एवं केले के गुच्छे काफी कसे हुए होते हैं और उसमें 8 से 10 हत्थे होते हैं। एक घौद का वजन 12 से 15 कि.ग्रा. तक होता है। हर घौद में 120 से 150 केले होते हैं। डंठल समेत एक केले की लंबाई 10 से 15 सें.मी. होती है। इसके फल की नोक काफी पतली होती है।

पके हुए चीनिया केले के छिलके का रंग चमकीला पीला होता है। इसके फलों की भंडारण क्षमता बाकी किस्मों की तुलना में बेहतर होती है। पके हुए फलों को कमरे के सामान्य तापमान पर 3-4 दिनों के लिए भंडारित किया जा सकता है। चीनिया केले के एक फसलचक्र की अवधि 16-17 महीने की होती है। केले की इस प्रजाति से प्रति हैक्टर 40 से 45 टन केले की उपज मिलती है।

चीनिया केले का गूदा मुलायम, सफेद, सुगंधित और खट्टे-मीठे स्वाद का अनोखा मिश्रण होता है। भंडारण की अवस्था में पके केले से सुगंध निकलती रहती है। इसके पौधों पर पत्तों के रोग और धारीदार विषाणु रोग के प्रकोप का खतरा ज्यादा होता है, लेकिन केले के विनाशकारी रोगों; पनामा विल्ट या टीआर 4 यानी फ्यूजेरियम मुरझान (ट्रॉपिकल रेस 4) रोग का असर नहीं के बराबर होता है। बहुवर्षीय खेती परंपरा के तहत आज भी वैशाली जिले के किसानों के बीच चीनिया केला काफी मशहूर है। बिहार के अलावा चीनिया केले की किस्म बंगाल में अमृतपानी और चीनी चंपा व दक्षिण भारत में पूवन और पंचानकोदैन और केरल में कुन्नन के नाम से जानी जाती है। चीनिया के अलावा मालभोग, मिठाई, राजा, कैवेंडिस, कैवेंडिस व इसम आदि केले की खास किस्में हैं। वहीं हरे या कच्चे केले को सब्जी के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है। सब्जी के रूप में केले की अबू, अवाक व टंडुक आदि किस्मों को पसंद किया जाता है।

अमरूद की अति सघन बागवानी

प्रतीक सिंह*, **आकाश****, **दीक्षा मिश्रा***, **आनंद कुमार सिंह***** और **बिनोद कुमार सिंह*****

अमरूद, देश के उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में एक महत्वपूर्ण फल फसल है। इसके पेड़ की कठोर प्रकृति और सीमांत भूमि में भी इसका प्रचुर उत्पादन होता है। अमरूद की पारंपरिक बागवानी में पेड़ के बड़े आकार के कारण उत्पादकता के वांछित स्तर को प्राप्त करने में काफी समस्याएं होती हैं। इसलिए, उत्पादकता बढ़ाने के साथ-साथ हमें, मौजूदा उत्पादन प्रणाली को भी बेहतर बनाने की आवश्यकता है। वर्तमान में, पेड़ के आकार को नियंत्रित कर, सूर्य प्रकाश का बेहतर उपयोग, कीट नियंत्रण और फलों की तुड़ाई जैसे कार्यों को आसान बनाने के लिए अमरूद की अति सघन बागवानी (मीडो ऑर्चार्डिंग) काफी प्रचलित हो रही है। बागवानी की इस पद्धति से अधिक फलोत्पादन और उच्च गुणवत्तायुक्त फल प्राप्त किए जा सकते हैं।

अति सघन बागवानी अमरूद रोपण की एक नई विधि है। यह भारत में पहली बार भाकृअनुप-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ में विकसित की गई है। इसके अंतर्गत 2.0 × 1.0 मीटर की दूरी पर प्रति हैक्टर 5000 पौधे लगाए जा सकते हैं। इसमें पौधों का कैनोपी प्रबंधन नियमित रूप से कटाई-छंटाई द्वारा किया जाता है।

*पीएचडी शोध छात्र; ***प्रोफेसर, उद्यान विज्ञान विभाग; **पीएचडी शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-221005 (उत्तर प्रदेश)

पहले वर्ष अमरूद फसल

इससे फलस्वरूप सूर्य की किरणों का बेहतर प्रवेश होता है और प्रकाश संश्लेषण की दर में वृद्धि होती है, जिससे प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक उपज प्राप्त होती है। अति सघन बागवानी, उच्च उत्पादकता के साथ उच्च गुणवत्तायुक्त अमरूद उत्पादन की पद्धति है। इस तकनीक की क्षमता का मूल्यांकन करने के लिए पारंपरिक बागवानी और अति सघन बागवानी के बीच तुलना करना आवश्यक है, जिसे सारणी-1 में दर्शाया गया है।

अति सघन बागवानी में कैनोपी प्रबंधन

अति सघन बागवानी में रोपण 2.0

दूसरे वर्ष फल प्राप्ति

तीसरे वर्ष अमरूद का पेड़

चौथे वर्ष में फलों की बहार

सफलता गाथा

युवा कृषक श्री क्रांथी कुमार

आंध्र प्रदेश के प्रकाशम जिले में स्थित इसुकादर्शी गांव के युवा कृषक श्री क्रांथी कुमार ने अपनी बी.टेक. की पढ़ाई बीच में छोड़कर फलों की बागवानी करने का निर्णय लिया। उन्होंने भाकृअनुप-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु द्वारा विकसित अमरूद की उन्नत संकर प्रजाति *अर्का किरण* की खेती अति सघन बागवानी विधि द्वारा की, इसमें उन्होंने 2000 पौधे प्रति एकड़ में लगाने का निश्चय किया। इसके लिए उन्होंने सितंबर 2018 और फरवरी 2019 में 5 एकड़ भूमि में 2×1 मीटर की दूरी पर अर्का किरण की रोपाई की। उन्हें पहले वर्ष 7 टन उपज और दूसरे ही वर्ष 20 टन उपज की प्राप्ति हुई। उन्होंने यह उत्पाद बाजार में 35,000 रुपये प्रति टन की दर से बेचा। इसके साथ ही उन्होंने 300 लीटर अमरूद का रस भी तैयार किया, जिसे उन्होंने 60 रुपये प्रति लीटर की दर से बेचा। श्री क्रांथी कुमार को फल विक्रय से पहले वर्ष 2.45 लाख और दूसरे वर्ष 7 लाख रुपये की आय प्राप्त हुई। फलों के विक्रय के अतिरिक्त वह भी रस बनाते थे और इससे उन्हें पहले वर्ष 18,000 रुपये की अतिरिक्त आय प्राप्त हुई। कुल मिलाकर पहले वर्ष ही उनकी आय 2,45,000 रुपये से बढ़कर 2,63,000 रुपये हुई।

अति सघन बागवानी के प्रमुख घटक

अति सघन रोपण पद्धति में निम्नलिखित घटक होते हैं:

- उच्च उपज देने वाली बौनी किस्मों का चयन
- बौने मूलवृन्तों (रूटस्टॉक) का प्रयोग जैसे अमरूद में बौनी रूटस्टॉक किस्में-पूसा श्रीजन, *सीडियम फ्रिड्रिक्सथैलीएनम*, ऐनुप्लॉइड-82
- पेड़ों की उचित कटाई-छंटाई करना
- उचित पादप वृद्धि नियामकों का उपयोग
- रोगों और कीटों का उचित नियंत्रण करना
- उपयुक्त एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन और एकीकृत जल प्रबंधन को अपनाना

मीटर (पंक्ति से पंक्ति) × 1.0 मीटर (पौधे से पौधे) की दूरी पर किया जाता है। इसमें 5000 पौधे प्रति हैक्टर लगाए जा सकते हैं। अगर किसान प्रारंभ से ही पौधों की अच्छी देखभाल करें, तो उन्हें पारंपरिक तकनीक से अधिक मुनाफा मिल सकता है। अमरूद की अति सघन बागवानी में पौधों की कई बार कटाई-छंटाई कर उनका फैलाव, ऊंचाई, चौड़ाई और आकार नियंत्रित किया जाता है, इसे ही कैनोपी प्रबंधन कहते हैं।

सारणी 1. पारंपरिक बागवानी और अति सघन बागवानी का तुलनात्मक अध्ययन

विवरण	पारंपरिक बागवानी	अति सघन बागवानी
पेड़ों की संख्या	कुछ बड़े पेड़ (150-200 पेड़ प्रति हैक्टर)	कई छोटे पेड़ (5000 पेड़ प्रति हैक्टर)
फल प्राप्ति	दो वर्ष बाद	पहले वर्ष से
औसत उत्पादन	कम (12-20 टन प्रति हैक्टर)	अधिक (40-60 टन प्रति हैक्टर)
प्रबंधन	बड़े आकार के पेड़ के कारण प्रबंधन में कठिनाई	छोटे आकार के कारण प्रबंधन में आसानी
श्रम आवश्यकता	अधिक	कम
उत्पादन लागत	अधिक	कम
फसल कटाई	कठिन	आसान
गुणवत्ता	तुलनात्मक रूप से कम गुणवत्ता वाले फल	लगभग सभी फल उच्च गुणवत्ता वाले

सारणी 2. अति सघन बागवानी के लिए उपयुक्त उर्वरकों की मात्रा

वर्ष	यूरिया (ग्राम/पौधा)		सिंगल सुपर फॉस्फेट (ग्राम/पौधा)	पोटेशियम क्लोराइड (ग्राम/पौधा)
	जून	सितंबर	सितंबर	जून
पहले वर्ष	90	140	185	50
दूसरे वर्ष	180	110	370	100
तीसरे वर्ष	270	115	555	150
चौथे वर्ष	360	150	740	200
पांचवें वर्ष और आगे	450	190	900	250

पांचवें वर्ष बाद अमरूद में फलन

सारणी 3. अति सघन बागवानी में सिंचाई की अनुसूची

वर्ष	टपक सिंचाई (लीटर जल/दिन/पौधा)
पहले वर्ष	2 से 3
दूसरे वर्ष	4 से 5
तीसरे वर्ष	6 से 8
चौथे वर्ष	10 से 12
पांचवें वर्ष और आगे	14 से 16

सारणी 4. अति सघन अमरूद बागवानी का आर्थिक विश्लेषण (2×1 मीटर दूरी पर 5000 पौधे/हैक्टर)

वर्ष	कुल खर्च (रुपये/हैक्टर)	उत्पादन (टन/हैक्टर)	कुल आमदनी (रुपये/हैक्टर)	शुद्ध लाभ (रुपये/हैक्टर)	लागत-लाभ अनुपात
पहले वर्ष	161183	13	78000	-	-
दूसरे वर्ष	40711	25	150000	109289	2.68
तीसरे वर्ष	54686	40	240000	185314	3.38
चौथे वर्ष	67507	50	300000	232493	3.44
पांचवें वर्ष	76945	60	360000	283055	3.67

स्रोत: भाकृअनुप-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

सारणी 5. पारंपरिक अमरूद बागवानी का आर्थिक विश्लेषण (6 × 6 मी = 277 पौधे/हैक्टर)

वर्ष	कुल खर्च (रुपये/हैक्टर)	उत्पादन (टन/हैक्टर)	कुल आमदनी (रुपये/हैक्टर)	शुद्ध लाभ (रुपये/हैक्टर)	लागत-लाभ अनुपात
पहले वर्ष	20978	-	-	-	-
दूसरे वर्ष	18407	-	-	-	-
तीसरे वर्ष	31961	6	36000	4039	-
चौथे वर्ष	39288	12	72000	32712	0.83
पांचवें वर्ष	50144	15	90000	39856	0.79
छठवें वर्ष	52267	19	140000	87733	1.67
सातवें वर्ष	55575	27	162000	106425	1.91

स्रोत: भाकृअनुप-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

पांचवें वर्ष के बाद अमरूद बाग

उर्वरक प्रबंध

अमरूद की अति सघन बागवानी में उर्वरकों की मात्रा पेड़ की उम्र, पौधे की स्थिति और मृदा के प्रकार पर निर्भर करती है। उचित विकास और अधिक उपज के लिए, संस्तुत उर्वरक खुराक लागू की जानी चाहिए (सारणी-2)।

टपक सिंचाई

टपक (ड्रिप) सिंचाई पद्धति की मूल अवधारणा यह है कि पानी को बून्द-बून्द करके पौधे के जड़ क्षेत्र में उपयुक्त मात्रा में जल की आपूर्ति की जाए। इस पद्धति से 40-50 प्रतिशत तक पानी की बचत के साथ 40 प्रतिशत तक पैदावार में वृद्धि की जा सकती है। अति सघन बागवानी में, इन-पंक्ति ड्रिप को प्राथमिकता दी जाती है। ड्रिप के माध्यम से सिंचाई सारणी-3 के अनुरुप अमरूद के लिए अनुशंसित है।

अति सघन बागवानी के लाभ

- भूमि और संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग होना
- प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक पौधों के साथ उच्च गुणवत्ता वाले फल का प्राप्त होना
- कटाई में आसानी और फलों की तुड़ाई में कम लागत
- नियमित रूप से कटाई-छंटाई के फलस्वरूप अधिक फल देने वाली शाखाओं का आना
- सूर्य की किरणों का बेहतर उपयोग तथा प्रकाश संश्लेषण में वृद्धि
- कीट और रोग नियंत्रण के लिए रसायनों के छिड़काव में आसानी
- टपक सिंचाई, पानी में घुलनशील उर्वरकों और यंत्रीकरण जैसी-आधुनिक तकनीकों का बेहतर उपयोग होना
- अधिक प्रारंभिक आय की प्राप्ति
- छंटाई की गई पत्तियों का उपयोग पलवार और जैविक खाद के रूप में होना। इससे न केवल मृदा की उर्वरा क्षमता में सुधार और जल का संरक्षण होता है, बल्कि उत्पादन की लागत भी कम हो जाती है।

आर्थिक विश्लेषण

अति सघन बागवानी व पारंपरिक अमरूद बागवानी का आर्थिक विश्लेषण क्रमश: सारणी-4 व सारणी-5 में दर्शाया गया है। इसमें विभिन्न व्यय जैसे-बागान स्थापना, रखरखाव आदि कारकों को आधार माना गया है तथा अमरूद का विक्रय मूल्य 6 रुपये प्रति कि.ग्रा. की दर से लिया गया है। ■

बागवानी

नीबूवर्गीय फलों की खेती

अंजना खोलिया*, **ए.के. पाण्डेय*** और **रंजीत पाल***

नीबूवर्गीय फलों की खेती आर्थिक और पोषण सुरक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। भारत में विभिन्न प्रकार के फलों की व्यावसायिक खेती की जाती है, जिनमें से नीबूवर्गीय फल प्रमुख हैं। हमारे देश में इन फलों का क्षेत्रफल की दृष्टि से दूसरा तथा फलोत्पादन की दृष्टि से तीसरा स्थान है। नीबूवर्गीय फलों की उत्पादकता 10.3 मीट्रिक टन प्रति हैक्टर है। माल्टा, संतरा, कागजी नीबू, लेमन, ग्रेपफ्रूट और चकोतरा प्रमुख नीबूवर्गीय फल हैं। कोरोना महामारी काल में विटामिन-सी समृद्ध नीबूवर्गीय फलों के सेवन पर जोर दिया जा रहा है। नीबूवर्गीय फलों के रस में पाए जाने वाले विटामिन 'सी' (एस्कॉर्बिक अम्ल) और बी-9 (फोलेट), प्रतिरोधक तंत्र के सामान्य क्रियान्वयन में भूमिका निभाते हैं। विटामिन 'सी' कोशिकाओं को हानिकारक ऑक्सीडेटिव क्षति से भी बचाता है।

बुंदेलखंड क्षेत्र भारत के मध्य भाग में स्थित है। इसमें उत्तर प्रदेश के जालौन, झांसी, ललितपुर, चित्रकूट, हमीरपुर, बांदा और महोबा तथा मध्य प्रदेश के सागर, दमोह, टीकमगढ़, निवाड़ी, छतरपुर, पन्ना, दतिया जिले शामिल हैं। नीबूवर्गीय फलों की खेती बुंदेलखंड के सिंचित क्षेत्रों के लिए आर्थिक रूप से फायदेमंद हो सकती है। यहां के किसान पारंपरिक खेती के साथ-साथ फसल विविधीकरण द्वारा नीबू की खेती करके अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार कर सकते हैं। नीबूवर्गीय फलों के अंतर्गत विभिन्न किस्में शामिल हैं, जिनमें से फलोत्पादन की दृष्टि से माल्टा, संतरा, कागजी नीबू, लेमन, ग्रेपफ्रूट और चकोतरा प्रमुख हैं।

*उद्यान एवं वानिकी महाविद्यालय, रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झांसी-284 003 (उत्तर प्रदेश)

बागवानी तकनीक

जलवायु तथा मृदा

नीबूवर्गीय फलों की बागवानी सभी उष्ण तथा उपोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। इन फलों को वायुमंडल की आर्द्रता की अपेक्षा प्रत्यक्ष रूप से मृदा की नमी की अधिक आवश्यकता होती है। इन फलों को विभिन्न प्रकार की मृदा में आसानी से उगाया जा सकता है। इसके लिए जरूरी है कि मृदा की गहराई कम से कम 1 मीटर हो और अच्छे जल निकास वाली हो। मृदा का पी-एच मान 5.4-7.3 तक उचित होता है।

प्रमुख किस्में

नीबूवर्गीय फलों की सफल बागवानी के लिए यह ध्यान रखना आवश्यक है कि किसी स्थान विशेष की जलवायु अनुसार ही उचित किस्म का चयन किया जाए (सारणी-1)

बाग स्थापना

पौधरोपण वर्गाकार या आयताकार विधि से किया जा सकता है। पौधे से पौधे तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी संतरा व माल्टा के लिए 5×5 मीटर, ग्रेपफ्रूट व चकोतरा के लिए 7×7 मीटर तथा कागजी नीबू व लेमन के लिए 4×4 मीटर होती है। किसान इस बात का विशेष ध्यान रखें कि नीबूवर्गीय फलों के पौधे विश्वसनीय नर्सरी से ही खरीदें। इसके साथ ही कौन सी किस्म के पौधे हैं, इस बात की जानकारी आवश्य लें। बाग लगाने से पहले खेत को अच्छी तरह जुताई करके तैयार कर लेना चाहिए। इसके बाद लगभग 10 से 15 दिन पूर्व 1 × 1 × 1 मीटर के गड्ढे खोद लें। गड्ढे में मृदा तथा 10-15 कि.ग्रा. गोबर की खाद भरने के बाद

माल्टा (स्वीट ऑरेंज)

हल्की सिंचाई करें, जिससे कि मृदा अच्छी तरह बैठ जाए। जुलाई-अगस्त में पौधरोपण करना चाहिए। पौधे लगाने के बाद हल्की सिंचाई करना उपयुक्त होता है।

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए सदैव हल्की जुताई ही करें। पौधों के थालों में निराई-गुड़ाई करके खरपतवार निकाल देने चाहिए। पौधों की पंक्तियों के मध्य में अंतरवर्ती फसलें उगाने से भी खरपतवार की समस्या कम की जा सकती है। विशेष परिस्थितियों में खरपतवारनाशियों का प्रयोग भी किया जा सकता है।

सिंचाई प्रबंधन

पौधों की सिंचाई उनके चारों ओर थाल बनाकर की जा सकती है। टपक सिंचाई पद्धति का प्रयोग भी कर सकते हैं। गर्मियों के मौसम में प्रत्येक 10-15 दिनों के अंतराल

पोषक महत्व व उपयोग

नीबूवर्गीय फल विटामिन 'सी' के अच्छे स्रोत के रूप में प्रचलित हैं। इसके साथ ही ये फल शर्करा, सिट्रिक अम्ल, खनिज तत्वों (कैल्शियम, पोटेशियम) के भी अच्छे स्रोत होते हैं। नीबूवर्गीय फलों में पोषक तत्वों के साथ-साथ कुछ अति महत्वपूर्ण स्वास्थ्यवर्द्धक संगटक जैसी-फ्लेवनॉयड, कैरोटिनॉयड तथा पैक्टीन भी पाए जाते हैं। इसके साथ ही इन फलों का मूल्यसंवर्द्धन कर विभिन्न प्रकार के परिरक्षित उत्पाद जैसे-अचार, जूस, स्क्वैश, कैंडी, जैम, मुरब्बा बनाए जा सकते हैं। इन सभी उत्पादों के प्रसंस्करण के लिए ग्रामीण स्तर पर ही कुटीर उद्योगों को लगाकर आय के अतिरिक्त साधनों को विकसित किया जा सकता है।

पौध पोषण प्रबंधन

नीबूवर्गीय फलों के सफल उत्पादन के लिए खाद और उर्वरकों की मात्रा पौधों की उम्र तथा मृदा की उर्वराशक्ति पर निर्भर करती है। इसलिए मृदा की जांच करवानी आवश्यक है। 5 वर्ष और इससे अधिक आयु के पौधे को 50 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 750 ग्राम यूरिया, 2000 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट तथा 1000 ग्राम पोटेशियम सल्फेट देना चाहिए। गोबर की खाद प्रति पेड़ प्रतिवर्ष दिसंबर-जनवरी में देनी चाहिए। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग दो बराबर भागों में बांटकर करना चाहिए। पहली बार मार्च में और दूसरी बार जुलाई में देना चाहिए। लेमन में उर्वरक की पूरी मात्रा एक बार में ही मार्च-अप्रैल में देनी चाहिए। फलों के उचित विकास व गुणवत्ता के लिए सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे-बोरॉन, जिंक, कैल्शियम आदि भी देने चाहिए।

सारणी 1. नीबूवर्गीय फलों की उन्नत किस्में

नाम	प्रमुख किस्में
माल्टा (स्वीट ऑरेंज)	माल्टा, मौसम्बी, जाफा, वेलेंसिया, पूसा शरद, पूसा राउण्ड
संतरा (मैंडरीन)	नागपुर संतरा, डेंसी, हनी, किन्नो
कागजी नीबू	पूसा उदित, पूसा अभिनव, प्रमालिनी, विक्रम
लेमन	कागजी कला, पंत लेमन, यूरेका, बारामासी
ग्रेपफ्रूट	मार्श सीडलेस, फलेम थाम्पसन, फॅस्टर
चकोतरा	पूसा अरुण, पेमेलो यू एस-145, एनआरसीसी पेमेलो-5, लोकल किस्में

ग्रेपफ्रूट

चकोतरा

सारणी 2. प्रमुख कीट एवं रोग नियंत्रण

कीट	विवरण	रोकथाम
माहूं	यह कीट नई पत्तियों का रस चूसकर उन्हें कमजोर कर देता है	इमिडाक्लोप्रिड 0.04 प्रतिशत का छिड़काव करें
नीबू की तितली	इस कीट की इल्लियां कोमल पत्तियों व टहनियों को खा जाती हैं	थायोडॉन या कार्बेरिल (0.2 प्रतिशत) का उपयोग कर इल्लियों को नष्ट करें
सिट्रिस सिल्ला	यह कीट पत्तियों और टहनियों का रस चूसकर उन्हें कमजोर कर देता है	इमिडाक्लोप्रिड 0.04 प्रतिशत का छिड़काव करें
पर्ण सुरंगी	इस कीट की इल्लियां नई पत्तियों में टेढ़ी-मेढ़ी सुरंगें बना देती हैं	साइपरमेथ्रिन 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें
तनाबेधक	इस कीट की इल्ली तने में छेद करती है और धीरे-धीरे तने को खोखला कर देती है	रूई में पेट्रोल, फार्मेलिन या कार्बनडाईसल्फाइड भिगोकर छेद के अंदर भरें, मिट्टी के लेप से छेद को बन्द करें
रोग	**विवरण**	**रोकथाम**
सिट्रिस कैंकर	यह जीवाणुजनित रोग है। इसको जेन्थोमोनाज सिट्राई कहते हैं	प्रभावित शाखाओं को काटकर, कॉपरऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर पीनी के घोल का छिड़काव करें
ट्रिस्टिजा	यह एक विषाणु रोग है, माहूं कीट इसका रोगवाहक है	प्रतिरोधी मूलवृंत का प्रयोग करें। माहूं का नियंत्रण करें
फाइटोफ्थोरा सड़न	जड़ों व तनों का सड़ना, गोंद का निकलना तथा पौधों का सूखना इस रोग के मुख्य लक्षण हैं	तने पर 60 सें.मी. तक बोर्डेक्स मिश्रण का लेप करें

लेमन में फल का फटना

कागजी नीबू का कैंकर रोग

पर और सर्दियों में प्रति 4 सप्ताह के बाद सिंचाई करें। यह ध्यान दें कि सिंचाई का पानी पेड़ के मुख्य तने के आसपास संपर्क में न आए। मुख्य तने के आसपास मिट्टी डाल देनी चाहिए।

रोग एवं कीट प्रबंधन

नीबूवर्गीय फलों में विभिन्न प्रकार के कीट व रोग हानि पहुंचाते हैं। इनसे पौधे की रक्षा करना आवश्यक है (सारणी-2)। रोगग्रस्त और कीटग्रस्त पत्तियों, फलों, शाखाओं आदि को नष्ट कर देना चाहिए।

प्रमुख समस्याएं एवं समाधान

फलों का गिरना, फलों का फटना, ग्रेन्यूलेशन आदि अन्य प्रमुख समस्याएं हैं, जो नीबूवर्गीय फलों में उत्पन्न होती हैं। फलों को गिरने से रोकने के लिए 2-4डी या जिब्रेलिक अम्ल हार्मोन की 1.5 ग्राम तथा 1.0 कि.ग्रा. यूरिया की मात्रा का 100 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

फलों का फटना

यह समस्या कागजी नीबू और लेमन में अधिक पाई जाती है। इससे बचने के लिए मृदा नमी पर नियंत्रण रखें तथा जिब्रेलिक अम्ल (10 पीपीएम अर्थात 10 मि.ग्रा.) या पोटेशियम सल्फेट (4 प्रतिशत) का मई-जून में तीन बार छिड़काव करें।

ग्रेन्यूलेशन

यह मुख्यत: माल्टा और संतरा के फलों की समस्या है। इसमें रस की थैलियां सूख जाती हैं। इससे बचने के लिए नाइट्रोजन की कम मात्रा का प्रयोग करें। उचित किस्मों तथा मूलवृन्त का प्रयोग करें।

तुड़ाई एवं उपज

नीबूवर्गीय पौधे 5-6 वर्षों बाद पर्याप्त फल देने लगते हैं। फलों की तुड़ाई बाजार की मांग के अनुसार की जानी चाहिए। विभिन्न नीबूवर्गीय फलों जैसे-मीठी नारंगी से 500 फल प्रति पेड़, कागजी नीबू एवं लेमन से 1000-1200 फल प्रति पेड़, संतरे से 700-800 फल प्रति पेड़, और ग्रेपफ्रूट एवं चकोतरा से 150-200 फल प्रति पेड़ की औसत उपज प्राप्त होती है। ■

सौर प्रशीतित बैटरीरहित पूसा फार्म सनफ्रिज

संगीता चोपड़ा*, **प्रतिभा जोशी***, **इंद्रमणि मिश्रा*** और **रेंडोल्फ बौड्री****

फलों व सब्जियों की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए तुड़ाई, भंडारण व परिरक्षण यानी प्रिजर्व करने की नवीनतम तकनीकों का इस्तेमाल करना चाहिए। फलों व सब्जियों में पानी की अधिक मात्रा होने के कारण वे तुड़ाई के बाद शीघ्र खराब हो जाते हैं। इसी क्रम में खेत में कम लागत से बने सौर ऊर्जाचालित शीत भंडारण कक्ष कृषकों के लिए महत्वपूर्ण तथा मूल्यवान समाधान हो सकते हैं। फल और सब्जियां कटाई के तुरंत बाद खराब होने लगती हैं। इन्हें खराब होने से बचाने के लिए इनको कोल्ड स्टोर में भंडारित किया जाना चाहिए। मुख्य रूप से सब्जियों की खेती छोटे और मध्यम किसानों द्वारा की जाती है। उनके लिए विशेष कोल्ड स्टोरेज तैयार करना महंगा है। इस समस्या को सुलझाने के लिए भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान ने पूसा-फार्म सनफ्रिज (पूसा-एफएसएफ) की सिफारिश की है।

हमारे देश के विभिन्न क्षेत्रों में विविध किस्मों के फलों और सब्जियों को उगाया जाता है। ये मानव संतुलित आहार का एक अभिन्न अंग हैं। आहार एवं पोषण विशेषज्ञों के अनुसार संतुलित आहार के लिए वयस्क महिला व पुरुष को प्रतिदिन 100 ग्राम फल का सेवन करना चाहिए। इन्हें रक्षात्मक खाद्य पदार्थों की श्रेणी में रखा गया है। इनके लगातार उपभोग से कई जटिल रोगों से बचा जा सकता है। धान्य व दलहनी फसलों की अपेक्षा फल बहुत जल्दी खराब होते हैं। उनका गठन मुलायम व श्वसन क्रिया अधिक होने के अतिरिक्त इनकी ढुलाई एवं भंडारण के दौरान सूक्ष्मजीव प्रभावित करते हैं। ये कई रोगों का कारण बन जाते हैं। ऐसा अनुमान है कि फल उत्पादन का लगभग 30-40 प्रतिशत हिस्सा तुड़ाई उपरांत कुप्रबंधन के कारण क्षतिग्रस्त हो जाता है।

फल व सब्जियों का फसलोत्तर प्रबंधन आज हमारी जरूरत है, ताकि विश्व और विशेष रूप से भारत की बढ़ती आबादी को पौष्टिक भोजन मिलता रहे। यदि कुछ महत्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखा जाए तथा कुछ साधारण क्रियाएं अपनाई जाएं, तो फलों के काफी बड़े हिस्से को नष्ट होने से बचाया जा सकता है। इससे न केवल किसान को आर्थिक लाभ होगा, बल्कि देश की अर्थव्यवस्था को सुधारने का एक अच्छा प्रयास होगा।

*भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली; **मिशीगन स्टेट यूनिवर्सिटी, संयुक्त राज्य अमेरिका

प्रगतिशील कृषक तिलोक देवासी
अपने कृषि उत्पाद के साथ

सफलता गाथा

पूसा-फार्म सनफ्रिज (पूसा-एफएसएफ)-एक ऑफ-ग्रिड, बैटरीरहित, ग्रीन-एनर्जी (सौर-प्रशीतित) कोल्ड स्टोरेज, पूसा संस्थान, नई दिल्ली के कृषि अभियांत्रिकी विभाग द्वारा डिजाइन और विकसित किया गया है। इस तरह की सौर-प्रशीतित संरचना राजस्थान में मार्च 2020 के बाद से अजमेर के गांव पिचोलिया में बनाई गई है। कृषक समूह 'कृषक विकास संस्थान' की सहभागिता से इसका संचालन सफलतापूर्वक किया जा रहा है। यह नवीन कोल्ड स्टोरेज (2000 कि.ग्रा. उत्पादन क्षमता) भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा किए गए शोध कार्य का परिणाम है। शोध में भारत (भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिक) और मिशिगन स्टेट यूनिवर्सिटी (संयुक्त राज्य अमेरिका) के डा. आर. बौड्री और डा. नोरबर्ट म्यूएलर, संयुक्त राज्य अमेरिका के विज्ञान, इंजीनियरिंग और चिकित्सा, यूएसएआईडी के राष्ट्रीय अकादमियों द्वारा अनुदान के तहत यह परियोजना कार्यान्वित है।

नवपरिचालित सौर-प्रशीतित बैटरीरहित पूसा-फार्म सनफ्रिज (गांवः पिचोलिया, अजमेर, राजस्थान)

ग्राम पिचोलिया में पूसा-एफएसएफ का उपयोग कृषि समुदाय द्वारा प्रसंस्करित उपज जैसे-टमाटर, फूलगोभी, धनिया, आलू जैसी सब्जियों, फलों तथा फूल एवं मूल्यवर्धित उत्पाद (टमाटर प्यूरी) के साथ-साथ अंडे व पशु उत्पादों के भंडारण के लिए किया जाता है। सौर ऊर्जाचालित इस संयंत्र द्वारा बिजली की समस्या से जूझ रहे किसानों को सबसे अधिक राहत मिल सकती है। इसके भीतर निम्न तापमान और उच्च सापेक्ष आर्द्रता के कारण कृषि उत्पादों को लंबी अवधि तक ताजा बनाए रखने के साथ-साथ उत्पाद की निधानी आयु बढ़ाकर सुरक्षित रख सकते हैं।

फसल कटाई के बाद इसकी गुणवत्ता को सुधारना असंभव होता है। फल एवं सब्जियों में नमी की मात्रा अधिक होती है, जिससे स्वाभाविक रूप से ये अपेक्षाकृत जल्द खराब हो जाते हैं। कटाई उपरांत ये जैविक रूप से भी अधिक सक्रिय होते हैं। इनकी श्वसन क्रिया चलती रहती है, जिससे ये पकना शुरू कर देते हैं। इनमें कई जैव रासायनिक क्रियाएं उत्पन्न होती हैं, जो इनकी गुणवत्ता पर प्रतिकूल असर डालती हैं। फसलोत्तर गुणवत्ता पर कर्षण प्रक्रियाएं भी असर डाल सकती हैं तथा मशीनी क्षति जैसे-रगड़ लगना, छीलना, टूट जाना आदि के प्रति विशेष रूप से यह संवेदनशील है। कटाई के लिए परिपक्वता के सही चरण का चयन ऐसा महत्वपूर्ण पहलू है, जिसका भंडारण जीवन एवं गुणवत्ता पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। फल एवं सब्जियों की कटाई के बाद की गुणवत्ता, इसके भंडारण एवं इनकी परिपक्वता के चरण पर निर्भर करती है।

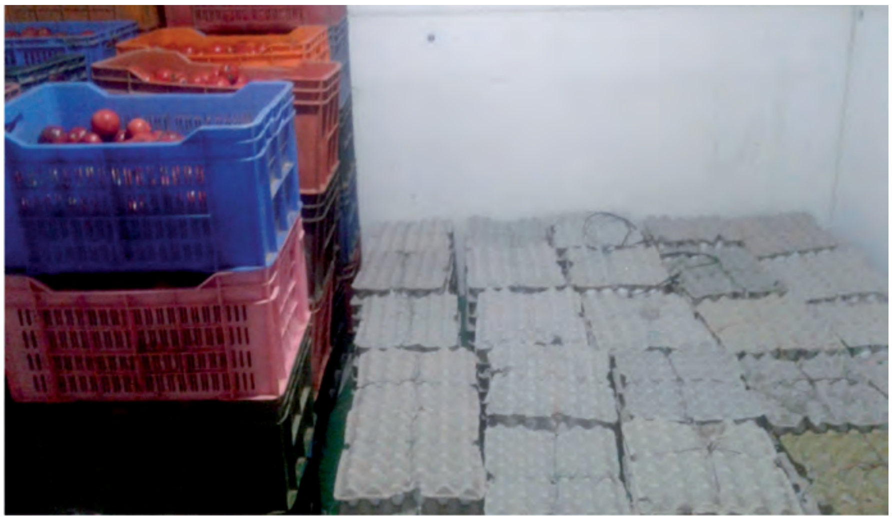

टमाटर भंडारण हेतु सौर-प्रशीतित कक्ष

भारत में फलों और सब्जियों की कटाई उपरांत हानि 25 से 30 प्रतिशत मुख्य रूप से पर्याप्त शीत भंडारण के अभाव और शीत आपूर्ति श्रृंखला की कमी के कारण है। बड़े कोल्ड स्टोरेज में एक बड़ा प्रारंभिक पूंजी निवेश शामिल होता है। निर्बाध विद्युत ग्रिड आपूर्ति की आवश्यकता होती है, जो

कि कई लघु व सीमांत कृषक समुदायों के पास आसानी से उपलब्ध नहीं है। यह अनुमान है कि भारत में उत्पादित फल और सब्जियों का केवल 10-11 प्रतिशत कोल्ड स्टोरेज और भंडारण में रखा जाता है। अपव्यय से बचाने के लिए इस क्षमता को 40 प्रतिशत तक बढ़ाने की आवश्यकता है। किसानों पर फलों और सब्जियों को तुरंत बाजार ले जाकर बेचने और गुणवत्ता खराब होने का नियमित दबाव बना रहता है। इस नए कोल्ड-स्टोरेज के उपयोग से किसान उत्तम गुणवत्ता की भंडारण सुविधाओं का लाभ छोटे स्तर पर अपनी आवश्यकतानुसार उठा सकेंगे।

पूसा-एफएसएफ जैसी संरचनाओं में भारत में 9 करोड़ छोटे किसानों को लाभान्वित करने की क्षमता है। ये संरचनाएं स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्रियों से किसानों द्वारा स्व-निर्मित की जाती हैं और शीतलन के लिए बिजली की आपूर्ति की आवश्यकता नहीं होती है।

पूसा-एफएसएफ में अभिनव (नवोन्मेषी) डिजाइन विशेषताएं हैं जैसे इनवर्टर-सोलर रेफ्रिजिरेटर यूनिट में एक स्पिल्ड इवेपोरेटर कॉयल है। रात में ठंडा करने के लिए पानी की बैटरी और एक सेंस-कंट्रोल सिस्टम है, जो उपलब्ध अल्ट्रा वायलेट किरणों के साथ रेफ्रिजिरेशन सिस्टम की ऊर्जा आवश्यकता को सफलतापूर्वक पूरा कर सकता है। इस यूनिट (1.5 टन क्षमता के प्रशीतन कक्ष) के निर्माण के लिए 3×3×3 मीटर आकार की संरचना शृंखला के समानांतर सर्किट में 14 सौर पैनलों/350 वॉट प्रत्येक पैनल (बिजली के लिए) का उपयोग किया जाता है और शीतलन के लिए ग्रिड की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इस संयंत्र में मेश जाल और गीले-कपड़े की दीवारों के साथ कम लागत वाली स्टाइलो फोम पैनल से इंसुलेशन किया गया है। वाष्पीकरणीय शीतलन और सौर प्रशीतन के संयुक्त प्रभावों के माध्यम से संरचना में शीत बरकरार रहती है। इसमें उचित नमी बनाए रखने के लिए दीवारों को गीला रखा जाना चाहिए। अनुमानत: पूसा-एफएसएफ में दिन का तापमान लगभग 5-10 डिग्री सेल्सियस और रात का तापमान 4 डिग्री सेल्सियस से कम हो सकता है, जब दैनिक परिवेश का अधिकतम तापमान लगभग 45 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच जाता है। पिचोलिया ग्राम में निर्मित पूसा-एफएसएफ में एचओबीओ रिमोट स्टेशन डेटा एकत्र करता है और इसे क्लाउड पर सार्वजनिक रूप से देखा जा सकता है।

सौर प्रशीतित कक्ष में भंडारित ताजा कृषि उत्पाद

ग्राम पिचोलिया, राजस्थान के एक किसान श्री त्रिलोक देवसी, पिचोलिया में पूसा-एफएसएफ संयंत्र में अपनी पुष्प व बागवानी फसलों को भंडारित कर लाभ ले रहे हैं। वैज्ञानिक तथा ग्रामीण सहभागिता संयोजित शोध व इस ट्रायल रन में गेंदे के फूल रखे गए थे, जो कि बाहर अधिक तापमान होते हुए भी शीतलन कक्ष में ताजे थे। इस वर्ष कोविड काल जैसी आपात स्थिति में, किसानों ने मार्च 2020 में लगभग 8000 अंडे और अप्रैल 2020 में 800 कि.ग्रा. टमाटर और 5000 अंडे संग्रहित किए। यह सुविधा छोटे किसानों को बिना बिजली उपलब्धता के भी कोल्ड स्टोरेज तक सस्ती पहुंच प्रदान करती है। अभी यह सुविधा परियोजना के दो अंगीकृत गांव पिचोलिया, राजस्थान तथा चमरारा, पानीपत, हरियाणा में किसानों को बेहतर आमदनी के साथ-साथ अपनी फसलों के विपणन में भी लाभान्वित कर रही है। दिल्ली में भी निकट भविष्य में उपलब्ध करवाने का प्रयास जारी है। इसमें रखी गई कृषि सामग्री ताजा रहती है, जिसके कारण इसे बाद में आकर्षक कीमतों पर बेचा जा सकता है। ■

भंडारण हेतु अंडे सौर-प्रशीतित कक्ष में

कद्दूवर्गीय सब्जियों में कीट प्रबंधन

अंकुर प्रकाश वर्मा*, आदित्य पटेल*, हेम सिंह* और **अनुज शाक्य****

कद्दूवर्गीय सब्जियां, गर्मी और वर्षा के मौसम की महत्वपूर्ण फसलें हैं। पोषण की दृष्टि से ये बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। इनमें बहुत ही आवश्यक विटामिन और खनिज तत्व पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। कद्दूवर्गीय फसलों में लौकी, करेला, कद्दू, तरबूज, खरबूजा, पेठा आदि शामिल हैं। इन सब्जियों के उत्पादन में अनेक बाधाएं, व्याधियों के रूप में सामने आती हैं। इनका सही समय पर नियंत्रण करना अति आवश्यक है।

कद्दूवर्गीय सब्जियों के प्रमुख कीटों का नियंत्रण किन तरीकों से किया जा सकता है। इस संबंध में विभिन्न कीटों के अनुसार प्रबंधन से संबंधित जानकारियां लेख में बताई गई हैं।

प्रमुख कीट एवं प्रबंधन

लाल कद्दू भृंग

इस कीट का वैज्ञानिक नाम *रेपिडोपाल्पा (एल्युकोफोरा) फोविकोलिस* है। यह कोलियोपटेरा गण के क्राइसोमेलिडी कुल का कीट है।

पहचान

इसका वयस्क भृंग चमकदार नारंगी रंग का होता है। यह लगभग 7 मि.मी. लंबा और 45 मि.मी. चौड़ा होता है। मादा, नारंगी अथवा पीले रंग के अंडों को पौधों के निकट जमीन में देती है। इसका ग्रब पीलापन लिए हुए सफेद होता है। इसका सिरा भूरे रंग का होता है। पूर्ण विकसित ग्रब लगभग 12 मि.मी. लंबा और 3.5 से 4 मि.मी. चौड़ा होता है। इनका प्यूपा भी जमीन में बनता है।

नुकसान की प्रकृति

ग्रब एवं वयस्क दोनों अवस्थाएं हानिकारक होती हैं। ग्रब, पौधों की मुलायम जड़ों को खाकर एवं फलावस्था में भूमि पर रखे फलों में छेद बनाकर इन्हें खाकर खोखला कर देती है। इससे छोटे फल सड़ जाते हैं। वयस्क भृंग बीजपत्र फूलों व पत्तियों में छेदकर नुकसान पहुंचाती है। इससे पौधों की बढ़वार रुक जाती है।

प्रबंधन

- फसल खत्म होने पर बेलों को खेत से हटाकर नष्ट कर दें।
- फसल लेने के बाद खेत की गहरी जुताई करने से भूमि में उपस्थित अपरिपक्व अवस्थाएं नष्ट हो जाती हैं।
- अगेती बुआई करने से इस कीट का प्रकोप कम होता है।
- कीट प्रतिरोधी किस्मों की बुआई करें।
- कार्बोरिल 50 डब्ल्यू.पी 2 ग्राम/लीटर या इंडोक्साकार्ब 14.5 एस.सी. 1 मि.ली./2 लीटर का छिड़काव करें।
- भूमिगत शिशुओं के लिए क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. 2.5 लीटर/हैक्टर हल्की सिंचाई के साथ प्रयोग करें।

*सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ (उत्तर प्रदेश); **चन्द्र शेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उत्तर प्रदेश)

लाल कद्दू भृंग

चेपा/माहू

इस कीट का वैज्ञानिक नाम *ऐफिस गोसीपाई* है। यह हेमिप्टेरा गण एफिडिडी कुल का कीट है।

पहचान

वयस्क कीट हल्के हरे रंग के होते हैं। कीट की पंख वाली अवस्था में इसका रंग भूरा होता है। ये लगभग 1.25 मि.मी. लंबे होते हैं। इसके शिशु तथा वयस्क अधिकतर पंखहीन होते हैं। शिशु दिखने में वयस्क के समान, लेकिन आकार में छोटे होते हैं। फसल पकने के बाद पंखदार वयस्क भी दिखाई देते हैं। इनके पंख पारदर्शी होते हैं, जिनमें काली नसें दिखाई पड़ती हैं।

नुकसान की प्रकृति

वयस्क और शिशु दोनों अवस्थाएं पौधों को नुकसान पहुंचाती हैं। कीट पौधों का रस चूसते हैं। इससे पौधा कमजोर हो जाता है तथा विकास रुक जाता है। लगातार रस चूसने के कारण पत्तियां का रंग पीला पड़ जाता है, जो बाद में सूख जाती है। इसके अलावा ये एक चिपचिपा पदार्थ निकालते हैं, जिसे हनीड्यू कहते हैं। इस पदार्थ से पत्तियों में काला कवक बनने की स्थिति बढ़ जाती

चेंपा या माहूं

है, जो प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में बाधा डालती है। ये कीट खीरे व तरबूज में वायरस रोग फैलाते हैं। कद्दू में पर्ण कुंचन रोग भी इस कीट द्वारा फैलता है।

प्रबंधन

- नाइट्रोजन खाद का अधिक प्रयोग न करें।
- आसपास के खरपतवार को नष्ट कर दें।
- लेडी बर्ड भृंग का संरक्षण करें।
- इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 1 मि.ली./3 लीटर या डाइमेथोएट 30 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर का छिड़काव करें।

बरूथी कीट

इसका वैज्ञानिक नाम *टेट्रानिकस निओक्लेडिनीकस* है। यह ट्रोम्बिडिफोर्मिस गण के टेट्रानिकिडी कुल का कीट है।

पहचान

ये मकड़ी प्रजाति के बहुत छोटे-छोटे जीव होते हैं, जो आंखों से मुश्किल से दिखाई देते हैं। यह कीट हल्का भूरा, शरीर पर दो आंखों जैसे-धब्बे, चार जोड़ी टांगे व बहुत सक्रिय होता है। पूर्ण विकसित नर 0.52 मि.मी. लंबा व 0.30 मि.मी. चौड़ा होता है। मादा का शरीर अंडाकार, पायरीफॉर्म व रंग परिवर्तनीय होता है। यह लाल, हरा व जंगदार हरे रंग का हो सकता है तथा दो बड़े रंगदार धब्बे शरीर पर होते हैं। इसकी मादा 60-80 तक अंडे पत्तियों की निचली सतह पर देती है। पूर्ण

बरूथी कीट

फल मक्खी

इस कीट का वैज्ञानिक नाम *बैक्ट्रोसेरा क्यूकूरबिटी* है। यह डिप्टेरा गण के टफ्रीटिडी कुल का कीट है।

पहचान

इसका वयस्क लाल भूरे रंग का व वक्ष पर पीले रंग की मार्किंग होती है। फल मक्खी की मादा 6-7 मि.मी. आकार की होती है। नर अपेक्षाकृत छोटा होता है। मादा सफेद सिगार आकार के अंडे, कोमल, नरम फलों में 2 से 4 मि.मी. अंदर घुसकर देती है। लटावस्था मैगट मटमैले सफेद रंग की होती है। इसका अग्र भाग चौड़ा तथा पश्च भाग पतला होता है। लटें टांगरहित होती हैं। पूर्ण विकसित मैगट 9-10 मि.मी. लंबी व बीच से 2 मि.मी. चौड़ी होती है। प्यूपीकरण मृदा में सतह से 0.5 सें.मी. नीचे होता है।

नुकसान की प्रकृति

इस कीट की मैगट अवस्था मुख्य हानि पहुंचाती है। यह फल में छेद करके अंडे देती है, जिससे प्रभावित हिस्सा मुड़कर टेढ़ा हो जाता है। छेद, रोगजनक जैसे कि जीवाणु और कवक के लिए प्रवेश बिन्दु का काम करता है। अंडे से मैगट निकलकर फल का गूदा खाती हैं। छोटे फलों की वृद्धि रुक जाती है। फल सड़कर डंठल से अलग होकर गिर जाते हैं।

प्रबंधन

- गर्मी में खेत की गहरी जुताई करें।
- ग्रसित फलों को एकत्रित करके नष्ट करें।
- फल मक्खी की निगरानी के लिए फलों के बागों में मिथाइल यूजिनोल ट्रैप और क्यू-ल्युर ट्रैप लगाएं।
- फल मक्खी प्रतिरोधी किस्मों की बुआई करें जैसे-ककड़ी में इम्प्रूव्ड लॉंग ग्रीन, तोरई में पीलीभीत पद्मनी आदि।
- फसल पर मैलाथियान 50 ई.सी. का 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

विकसित निम्फ अति सूक्ष्म 0.33 मि.मी. लंबा होता है।

नुकसान की प्रकृति

इसके शिशु एवं वयस्क दोनों ही पौधों के विभिन्न भागों से रस चूसते हैं। इससे पौधे का हरा भाग नष्ट हो जाता है। पत्तों पर पहले सुई की नोक जैसे छोटे हल्के सफेद पीले रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। प्रकोप अधिक होने पर माइट पौधों पर रेशमी जाल बनाती है। प्रभावित पत्तियां सूख जाती हैं। टहनियां असामान्य रूप से बढ़ने लगती हैं तथा पुरानी पत्तियां थोड़ी मोटी हो जाती हैं।

प्रबंधन

- कीट प्रतिरोधी किस्मों की बुआई करें।
- खेतों में नीम के बीज के पाउडर का छिड़काव करते रहना चाहिए।
- कीट का प्रकोप पानी के तेज छिड़काव से कम किया जा सकता है।
- केराथेन 30 ई.सी. 1 मि.ली. या इथियोन 50 ई.सी. 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

मसाला फसलों में समेकित कीट प्रबंधन

गजेन्द्र सिंह* और अर्चना अनोखे**

उत्पादन की दृष्टि से भारत को मसालों का देश कहा जाता है। देश में मसालों की उगाई जाने वाली प्रमुख फसलों में लहसुन, प्याज, अदरक, हल्दी, काली मिर्च, इलायची, केसर, मिर्च, पुदीना, अजवायन, जावित्री, लौंग, सौंफ, धनिया, मेथी, जीरा व राई का नाम लिया जा सकता है। ये उपयोगिता और महत्वपूर्ण स्वाद के लिए भी उगाई जाती हैं। विभिन्न प्रकार के मसालों का उपयोग भोजन को स्वादिष्ट बनाने के लिए किया जाता है। हमारे देश में मसाला फसलें बड़े पैमाने पर खरीफ, रबी एवं जायद में उगाई जाती हैं। मसाला नगदी फसल है। इसकी व्यावसायिक खेती कर अधिक लाभ कमाया जा सकता है। प्याज का उपयोग सलाद, सब्जी, अचार तथा मसाले के रूप में किया जाता है। स्वास्थ्य की दृष्टि से मिर्च में पर्याप्त मात्रा में विटामिन 'ए' व 'सी' पाए जाते हैं एवं कुछ लवण भी होते हैं। ये हमारे भोजन के प्रमुख अंग हैं। इनकी विभिन्न प्रजातियों को सब्जी, मसालों और अचार के रूप में काम में लिया जाता है।

*पीएचडी छात्र, कीट विज्ञान स.व.प.कृ.प्रौ.वि., मेरठ-250110 (उत्तर प्रदेश); **वैज्ञानिक, कीट विज्ञान संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

बदलते मौसम एवं जलवायु परिवर्तन के कारण लगातार मसाला फसलों के उत्पादन में कमी होती जा रही है। इसका प्रमुख कारण विभिन्न प्रकार के कीट हैं। इनका नियंत्रण करना अति आवश्यक है। नियंत्रण के लिए समन्वित कीट प्रबंधन (आईपीएम) पद्धति का चयन कर कम लागत में कीटों का प्रबंधन कर सकते हैं।

प्याज के प्रमुख कीट

प्याज की मक्खी

यह प्याज की फसल में लगने वाला प्रमुख कीट है। प्याज की मक्खी का आक्रमण तापमान में वृद्धि के साथ तीव्रता से बढ़ता है और मार्च में अधिक स्पष्ट दिखाई देने लगता है। इसके द्वारा रस चूसने से पत्तियां कमजोर हो जाती हैं। आक्रमण के स्थान पर सफेद चकत्ते पड़ जाते हैं। नियंत्रण के लिए मैलाथियान 50 ई.सी. का एक मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। आवश्यक हो तो 15 दिनों बाद छिड़काव दोहरायें।

धनिया के प्रमुख कीट

माहूं

यह धनिया को क्षति पहुंचाने वाला प्रमुख कीट है। माहूं छोटे-छोटे जूं आकार के पंखदार व पंखरहित कीट होते हैं। इनके प्रौढ़ एवं शिशु, पौधों की पत्तियों व कोमल तनों का रस फूलों से चूसकर कमजोर कर देते हैं। ये कीट झुंड में रहते हैं।

प्रबंधन

प्रकोप की प्रारम्भिक अवस्था में माहूं से ग्रसित भागों को तोड़कर नष्ट कर दें। फसल में नाइट्रोजन का अधिक प्रयोग

माहूं द्वारा धनिया की क्षति

चूसक कीट

इस कीट की शिशु एवं प्रौढ़ दोनों ही अवस्थाएं मुलायम पत्तियों का रस चूसकर हानि पहुंचाती हैं। इनके मुखांग रस चूसने वाले होते हैं, जो कि सैकड़ों की संख्या में पौधों की पत्तियों के अंदर छिपे रहते हैं। ये कीट सफेद भूरे या हल्के पीले रंग के होते हैं। इससे प्रभावित पत्तियां सिकुड़ जाती हैं और पौधों की वृद्धि रुक जाती है। प्रभावित पौधों के कंद छोटे रह जाते हैं। इससे उपज कम हो जाती है।

मिर्च का फलभेदक

यह एक बहुभक्षी कीट है, जो कि मिर्च के अलावा अन्य सब्जियों एवं फसलों को भी अत्यधिक क्षति करता है। इसकी हानिकारक अवस्था सूंडी होती है, जो हल्के हरे-भूरे रंग की होती है। इसके शरीर के ऊपरी भाग पर भूरे रंग की धारियां पाई जाती हैं। वानस्पतिक अवस्था में सूंडी पत्ती एवं शाखाओं को खाती है। इसके अलावा यह कली तथा फलियों में छेद करके नुकसान पहुंचाती है। फली को खाते समय प्रायः इसका आधा शरीर फली के बाहर रहता है। एक सूंडी 30-40 फलियों को नुकसान पहुंचाती है।

न करें। आक्रमण होने पर परभक्षी कीट क्राइसोपर्ला क्रानिया 5000 अंडे प्रति हैक्टर की दर से छोड़ना चाहिए। नीम का अर्क 5 प्रतिशत या नीम का तेल 100 मि.ली. पानी में मिलाकर छिड़काव करें। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल 5 मि.ली. प्रति 15 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। ट्रोइएजोफॉस 2-5 मि.ली. का प्रति लीटर पानी की दर से

प्याज की मक्खी द्वारा फसल हानि

छिड़काव करना चाहिए। प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी. का 2 मि.ली. पानी की दर छिड़काव करना चाहिए। दवा का छिड़काव सुबह और शाम को करना चाहिए, जब मधुमक्खियों की संख्या खेत में कम हो।

मिर्च के प्रमुख कीट

सफेद मक्खी

ये कीट पौधों की पत्तियों व कोमल शाखाओं का रस चूसकर कमजोर कर देते हैं। इनके प्रकोप से उत्पादन घट जाता है। नियंत्रण के लिए मैलाथियन 50 ई.सी. या मिथाइल डिमेटोन 25 ई.सी. एक मि.ली. इमिडाक्लोरोपिड 0.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। 15-20 दिनों बाद पुनः छिड़काव करें।

पर्णजीवी

यह बहुभक्षी कीट है। पर्णजीवी मिर्च के पौधों की पत्तियों व कोमल शाखाओं और फूलों में लगने वाला प्रमुख कीट है। इसका रंग काला होता है। यह कीट फूलों को खरोंच देता है तथा उससे निकले रस को चूसता है। फलस्वरूप फूल कमजोर होकर झड़ जाते हैं। नियंत्रण के लिए मैलाथियांन 50 ई.सी. या मिथाइल डिमेटोन 25 ई.सी. एक मि.ली. इमिडाक्लोरोपिड 0.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। 15-20 दिनों बाद पुनः छिड़काव करें।

लाल मकड़ी

हानि पहुंचाने वाली अवस्थाः प्रौढ़ अवस्था

पहचानः ये चतुष्पदीय कीट मुख्यतः लाल रंग के और छोटे आकार के होते हैं। ये समूह में पाए जाते हैं। ये पत्तियों एवं तने में जाल बनाकर उससे रस चूसते हैं और इनके कारण लाल से धब्बे दिखाई देते हैं।

मसाला फसल का कीटों से बचाव है आवश्यक

समन्वित कीट प्रबंधन

सर्वप्रथम खेत की ग्रीष्मकालीन जुताई करें और कीटग्रसित पौधों को निकालकर नष्ट कर दें। इससे जमीन में छिपे कीट एवं उनकी अन्य अवस्थाएं नष्ट हो जाती हैं। खेत को खरपतवार से मुक्त रखें। इससे कीटों का प्रकोप कम होता है। संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करें। नाइट्रोजन का अधिक प्रयोग करने से फसल, कीटों तथा रोगों के प्रति सुग्राही होती है। कीट प्रतिरोधी प्रजातियों का प्रयोग करना चाहिए। फसल में 5 प्रतिशत नीम की गिरी के सत का छिड़काव करने से कीटों का प्रकोप कम होता है। रस चूसने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड को 2 ग्राम/कि.ग्रा. बीज में मिलाकर इनका उपचार करना चाहिए। खड़ी फसल में रस चूसने वाले कीटों का प्रकोप होने पर इमिडाक्लोप्रिड के 0.025 प्रतिशत का जलीय घोल या थायोमेथाक्जैम का 100 ग्राम प्रति हैक्टर या एसिटामिप्रिड का 100 ग्राम/हैक्टर की दर से, किसी एक का, छिड़काव करें। एक रसायन का प्रयोग बार-बार न करें, क्योंकि इससे कीटों में प्रतिरोधक क्षमता विकसित हो जाती है। थ्रिप्स और सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए पीला चिपचिपा जाल प्रति एकड़ 15 सें.मी. ऊपर चंदवा 4-5 जाल प्रति एकड़ प्रयोग करना चाहिए। ■

कटुआ कीट

यह एक बहुभक्षी कीट है, जो छोटे-छोटे पौधे में अत्यधिक क्षति करता है। इसका वयस्क भूरे रंग का भारी शरीर वाला होता है। अगले पंख हल्के भूरे रंग के होते हैं। यह कीट भूमि के अंदर दरारों में छिपा रहता है।

लाल मकड़ी द्वारा नुकसान

लुप्त होने की कगार पर है राजस्थान का कल्पवृक्ष

नरपत सिंह*, **चेतन कुमार दौतानिया***, **सुचित्रा**** और **प्रवेश सिंह चौहान*****

खेजड़ी, मरूस्थली भूमि के लिए बहुत लोकप्रिय वृक्ष है। यह पेड़ ज्येष्ठ के महीने में भी हरा रहता है और गर्मी में जब रेगिस्तान में पशुओं के लिए धूप से बचाव का कोई सहारा नहीं होता है, तब खेजड़ी छाया देता है। इतना ही नहीं जब पशुओं के लिए कुछ खाने को नहीं होता है, तब भी यह वृक्ष चारा देता है। खेजड़ी मरूस्थलीय क्षेत्रों के प्राणियों का जीवन का आधार है। इस मरूस्थलीय राज्य वृक्ष का अपना एक अलग ही इतिहास है। वर्ष 1730 में जोधपुर के राजा अभय सिंह ने अपने नए महल के निर्माण का आदेश दिया। इसमें महल को बनाने के लिए चूना बनाने के लिए लकड़ी की आवश्यकता हुई, जिसके लिए खेजड़ी के वृक्षों को कटवाने का आदेश दिया। इस आदेश का वहां के आसपास रहने वाले लोगों ने विरोध किया। वे लोग अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी के लिए इस पर निर्भर थे। इसके अलावा इस पेड़ को लोगों ने अपने धर्म के साथ भी जोड़ रखा था। इसलिए वहां के लोगों व राजा के आदेश में टकराव की वजह से बड़ी संख्या में लोगों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। जब राजा को इस बात का पता चला, तो उन्होंने अपना आदेश वापिस ले लिया।

*भाकृअनुप-सरसों अनुसंधान निदेशालय, सेवर, भरतपुर, (राजस्थान); **विवेकानन्द ग्लोबल विश्वविद्यालय, जगतपुरा, जयपुर, (राजस्थान); ***राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

खेजड़ी की किस्म थार शोभा, भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर द्वारा विकसित की गई थी। यह अधिक उपज और बेहतर गुणवत्ता वाली किस्म है। सब्जी के उपयोग के लिए इसकी एक समान फली की कटाई की जाती है। इससे प्राप्त एक कि.ग्रा. सूखी सांगरी का भाव लगभग 900 से 1000 रुपये रहता है व एक ग्राफ्टेड खेजड़ी के पौधे से प्रतिवर्ष लगभग 20 से 30 कि.ग्रा. कोमल फली (सांगरी) और 2-4 क्विंटल लूंग व काफी मात्रा में छड़ी का उत्पादन मिल जाता है।

जलवायु

यह वृक्ष हमारे देश का स्थानीय वृक्ष है। राजस्थान तथा गुजरात के उष्ण भागों में, जहां तापमान 50 डिग्री सेल्सियस तापमान होता है, वहां भी सफलतापूर्वक उगने वाला पेड़ है। खेजड़ी देश के विभिन्न भागों में भी पाया जाता है, क्योंकि इसकी जलवायु सहनशीलता अधिक है। राजस्थान व गुजरात में बिश्नोई समाज के लोग इस वृक्ष के रखवाले के तौर पर प्रसिद्ध हैं।

उपयोगिता

लकड़ी: इसकी लकड़ी ईंधन के रूप में प्रयोग की जाती है। खेजड़ी की लकड़ी में 5000 केसीएल/केजीके (भारी मात्रा में कैलोरी) गुण होता है। इसकी लकड़ी कोयला बनाने के काम आती है। बड़ी मात्रा में इस वृक्ष की लकड़ी ईंधन व इमारती लकड़ी के रूप में प्रत्येक वर्ष प्राप्त होती है।

फलियां: यह बहुत ही पौष्टिक व स्वादिष्ट फली होती है। इसका उपयोग अचार व सब्जी के रूप में किया जाता है। सूखी फलियों को सांगरी कहा जाता है व आजकल प्रत्येक मेगा स्टोर पर यह पैकेट्स में उपलब्ध है। सूखी सांगरियों की देश-विदेश में बहुत मांग है। सूखी सांगरियों की सब्जी राजस्थान की अपनी अलग एक पहचान है।

भूमि अपरदन रोकने में सहायक: यह वृक्ष बालू के टीलों को फैलने से रोकता

वृक्ष से चारा

वृक्ष की पत्तियों को लूंग कहते है। इसकी पत्तियों में 12 से 18 प्रतिशत प्रोटीन, 13 से 20 प्रतिशत रेशा, 44 से 59 प्रतिशत नाइट्रोजनरहित पदार्थ, 0.28 से 0.9 प्रतिशत फॉस्फोरस और 1.5 से 2.7 प्रतिशत कैल्शियम पाया जाता है। इसका फूल मिंजर व फल सांगरी कहलाता है। शुष्क भागों के पशु इस पर निर्भर रहते हैं। यह एक चारे का बहु विकल्पीय रूप है।

खेजड़ी वृक्षों का बचाव एवं देखभाल

- रोपाई के प्रथम वर्ष बरसात के मौसम में खेजड़ी के पौधों को तीन से चार बार पानी देना चाहिए। दो-तीन वर्षों के बाद नीचे की शाखाओं को कटाई-छंटाई करने से पौधा सीधा बढ़ता है।
- ट्रैक्टरों के बढ़ते प्रचलन के कारण खेतों में नए वृक्ष बराबर नहीं उग पाते हैं। इसलिए ट्रैक्टर से जुताई के समय प्राकृतिक रूप से उगे हुए पौधों को बचाना चाहिए। प्राकृतिक रूप से उगने वाला पौधा हमेशा उस क्षेत्र विशेष के अनुसार ही जन्म लेता है। इसके जीवित रहने और बढ़ने के आसार कृत्रिम रूप से लगाए पौधे से अधिक होते हैं।
- खेजड़ी की छंटाई करते समय उस पर 3 या 4 शाखाओं को छोड़ना अत्यन्त आवश्यक है।
- वर्षा ऋतु के समय वृक्ष के चारों ओर 4 मीटर × 50 सें.मी. × 50 सें.मी. खाई बनाकर वर्षा जल को संरक्षित करें, ताकि लंबे समय तक जल की आपूर्ति बनी रहे।
- जहां खेजड़ी वृक्ष सूखने का प्रकोप हो, वहां वर्षा ऋतु में वृक्षों की जड़ों में क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. 15 मि.ली., कार्बेंडाजिम 50 डब्ल्यूपी 20 ग्राम और कॉपर ऑक्सिक्लोराइड 50 डब्ल्यूपी 20 ग्राम प्रति वृक्ष चारों ओर पानी के साथ डालें।
- खेजड़ी में फरवरी-मार्च में फूल आते हैं और अप्रैल व मई में फलियां बनती हैं। इसकी जड़ें गहरी तथा नाइट्रोजन संग्रहण की क्षमता रखती हैं। इस पेड़ की जड़ें जमीन को कार्बनिक पदार्थों से भरपूर रखती हैं। इसके कारण इस वृक्ष के साथ सभी फसलों की पैदावार अधिक होती है। शुष्क क्षेत्रों में वनस्पतियां कम होने की वजह से खेजड़ी की छंटाई प्रतिवर्ष की जाती है। इसके परिणामस्वरूप खेजड़ी बीज का उत्पादन न के बराबर होता है। अगर यही दशा रही तो वह दिन दूर नहीं जब इसका वृक्ष पूरी तरह से विलुप्त हो जाएगा। इसलिए हमें खेजड़ी की छंटाई, उचित प्रबंधन और समुचित देखभाल करनी चाहिए।
- किसानों को अपने खेत में लगे खेजड़ी के पेड़ों को तीन समान भागों में बांट लेना चाहिए। पहले भाग के वृक्षों की छंटाई पहले वर्ष करें, दूसरे भाग के वृक्षों की छंटाई दूसरे वर्ष में करें तथा तीसरे हिस्से के वृक्षों की छंटाई तीसरे वर्ष करें। इस तरह से छंटाई करने से प्रत्येक वृक्ष की छंटाई तीन वर्ष बाद होगी और इस प्रकार चारे व ईंधन की पैदावार 40 प्रतिशत बढ़ जाती है। जिन दो वर्षों के दौरान छंटाई नहीं की जाती, उन वर्षों में बीज का उत्पादन बहुत अच्छा होता है। छंटाई के लिए नवंबर का महीना सबसे अच्छा रहता है। छंटाई तीन वर्ष बाद करने से तने की बढ़वार भी दोगुनी अधिक होती है।

खेजड़ी का वृक्ष

है इसलिए इसे 'राजस्थान की संजीवनी' भी कहा जाता है।

औषधियां: खेजड़ी का वृक्ष एक महत्वपूर्ण औषधीय वृक्ष के रूप में जाना जाता है। इसके तने की छाल से कोढ़, दमा, पेचिश, गठिया, खांसी, जुकाम इत्यादि रोगों का इलाज सम्भव है।

नाइट्रोजन संचय करने की क्षमता: खेजड़ी के वृक्ष की जड़ों में उपस्थित ग्रंथियों में नाइट्रोजन संचित करने वाले सूक्ष्मजीव पाए जाते हैं। ये वातावरण की अनुपलब्ध नाइट्रोजन को बदलकर पौधों व जमीन के लिए अवशोषित करने योग्य बना देते हैं, जिससे भूमि की उर्वराशक्ति बढ़ जाती है।

खेजड़ी वृक्ष की रोपण विधि: खेजड़ी वृक्ष प्राकृतिक तौर पर और स्वत: सफलतापूर्वक रोपित होने वाला वृक्ष है। इस वृक्ष की फलियां बीजसहित शुष्क क्षेत्रों में पशु (भेड़, बकरियां इत्यादि) खा लेते हैं। प्राकृतिक रूप से बीज का उपचार (क्योंकि बीज सख्त आवरण सहित होता है) पशुओं के पेट में मौजूद अम्लों से हो जाता है व जैसे ही पशु खेतों में गोबर करते हैं, तो उपचारित बीज खेतों में उगने के लिए तैयार हो जाते हैं।

अत: किसान भाई इस कल्पवृक्ष को बचाने एवं देखभाल करने का संकल्प करें, ताकि आने वाली पीढ़ियों के लिए यह सुरक्षित रह सके।

सहजन है एक औषधीय पेड़

संदीप कुमार* और **प्रियंका कुमावत****

सहजन को अंग्रेजी भाषा में ड्रमस्टिक कहते हैं, जिसका वैज्ञानिक नाम *मोरिंगा ओलीफेरा* है। यह मॉर्निंगऐसी कुल का पौधा है। सहजन भारत में अनेक नामों से जाना जाता है जैसे-सहजन लाल, सहजना, मूंगा इत्यादि। सहजन पौधे का प्रत्येक भाग पोषक तत्वों से भरपूर होता है जैसे-फली, फूल, पत्तियां इत्यादि। इसलिए इसका उपयोग घरों में सब्जी बनाने एवं इसे विभिन्न औषधियों के रूप में काम में लिया जाता है। इसके फूलों व फलियों से सब्जी बनाई जाती हैं व पत्तियों का उपयोग विभिन्न प्रकार की दवा बनाने में किया जाता है। इसका फल पतला लंबा और हरे रंग का होता है, जो पेड़ के तने से नीचे लटका रहता है। सहजन के पौधे का आकार 4 से 6 मीटर लंबा होता है और यह 100 से 110 दिनों बाद फूल देने लगता है। पौधे लगाने के लगभग 160 से 170 दिनों में फल तैयार हो जाता है। यह पौधा एक वर्ष में 40 से 50 कि.ग्रा. फलियां उत्पन्न करता है। सहजन का पौधा एक बार लगाने के बाद यह 4 से 5 वर्षों तक फूल व फल देता रहता है। प्रत्येक वर्ष फसल लेने के बाद पौधे को जमीन से 1 मीटर छोड़कर काट देना चाहिए, जिससे अच्छी पैदावार होती है।

अफ्रीकी देशों में सहजन को माताओं का सबसे अच्छा दोस्त कहते हैं व पश्चिमी देशों में इसे न्यूट्रीशन डायनामाइट के नाम से जाना जाता है। सहजन का उपयोग लगभग 100 से भी अधिक तरह से पोषण के लिए किया जाता है। इसकी फली व फूल से स्वादिष्ट सब्जी बनती है। इसके बीज को सेंक कर खाने से मूंगफली जैसा स्वाद आता है। सहजन के बीज से तेल, छाल से गोंद, जड़ों व पत्तियों से आयुर्वेदिक दवाइयां बनाई जाती हैं। सहजन लगभग 300 से अधिक रोगों के उपचार में काम आता है। 100 ग्राम सहजन की पत्तियों में दही से 9 गुना अधिक प्रोटीन, संतरे से 7 गुना विटामिन 'सी', गाजर से 4 गुना विटामिन 'ए', केले से 15 गुना पोटेशियम एवं पालक से 25 गुना आयरन पाया जाता है। इसके अलावा सहजन की पत्तियां फोलिक एसिड व विटामिन 'सी' से भरपूर होती हैं। खासतौर पर सर्दी-जुकाम से यदि नाक-कान बंद हो जाते हैं, तो पत्तियों को पानी में उबालकर भाप लेने से जुकाम में आराम मिलता है। इसके अलावा हड्डियां मजबूत करने, यौन शक्ति बढ़ाने, खून साफ करने एवं बुढ़ापे को कम करने में यह बखूबी योगदान देता है। सहजन के बीज के चूर्ण से पानी शुद्ध किया जा सकता है। इस तरह से सहजन आज के युग में संजीवनी बूटी है।

सहजन बीज

सहजन की पत्तियां बढ़ते शिशु के लिए टॉनिक के समान हैं। इसकी पत्तियों का रस बच्चों को दूध में मिलाकर देने से बच्चों की हड्डियां मजबूत होती हैं और आयरन की कमी दूर होती है। सहजन की पत्तियों का रस गर्भवती माताओं को प्रसव पीड़ा में राहत और दूध बढ़ाने में मदद करता है। इसकी सूखी पत्तियों को भंडारित भी किया जा सकता है। पत्तियों को पीसकर सूखे स्थान पर डिब्बे में डालकर रखना चाहिए। पत्तियों के चूर्ण का उपयोग सब्जियों में मसाले के रूप में करते हैं। इसे बच्चों को दूध में डालकर, रोटी व लड्डू बनाकर खिलाया जा सकता है। सहजन का उपयोग कर बच्चों व बड़ों को कुपोषण से बखूबी बचाया जा सकता है। इसके अलावा पशुओं के चारे के रूप में इसकी पत्तियों को देने से दूध में डेढ़ गुना तक वृद्धि हो सकती है।

सहजन की फसल का भविष्य

राजस्थान शुष्क एवं अर्द्धशुष्क जलवायु का क्षेत्र है। राजस्थान में जल की अनियमितता को देखते हुए सहजन की खेती बहुत ही लाभकारी सिद्ध हो सकती है। सहजन की

*विद्यावाचस्पति शोधार्थी, फल विज्ञान विभाग, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालरापाटन, झालावाड़-326023 (कृषि विश्वविद्यालय, कोटा, राजस्थान); **विद्यावाचस्पति शोधार्थी, उद्यान विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानंद कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर-334006

सहजन की पत्तियां

खेती के लिए अधिक जल की आवश्यकता नहीं होती है। इसकी खेती के लिए लगभग 2 से 3 सिंचाइयां पर्याप्त रहती हैं। इस कारण सहजन की खेती का राजस्थान में उज्ज्वल भविष्य है। राजस्थान में जलवायु की प्रतिकूल दशाओं को देखते हुए अलवर, जयपुर, भरतपुर, धौलपुर, सवाई माधोपुर, कोटा, बूंदी, झालावाड़, बांसवाड़ा, डूंगरपुर, उदयपुर, सिरोही, गंगानगर, हनुमानगढ़, झुंझुनू, सीकर इत्यादि जिलों में सहजन की खेती कर सकते हैं। पश्चिमी राजस्थान में जैसे-जैसलमेर, बाड़मेर, जोधपुर, चूरू आदि जिलों में सहजन की खेती की संभावना कम है। वहां अधिक तापमान व सीमित जल होने की वजह से खेती करने में परेशानी उत्पन्न होती है।

मृदा व जलवायु

सहजन उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु का पौधा है, जिसके लिए 25 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान सर्वोत्तम माना जाता है। यह 45 डिग्री सेल्सियस तापमान तक सहन कर सकता है। जहां 80 से 150 सें.मी. तक वर्षा होती है। वहां के लिए भी यह उपयुक्त माना जाता है। सभी प्रकार की मृदाओं में सहजन की खेती की जा सकती है, लेकिन बलुई दोमट मृदा जिसका पी-एच मान 6 से 7.5 व उचित जल निकास की व्यवस्था हो, सर्वोत्तम मानी जाती है

प्रवर्द्धन

सहजन का प्रवर्द्धन बीज एवं कलम द्वारा किया जा सकता है, लेकिन बीज द्वारा किया गया प्रवर्द्धन अच्छी पैदावार देता है। एक हैक्टर क्षेत्र में खेती करने के लिए 500 से 600 ग्राम बीज पर्याप्त रहता है। बीज को सीधा गड्ढों में या पॉलीथीन की थैलियों में उगाया जा सकता है।

पॉलीथीन में बीज तैयार करना

सहजन के ताजा बीजों को रातभर पानी में भिगोने के बाद खाद और बालू रेत से भरे पॉलीथीन बैग में 1-2 बीज प्रति बैग व 1 से 2 इंच की गहराई में लगाना चाहिए। बाद में पौधों को 3×3 के गड्ढों में रोपित करके हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

सहजन की उन्नत किस्में

पी.के.एम.-1, पी.के.एम.-2, भाग्य (के.डी.एम.-1), जी.के.वी.के.-1, जी.के.वी.के.-2, जी.के.वी.के.-3, कोयंबटूर-1, कोयंबटूर-2

गड्ढे तैयार करना

सहजन के पौधे लगाने के लिए 3 × 3 मीटर की दूरी पर गड्ढों की खुदाई कर ली जाती है। बुआई से लगभग 1 सप्ताह पहले गड्ढों को 0.50 × 0.50 × 0.50 मीटर आकार में खोदकर 15 कि.ग्रा. प्रति गड्ढा गोबर की खाद और एजोस्पिइरिलम व पीएसबी 5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से गड्ढों में डालकर लगभग 1 सप्ताह बाद बुआई कर देनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

सहजन की फसल के लिए गड्ढे तैयार करते समय 15 से 20 कि.ग्रा. गोबर की खाद प्रति गड्ढा एवं एजोस्पिइरिलम और पीएसबी 5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करना चाहिए। इसके अलावा बुआई के 3 माह बाद 100 ग्राम यूरिया, 100 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट व 50 ग्राम पोटाश प्रत्येक गड्ढे की दर से डालनी चाहिए। इससे अच्छी उपज प्राप्त होती है।

सिंचाई

सहजन की फसल में सिंचाई की अधिक आवश्यकता नहीं होती है। अधिक पैदावार प्राप्त करने के लिए सिंचाई करना अति जरूरी है। सर्दियों में 15 से 20 दिनों

सहजन की फलियां

सहजन के साथ करें अन्य फसलों की खेती

सहजन में इंटर क्रॉपिंग के लिए ऐसी फसल का चयन करना चाहिए, जिसे कम सिंचाई व सहजन फसल जैसी जलवायु व मृदा की आवश्यकता हो। सहजन के बगीचों में लता वाली फसल उगाई जानी चाहिए, ताकि सहजन के पेड़ लता वाली फसलों को चढ़ने के लिए सहारा प्रदान करते रहें जैसे-करेला, तोरई, सेम इत्यादि। मिर्च, सेम, पत्तेदार सब्जियां, दाल व टमाटर फसलों को उगाकर अधिक लाभ ले सकते हैं।

सहजन

रोग एवं व्याधि

सहजन की फसल में अधिक रोग-व्याधि का खतरा नहीं रहता है। मुख्यत: इसमें जड़गलन एवं तनागलन रोग ही देखने को मिलता है। यह कवक द्वारा फैलता है पौधशाला में अधिक जल भराव के कारण यह रोग उत्पन्न होता है। इसलिए खेत में उचित जल निकास का प्रबंध रखें एवं प्रभावित पौधे को उखाड़कर खेत से अलग कर देना चाहिए। इसके अलावा 0.6 ग्राम मैंकोजेब का छिड़काव 10 दिनों के अंतराल से करना चाहिए।

व गर्मियों में 10 से 12 दिनों के अंतराल से सिंचाई करनी चाहिए। इसके अलावा फूल आते समय सिंचाई का विशेष ध्यान रखना चाहिए। मृदा में अधिक नमी व शुष्कता होने के कारण फूल झड़ जाते हैं।

सहजन में रेटूनिंग

सहजन की फसल से उत्पादन लेने के बाद इसके पौधों को सतह से लगभग 1 मीटर की ऊंचाई से काटकर अलग कर दिया जाता है। इससे अगली फसल के लिए फुटान अच्छा होता है व पैदावार अधिक व गुणवत्तापूर्ण होती है।

फलों की तुड़ाई एवं उपज

वर्ष में दो बार फल देने वाली सहजन की किस्मों की तुड़ाई सामान्यत: फरवरी-मार्च और सितंबर-अक्टूबर में की जाती है। प्रत्येक पौधे से 200 से 400 फलियां या 40 से 50 कि.ग्रा. फलियां प्रति पौधा प्राप्त हो जाती हैं।

विपणन

सहजन के पोषक गुणों के कारण लोगों का इसके प्रति रुझान बढ़ रहा है, जिसके कारण बाजार मांग अधिक हुई है। इसके विपणन में किसी प्रकार की कोई परेशानी नहीं आती है। किसान इसको सीधा बाजार ले जाकर बेच सकता है। विभिन्न प्रकार की कंपनियां, जो बेबी फूड तैयार कर रही हैं, किसानों से सीधे संपर्क बना लेती हैं और इस प्रकार विपणन में किसी प्रकार की परेशानी उत्पन्न नहीं होती है। ■

प्याज उत्पादन तकनीक

शोभाराम अंजनावे*, **आशीष शर्मा***, **रजनी शर्मा***,
विकास जैन* और **प्रदीप मिश्रा***

प्याज दैनिक जीवन एवं रसोई में रोज उपयोग होने वाली एक सब्जी है। कंद वाली सब्जियों में प्याज एक महत्वपूर्ण फसल है। प्याज में कैल्शियम, फॉस्फोरस, आयरन, थायमीन, विटामिन 'सी' एवं अन्य पोषक तत्व पाए जाते हैं। यह एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक फसल है। भारत के प्याज की मांग विदेशों में भी अच्छी है। इसी कारण हमारा देश प्याज का प्रमुख निर्यातक देश है।

भारत में आलू के बाद प्याज दूसरी सबसे महत्वपूर्ण व्यावसायिक फसल है। मौसम के अनुसार कुल प्याज उत्पादन का 20 प्रतिशत अक्टूबर-नवंबर, 20 प्रतिशत जनवरी-फरवरी एवं 60 प्रतिशत अप्रैल-मई में बाजार में आता है। प्याज का कंदवर्गीय सब्जियों में प्रमुख स्थान है। देश में प्याज उत्पादन में महाराष्ट्र, कर्नाटक, गुजरात, बिहार, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, हरियाणा एवं उत्तर प्रदेश प्रमुख राज्यों में हैं। प्याज की खेती देश में 1.28 लाख हैक्टर क्षेत्रफल में की जाती है, जिससे 23.26 लाख टन उत्पादन (वर्ष 2018) प्राप्त होता है।

जलवायु

प्याज मुख्यत: ठंडे मौसम की फसल है, लेकिन आजकल कुछ उन्नत किस्में विकसित हो जाने से इसे खरीफ मौसम में भी उगाया जाने लगा है। इसे अत्यधिक तापमान के साथ नम जलवायु में या कम तापमान में भी उगाया जा सकता है। प्याज की फसल के लिए कंद बनने से पूर्व 13-21 डिग्री सेल्सियस तथा कंद के विकास के लिए 15-25 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है।

मृदा

प्याज की खेती कई तरह की मृदाओं में हो सकती है। प्याज के एक कन्दीय फसल होने के कारण भूमि भुरभुरी, उचित जल निकास वाली तथा पर्याप्त मात्रा में कार्बनिक पदार्थ वाली बलुई दोमट मृदा का होना भी जरूरी है, जिसका पी-एच 5.5-6.5 हो, सर्वोत्तम माना जाता है।

भूमि की तैयारी

प्याज की रोपाई से पूर्व 3-4 बार गहरी जुताई कर खेत को अच्छी तरह तैयार कर लेना चाहिए तथा उसके बाद पाटा चलाकर खेत को समतल कर देना चाहिए।

प्रमुख किस्में

अर्का बिन्दु, एग्रीफाउण्ड व्हाइट, फुले स्वर्णा, एग्रीफाउण्ड लाइट रेड, पूसा रेड, पूसा रत्नार, पूसा व्हाइट फ्लेट, पूसा व्हाइट राउण्ड, अर्का कल्याण, अर्का प्रगति, अर्का निकेतन, अर्का स्वादिष्ट, अर्का उज्ज्वल, अर्का विश्वास एवं अर्का सोना।

खाद एवं उर्वरक

सामान्यत: कम्पोस्ट/गोबर की खाद 200-250 क्विंटल, नाइट्रोजन 100 कि.ग्रा., फॉस्फोरस 80 कि.ग्रा. एवं पोटाश 60

प्याज की फसल

*कृषि महाविद्यालय, पवारखेड़ा, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय,जबलपुर (मध्य प्रदेश)

कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से देनी चाहिए। गोबर व कम्पोस्ट की खाद, फॉस्फोरस, पोटाश तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा पौध रोपण के पूर्व भूमि की तैयारी के समय मृदा में मिलाएं तथा शेष नाइट्रोजन की मात्रा को दो बराबर भागों में बांटकर रोपाई के 30 एवं 45 दिनों बाद देनी चाहिए।

पौध तैयार करना

एक हैक्टर में रोपाई के लिए 8-10 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। बोने से पूर्व इसे बाविस्टीन से 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। पौध, रोपाई के लिए 40-50 दिनों में तैयार हो जाती हैं।

पौध रोपण एवं समय

पौध, जब 40-50 दिनों या 10-15 सें.मी. ऊंचाई की हो जाए, तब पंक्ति से पंक्ति की दूरी 20 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 सें.मी. पर रोपण करना चाहिए। रोपाई के लिए सबसे अच्छा समय खरीफ में जुलाई से अगस्त तथा रबी में दिसंबर से जनवरी का होता है।

निराई-गुड़ाई एवं सिंचाई

प्याज के खेत में उथली निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। इसमें खरपतवार नियंत्रण के लिए खरपतवारनाशियों का छिड़काव किया जा सकता है। रोपण के तुरन्त बाद स्टाम्प (पेण्डीमिथालीन 30 ई.सी.) का 3 लीटर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार प्रति सप्ताह हल्की सिंचाई करनी चाहिए। खुदाई के 15-20 दिनों पूर्व सिंचाई बंद कर देनी चाहिए।

कीट नियंत्रण

थ्रिप्स

ये कीट पत्तियों से रस चूसते हैं, जिससे पत्तियों पर सफेद धब्बे बन जाते हैं। इस कीट के आक्रमण से पत्तियों के शीर्ष भूरे होकर मुरझाने लगते हैं एवं सूख जाते हैं।

नियंत्रणः इसके नियंत्रण के लिए फिप्रोनिल का 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

मेगट

इसमें मक्खी, पौधे के आसपास भूमि पर छोटे-छोटे समूह में अंडे देती हैं। अंडों से मेगट निकलकर पत्तियों के आधार को खाते हैं और कंद में छेदकर प्रवेश कर जाते हैं तथा सड़न पैदा करते हैं।

नियंत्रणः फसलचक्र अपनाना चाहिए एवं संक्रमित कंदों से प्रौढ़ कीट को बाहर आने से पहले नष्ट कर देना चाहिए। ग्रीष्म में गहरी जुताई करने से प्यूपा आदि नष्ट हो जाते हैं।

प्याज कंद

खुदाई

प्याज की पत्तियों का ऊपरी भाग जब सूखने लगे, तो उसे खुदाई से पहले बांस की लकड़ी से गिरा देना चाहिए। कंद की खुदाई सावधानीपूर्वक कुदाली से करनी चाहिए।

उपज

औसतन 250-300 क्विंटल प्रति हैक्टर उपज प्राप्त होती है।

रोग तथा नियंत्रण

ब्लाइट (झुलसा)

इस रोग में पत्तियों का शीर्ष भाग झुलस जाता है। इससे प्रभावित पत्तियां ऊपर से सूखना प्रारंभ करती हैं।

नियंत्रणः इस रोग के नियंत्रण के लिए मैंकोजेब का 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

डाउनी मिल्ड्यू

पत्तियों, फूलों तथा डंठल पर बैंगनी

झुलसा रोग का प्रभाव

रंग के रोएं उभर आते हैं। ये बाद में पीलापन लिए हरे हो जाते हैं तथा अंत में पत्तियां, बीज एवं डंठल गिर जाते हैं।

नियंत्रणः मैंकोजेब 2 कि.ग्रा. 1000 लीटर पानी प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव कर इस रोग को रोका जा सकता है।

काली फफूंद

इससे प्याज की बाहरी परत में काले रंग के धब्बे बनते हैं और धीरे-धीरे सारा भाग काला हो जाता है। यह रोग साधारणतः भण्डारित कंदों में होता है।

नियंत्रणः भण्डारण के पहले 10-15 दिनों के कंदों को छायादार और खुले स्थान

काली फफूंद रोग

स्वस्थ प्याज कंद

उन्नत किस्में

- **भीमा सुपरः** खरीफ में इसका उत्पादन 20-22 टन प्रति हैक्टर और पछेती खरीफ में यह उत्पादन बढ़कर 40-45 टन तक पहुंच सकता है। खरीफ में यह किस्म 100-105 और पछेती खरीफ में 110 से 120 दिनों में पककर तैयार हो जाती है।
- **भीमा रेडः** यह किस्म खरीफ एवं पछेती खरीफ मौसम में उगाने के लिए उपयुक्त है। इस किस्म से औसतन खरीफ में 270 क्विंटल एवं रबी में 310 क्विंटल उपज प्राप्त हो जाती है।
- **भीमा राजः** यह किस्म खरीफ में उगाने के लिए भी उपयुक्त है। यह रोपाई के 120-125 दिनों बाद पककर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 250-300 क्विंटल प्रति हैक्टर है।
- **एग्रीफाउण्ड रेडः** इस किस्म के कंदों का आकार 7.15 सें.मी. तक होता है। यह रोपाई के 65-70 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 180-200 क्विंटल प्रति हैक्टर है।
- **भीमा शुभ्राः** यह सफेद प्याज की दूसरी किस्म है। यह 110-115 दिनों में खरीफ में और पछेती खरीफ में 120-130 दिनों में पककर तैयार हो जाती है।
- **एग्रीफाउण्ड राउण्डः** यह किस्म रोपाई के 95-110 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 190-200 क्विंटल प्रति हैक्टर है।

पर रखना चाहिए। खुदाई के 10-15 दिनों पूर्व कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें।

पर्पल ब्लॉच

रोगग्रस्त भाग पर छोटे, सफेद धंसे हुए धब्बे बनते हैं। रोगग्रस्त पत्तियां झुलस जाती हैं तथा पत्तियां एवं तने गिर जाते हैं।

नियंत्रणः बीज नर्सरी में बुआई से पूर्व थीरम 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर

खुदाई से पहले प्याज की पत्तियों को गिराना

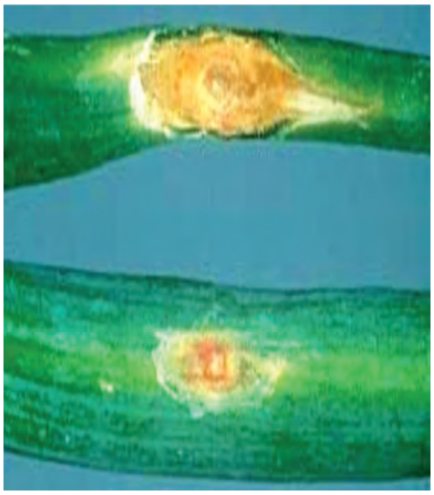

पर्पल ब्लॉच रोग

से उपचारित करना चाहिए। मैंकोजेब का 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

बटन मशरूम की खेती

निधि त्यागी* और **सीमा ठाकुर***

मशरूम एक प्रकार का कवक है और यह वर्षा ऋतु में प्रायः खाद के ढेरों, चरागाहों, खेतों और जंगलों में देखा जाता है। प्राकृतिक रूप से उगने वाले मशरूम कुछ तो खाने योग्य एवं पौष्टिक होते हैं तथा कुछ जहरीले भी होते हैं। लेकिन उगाये जाने वाले सभी मशरूम खाने योग्य, पौष्टिक व स्वादिष्ट होते हैं। इसमें प्रोटीन उच्च कोटि का होता है व लगभग पच जाता है।

मशरूम एक पौष्टिक एवं औषधीय गुणों से भरपूर खाद्य पदार्थ है। इसे भोजन के रूप में प्रचलित तथा प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। विकसित देशों की तुलना में प्रति व्यक्ति मशरूम की खपत भारत में बहुत कम है। चीन में प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष मशरूम की खपत 20 से 22 कि.ग्रा. है। इसकी तुलना में भारत में प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष लगभग 100 ग्राम खपत होती है।

मशरूम की सामान्य पौष्टिक संरचना

- पानी 90 प्रतिशत, प्रोटीन 2.5-3.0 प्रतिशत
- शुष्क अवयव 10 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 4-6 प्रतिशत
- रेशा 1 प्रतिशत, वसा 0.4-0.6 प्रतिशत
- राख 1 प्रतिशत

विश्व में मशरूम उत्पादन लगभग 400 लाख टन प्रतिवर्ष है। इसमें 8 से 10 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से वृद्धि हो रही है। दुनिया में कुल मशरूम का लगभग 85 प्रतिशत उत्पादन चीन में होता है। भारत में 1.44 लाख मीट्रिक टन मशरूम का उत्पादन होता है।

मशरूम उत्पादन के लाभ

- मशरूम की खेती करने से कम समय में उच्च गुणवत्ता का प्रोटीन उत्पादन प्रति इकाई क्षेत्रफल से सबसे अधिक प्राप्त होता है
- यह शाकाहारी लोगों के लिए प्रोटीन तथा पौष्टिक तत्वों से भरपूर भोजन है
- केवल 25 लीटर पानी से एक कि.ग्रा. मशरूम उत्पादन होता है, जबकि अन्य खाद्यान्नों में 138 लीटर पानी की आवश्यकता होती है
- इसकी खेती भूमिहीन एवं छोटे किसानों के लिए वरदान है
- रोजगार के अधिक अवसर
- निर्यातोन्मुखी फसल उत्पाद
- कम जमीन में बहुमंजिला खेती
- मशरूम उत्पादन कमरों के अंदर किया जाता है। इसलिए प्राकृतिक आपदाओं जैसे कि ओलावृष्टि, पाला, आंधी, तूफान तथा आवारा पशुओं आदि से सुरक्षित है

उत्पादन विधि

मशरूम उत्पादन प्रक्रिया प्रमुख रूप से निम्न चरणों में पूर्ण होती है:

सर्वप्रथम मशरूम उत्पादन के लिए झोपड़ी अथवा उत्पादन कक्ष का निर्माण कर उपयुक्त तापमान नियंत्रण व्यवस्था स्थापित की जाती है। इसके लिए गर्मी में तापमान आवश्यकतानुसार कम करने के लिए कूलर एवं वातानुकूलित प्रणाली की व्यवस्था की जाती है। बहुमंजिला खेती करने के लिए कमरों के अंदर ऊंचाई के अनुसार 4-6 मंजिल के रैक तैयार किए जाते हैं।

मशरूम उत्पादन की तैयारी

*कृषि विज्ञान केन्द्र, सोलन (हिमाचल प्रदेश)

कृषि अवशेष से मशरूम उत्पादन

भारत में प्रतिवर्ष लगभग 7000 लाख मीट्रिक टन कृषि अवशेष उत्पन्न होता है और इनमें से काफी बड़ा हिस्सा खेतों में ही जला दिया जाता है अथवा सड़ने के लिए छोड़ दिया जाता है। इसका एक प्रतिशत भी यदि मशरूम उत्पादन के लिए उपयोग किया जा सके तो भारत में 30 लाख मीट्रिक टन से ज्यादा मशरूम पैदा हो सकता है और देश एक प्रमुख मशरूम उत्पादक देश बन सकता है। वर्तमान में अपने देश में केवल 0.03 प्रतिशत फसल अवशेष को काम में लेकर मशरूम की खेती की जा रही है।

मशरूम उत्पादन के विभिन्न चरण

सारणी 1. मशरूम के गुण और पोषण लाभ

मशरूम के गुण	लाभ
अच्छी गुणवता का प्रोटीन	कुपोषण निवारक
कम सोडियम वाला पोटेशियम	उच्च रक्तचाप का नियंत्रण
स्टार्च, कॉलेस्ट्रॉलरहित व कम सुक्रोज	मधुमेह व हृदय रोगियों के लिए लाभकारी
फाइबर (रेशों) की अधिकता	पाचन क्रिया में सुधार
एकमात्र सब्जी जो विटामिन 'डी' से भरपूर	रिकेट्स (सूखा रोग) में लाभकारी
फोलिक एसिड, विटामिन 'बी' व खनिज लवण	स्वास्थ्यवर्धक
एस्कॉर्बिक एसिड एवं केरोटिनोइड्स	एंटीऑक्सीडेंट
कम ऊष्मा वाला भोजन	मोटापा घटाने में सहायक
सेलिनियम	कैंसर रोग को बढ़ने से रोकने की क्षमता
बीटा ग्लूकॉन एवं टरपीनस	प्रतिरक्षण क्षमता में बढ़ाव

इसके बाद मशरूम उत्पादन में निम्नानुसार प्रयुक्त होने वाले अवयव एकत्र कर कम्पोस्ट तैयार की जाती है। खाद (कम्पोस्ट) बनाने लिए सारणी में लिखित किसी भी सूत्र का प्रयोग किया जा सकता है। सूत्र नम्बर 1, 2 तथा 3 में गेहूं धान तथा सरसों के भूसे का प्रयोग किया गया है। किसान खाद, न मिलने पर सूत्र नम्बर 1 में 9 कि.ग्रा. खाद की जगह 4.5 कि.ग्रा. यूरिया प्रयोग किया जा सकता है। कम्पोस्ट बनाने के लिए उक्त अवयव सहित सबसे पहले भूसे को 72 घण्टे भिगोकर गीला कर दिया जाता है, फिर 8 बार पलटाई की जाती है। पहली 3 दिन बाद, दूसरी 6 दिन बाद, तीसरी 13वें दिन, चौथी 16वें दिन, 5वीं 19वें दिन, 6वीं 22वें दिन, 7वीं 25वें दिन, 8वीं 28वें दिन की जाती है तो कम्पोस्ट तैयार हो जाती है।

सारणी 2. कम्पोस्ट (खाद) बनाने की विधि मात्रा (कि.ग्रा.में)

अवयव	सूत्र न. 1	सूत्र न. 2	सूत्र न. 3
गेहूं का भूसा या धान का पुआल	300	300	–
सरसों का भूसा	–	–	300
मुर्गी खाद	–	60	60
गेहूं का चोकर	15	7.5	8
जिप्सम	20	30	20
किसान खाद (कैल्शियम एव अमोनियम नाइट्रेट)	9	6	–
यूरिया	3.6	2	4
म्यूरेट ऑफ पोटाश	3	2	–
सिंगल सुपर फॉस्फेट	3	–	–
शीरा (राला)	5	5	5

तैयार कम्पोस्ट में इसके भार का 0.7 प्रतिशत स्पॉन (मशरूम का बीज) मिलाकर कम्पोस्ट को क्यारी में अथवा पॉलीथीन के थैलों में भरकर कवक जाल को फैलने के लिए 24-25 डिग्री तापमान पर 80-90 प्रतिशत नमी अवस्था में 15 दिनों के लिए अंधेरे में रख दिया जाता है। कम्पोस्ट में कवक जाल के बाद 1-1.5 इंच की मोटी केसिंग मिट्टी की एक परत बिछा दी जाती है और उस पर पानी का छिड़काव कर दिया जाता है। केसिंग करने के लगभग एक सप्ताह बाद जब फफूंद केसिंग में फैल चुका हो तो कमरे का तापमान 16-18 डिग्री सेल्सियस करके कमरे में ताजा हवा देनी आवश्यक होती है। इसी तापमान पर लगभग एक सप्ताह में मशरूम की फसल मिलनी शुरू हो जाती है। इस प्रकार कुल 60 दिनों में फसल अवधि पूर्ण हो जाती है। उत्पादन, कम्पोस्ट भार का लगभग 20 प्रतिशत प्राप्त होता है। बटन मशरूम उत्पादन के लिए छोटी से छोटी इकाई इतनी होनी चाहिए कि प्रत्येक फसल में कम से कम 500 कि.ग्रा. उत्पादन मिले। मध्यम आकार की इकाई उसे माना जा सकता है, जहां प्रति फसल 1,500 कि.ग्रा. से 7,000 कि.ग्रा. मशरूम का उत्पादन मिले। इससे अधिक उत्पादन की इकाई को बड़े आकार की इकाई माना जाता है।

मशरूम विक्रय हेतु पैकिंग

शुष्क क्षेत्रों में तुम्बा की खेती है लाभकारी

राम निवास*, **चारू शर्मा****, **चंद्र प्रकाश मीणा***** और **सुनील शर्मा******

बहुत ही कम बारिश होने की वजह से किसानों के लिए रेगिस्तान में जहां एक ओर फसल उत्पादन करना बहुत कठिन कार्य है, वहीं दूसरी तरफ खरीफ फसल में खरपतवार के नाम से जाने वाला तुम्बा आजकल आय का अच्छा जरिया बन रहा है। सूखे क्षेत्रों में पशुपालन ही अधिकतर किसानों के जीवनयापन करने का एकमात्र साधन है। हरे सूखे चारे के अभाव की वजह से पशुपालकों को अनेक परेशानियों का सामना करना पड़ता है। रेगिस्तान में तुम्बा आसानी से पनपने की वजह से किसानों के लिए एक अतिरिक्त आय का साधन बन सकता है। तुम्बा का छिलका पशुओं में रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के साथ-साथ देसी एवं आयुर्वेदिक औषधियों में काम आता है। इसके अलावा गाय, भेड़, बकरी व ऊंट आदि में होने वाले रोगों के उपचार में भी इसका उपयोग किया जाता है। इसकी पत्तियां बकरियों के पौष्टिक चारे के रूप में काम आती हैं तथा उनका दूध बढ़ाती हैं। तुम्बा, पशुओं में थनों पर सूजन को कम करने वाला, कृमि को निकालने में मददगार, पशु की पाचन शक्ति को बढ़ाने वाला और रक्त को शुद्ध करने का कार्य करता है। पशु आहार के साथ एक तुम्बा पशु को रोज खिलाने से पशु स्वस्थ एवं रोगों से दूर रहता है।

रेगिस्तान में किसान तुम्बा, को खरपतवार के तौर पर देखा करते थे। आजकल इसकी औषधीय गुणों से भरपूर होने की वजह अच्छे दामों पर बिक्री हो जाती है। तुम्बा का अचार, कैंडी, मुरब्बा और चूर्ण बनाकर घरेलू उपयोग के साथ-साथ बाजार में बेचकर मुनाफा अर्जित किया जा सकता है। शुष्क और अतिशुष्क क्षेत्र में तुम्बा जैसी फसल को अपनाया जाना आवश्यक हो गया है, जो बहुत ही कम वर्षा व व्यय में संभव है। यह खरीफ के मौसम की फसल होने के साथ ही भूसंरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। पेट साफ करने, मानसिक तनाव, पीलिया, मूत्र रोगों में यह लाभदायक है। तुम्बा को इंद्रायण, सिट्रलस कॉलोसिंथस एवं बिटर एपल इत्यादि नामों से जाना जाता है। इसके फल के गूदे को सुखाकर औषधि के काम में लाते हैं।

*विषय विशेषज्ञ, पशुपालन; **गृह विज्ञान प्रसार शिक्षा; ***सहायक आचार्य (उद्यान विज्ञान); ****कृषि प्रसार शिक्षा, कृषि विज्ञान केन्द्र (स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर) पोकरण-345021 (जैसलमेर)

तुम्बे का अचार व कैंडी

सर्वप्रथम तुम्बे का छिलका उतारकर इसे चूने के पानी में सात से आठ दिनों तक भिगोकर रखा जाता है, ताकि यह मीठा हो जाए। एक कि.ग्रा. चूना प्रति चार कि.ग्रा. तुम्बे के लिए पर्याप्त होता है। इस चूने को उपयोग में लाने से पूर्व दस लीटर पानी में डालकर रातभर रखने के पश्चात चूने के पानी को निथारकर कपड़े से छानकर इसको अलग करके इसमें तुम्बे को सात से आठ दिनों तक के लिए भिगो दिया जाता है। इसके बाद इसको साफ पानी से धोया जाता है। अब

इसको धूप में सुखाया जाता है, ताकि इसकी नमी पूरी तरह से खत्म हो सके। इसके बाद में सूखे हुए तुम्बे में हल्दी, राई, मेथी,सौंफ, जीरा, हींग, सरसों का तेल डाल दिया जाता है। सुखाने के बाद की प्रक्रिया ठीक उसी तरह रहेगी जैसे कि साधारण अचार बनाने की होती है। यदि इस सूखे हुए तुम्बे को चीनी की चाशनी में उबालकर रख दिया जाए, तो यह कैंडी बन जाती है। पौष्टिक एवं स्वादिष्ट तुम्बे का अचार बाजार में 400 रुपये कि.ग्रा. तक बिकता है। यह स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभदायक होता है।

तुम्बे का चूर्ण

तुम्बे का चूर्ण पेट, बदहजमी, गैस इत्यादि में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। सर्वप्रथम तुम्बे को काटकर इसमें आवश्यकतानुसार काला नमक, सेंधा नमक, सफेद नमक, अजवायन और मेथी मिलाकर इसको दस से पन्द्रह दिनों तक डिब्बे में बंद करके छाया में रख दिया जाता है। इसके पश्चात इसको निकालकर धूप में दस से पन्द्रह दिनों तक सुखा लिया जाता है, ताकि इसकी नमी पूरी तरह से खत्म हो जाए। अब इसको मिक्सर में अच्छी तरह से पीसकर चूर्ण तैयार कर लिया जाता है। इसका सेवन समस्या होने पर बहुत कम मात्रा में करना चाहिए।

तुम्बा फल

औषधीय गुणों से भरपूर तुम्बा

आयुर्वेद में इसे शीतल, रेचक और गुल्म, पित्त, उदर रोग, कफ, कुष्ठ तथा ज्वर को दूर करने वाला कहा गया है। यह निम्नलिखित तरह से फायदा पहुंचाता है:

- तुम्बा के बीजों का तेल नारियल के तेल में मिलाकर सिर में नित्य मालिश करने से सफेद बाल काले हो जाते हैं।
- तुम्बा की जड़ का चूर्ण गुड़ के साथ इस्तेमाल करने से पीलिया रोग ठीक हो जाता है।
- तुम्बा की जड़ का नस्य देने से मिर्गी रोग में काफी लाभ मिलता है। अगर आपको खांसी कई दिनों से है और ठीक नहीं हो रही है, तो तुम्बा के पके फल में 10-15 कालीमिर्च भर दें और धूप में रख दें। रोज एक कालीमिर्च को पिप्पली और शहद के साथ मिलाकर सेवन करें। कैसी भी खांसी हो, ठीक हो जाती है।
- तुम्बा की जड़ को पीसकर इसे हल्का गर्म करके सूजन वाली जगह बांधने से सूजन जल्दी ही ठीक हो जाती है और कब्ज की समस्या में तुम्बा की जड़ का चूर्ण 1 ग्राम की मात्रा में गुड़ के साथ सेवन करने से कब्ज खत्म हो जाती है।
- महिलाओं में मासिक धर्म रुक-रुक कर आने की समस्या में तुम्बा के फल के बीज 3 ग्राम और 5-6 दाने कालीमिर्च, इन दोनों को पीसकर चूर्ण बना लें। अब 150 मि.ली. पानी में डालकर इनका काढ़ा बना लें। काढ़े के सेवन से रुका हुआ मासिक धर्म फिर से शुरू होता है एवं समय पर आता है।
- 3 ग्राम तुम्बा के चूर्ण को पान के पत्ते में रखकर खाने से सर्पदंशजन्य अथवा बिच्छू दंश वेदना आदि के विषाक्त प्रभावों को कम करने में मदद मिलती है। तुम्बा की जड़ के चूर्ण में सरसों का तेल मिलाकर शरीर पर मालिश करने से बुखार से आराम मिलता है। तुम्बा के फल के गूदे को गरम करके पेट पर बांधने से आंतों में स्थित कीट मर जाते हैं।
- यदि स्त्रियों के स्तनों में सूजन हो तो, तुम्बा की जड़ को पीसकर इसका लेप स्तनों पर लगाने से स्तनों की सूजन तथा दर्द में राहत मिलती है।
- पेशाब में जलन हो या पेशाब करते समय दर्द हो, तो तुम्बा की जड़ को पानी के साथ पीसकर एवं छानकर 5 ग्राम मात्रा में पीने से पेशाब में जलन और दर्द की शिकायत में लाभ मिलता है।
- जिन स्त्रियों को गर्भधारण में दिक्कत आती हो, तो तुम्बा की जड़ को बेलपत्र के साथ पीसकर 5 ग्राम की मात्रा में गुड़ के साथ नित्य सेवन करने से जल्द ही गर्भ ठहरता है।
- सिरदर्द में तुम्बा की जड़ को तिल के तेल में पका लें। इस तेल की मस्तक पर मालिश करने से सिरदर्द की समस्या जाती रहती है। फोड़े-फुंसियों में तुम्बा की जड़ को पीसकर इसका लेप प्रभावित स्थान पर करने से फोड़े-फुन्सियां बैठ जाती हैं।

कैसे और कब करें खेती

पहली वर्षा के बाद जून-जुलाई का समय इसकी बुआई के लिए उपयुक्त रहता है। सामान्यत: 150-300 मि.मी. वर्षा वाले क्षेत्रों में इस फसल का अच्छा उत्पादन होता है। इसके बीजों की बुआई 3 मीटर दूरी पर व पंक्तियों में 1-1 मीटर पर की जाती है। एक स्थान पर दो उपचारित बीज 2 सें.मी. गहराई तक गाड़ना उचित होता है। एक एकड़ में 250 ग्राम बीज पर्याप्त होते हैं। इसके पौधे नर्सरी के रूप में उगाकर पौध के माध्यम से भी रोपण किए जाते हैं। इस प्रकार बीजों की आवश्यकता आधी रह जाती है। नवंबर-दिसंबर में फल पीले पड़ने पर तोड़ लिए जाते हैं अत: इसकी दो बार तुड़ाई करनी चाहिए। पहली तुड़ाई नवंबर के अंत में और दूसरी दिसंबर के अंत में की जानी चाहिए। फल सूखने पर बीज अलग कर लेते हैं। एक एकड़ में लगभग 2 क्विंटल बीज प्राप्त होते हैं और एक एकड़ में लगभग 3-3.5 क्विंटल फल प्राप्त होते हैं।

गिलोय है बहुपयोगी औषधीय पादप

मोरध्वज सिंह*, **कनिका इस्सर*** और **संजय सिंह नेगी****

गिलोय, का वैज्ञानिक नाम *टीनोस्पोरा कोर्डीफोलिया* है, जो *मेनिस्पर्मेसी* परिवार का सदस्य है। यह एक बहुवर्षीय झाड़ीदार लता है। यह समुद्रतल से 1200 मीटर से 3000 मीटर की ऊंचाई तक भारत के उष्णकटिबंधीय व उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में पायी जाती है। यह लता कई वर्षों तक फूलती और बढ़ती रहती है। इसकी बेल वृक्षों की सहायता से बढ़ती है, जिस वृक्ष को यह अपना आधार बनाती है, उसके गुण भी इसमें समाहित रहते हैं। इस दृष्टि से नीम के वृक्ष पर चढ़ी गिलोय को सबसे उत्तम औषधि माना जाता है। इसके पत्ते प्रायः पान के पत्तों के समान होते हैं। गिलोय के पत्तों का व्यास 2 से 4 इंच तक होता है। इसके फूल छोटे-छोटे गुच्छों में लगते हैं, जो गर्मी के मौसम में आते हैं। गिलोय के फल मटर के समान अंडाकार तथा गुच्छों में लगते हैं और पकने पर लाल रंग के हो जाते हैं।

औषधीय रूप में संपूर्ण गिलोय का पौधा महत्वपूर्ण है। इसकी ताजी छाल हरे रंग की तथा गुच्छेदार होती है। इसकी बाहरी छाल हल्के भूरे रंग की होती है, जिसे हटा देने पर भीतर का हरित मांसल भाग दिखाई देता है। काटने पर अंतर्भाग चक्राकार दिखाई पड़ता है। इसका व्यास लगभग एक इंच तक होता है। यह स्वाद में तीखा होता है, पर गंध कोई विशेष नहीं होती। गिलोय के अमृततुल्य गुणों के कारण इसे अमृता भी कहते हैं। गिलोय में गिलोइन नामक कड़वा ग्लूकोसाइड, गिलस्टेराल, ब्रेर्वेरिन, गिलोइनिन नामक एल्कोलाइड पाए जाते हैं। इसमें अनेक प्रकार के वसा, अम्ल एवं उड़नशील तेल पाए जाते हैं। इसमें काफी मात्रा में लाभदायक तत्व पाए जाते हैं जैसे-टिनोस्पोरिन, टिनोस्परिक एसिड, सिरिनजेन, शिलोइन इत्यादि। इसकी पत्तियों में कैल्शियम, प्रोटीन, फॉस्फोरस

गिलोय लता

* सहायक प्राध्यापक, उद्यान विभाग, डॉल्फिन (पी. जी.) इंस्टीट्यूट ऑफ बायोमेडिकल एंड नेचुरल साइंसेस, मांडुवाला, देहरादून (उत्तराखंड)

उपयोगी गिलोय

गिलोय का प्रत्येक भाग है उपयोगी

गिलोय के औषधीय गुण

- गिलोय बुखार को दूर करने की सबसे अच्छी औषधि मानी जाती है। यह सभी प्रकार के बुखार जैसे-टाइफाइड, मलेरिया, मंद ज्वर तथा पुराने बुखार के लिए बहुत ही उत्तम औषधि है।
- यह शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक होती है।
- गिलोय इंसुलिन की उत्पत्ति को बढ़ाकर ग्लूकोज का पाचन करती है तथा रोग के संक्रमणों को रोकने का कार्य करती है।
- इसका रस कड़वा तथा तीखा होता है, जो पाचन शक्ति को तेज करने वाला तथा पीलिया को खत्म करने वाला होता है। यह तेज बुखार, उल्टी, खांसी, बवासीर, टी.बी., जलन, पेशाब करने में कष्ट तथा जोड़ों का दर्द आदि रोगों को दूर करने में सहायक होता है।
- यह तीखा होने के कारण पेट के कीटों को मारने का कार्य करता है।
- इसमें काफी मात्रा में लाभदायक तत्व पाए जाते हैं। जैसे-टिनोस्पोरिन, टिनोस्परिक एसिड, सिरिनजेन, शिलोइन, बरबेरियन आदि। यह स्वाइन फ्लू की रोकथाम में लाभदायक है।
- कुष्ठ, एलर्जी और सभी प्रकार के त्वचा विकारों में गिलोय लाभकारी है।
- इसमें सोडियम सेलिसिलेट होने के कारण अधिक मात्रा में दर्द निवारक गुण पाए जाते हैं।
- क्षय रोग उत्पन्न करने वाले 'माइक्रोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस' जीवाणु की वृद्धि को यह सफलतापूर्वक रोकता है। एस्केनिशिया कोलाइ नामक रोगाणु जो मूत्रवाही संस्थान तथा आंत्र संस्थान को ही नहीं सारे शरीर को प्रभावित करता है, यह उसे जड़ से नष्ट कर देता है।
- गिलोय पीलिया, यकृत तंतुमयता और अन्य जिगर से संबंधित रोगों में बहुत प्रभावी है।
- गिलोय तथा शतावरी का क्वाथ पीने से श्वेत प्रदर में फायदा होता है। गिलोय सत् को आंवले के रस के साथ लेने से नेत्र रोगों में आराम मिलता है।
- इसकी बेल को हल्के से छीलने पर नीचे हरा, मांसल भाग होता है। इसका काढ़ा बनाकर पीने से यह शरीर के त्रिदोषों को नष्ट कर देता है। त्रिदोषों का अर्थ हमारा शरीर कफ, वात और पित्त द्वारा संचालित होता है। पित्त का संतुलन गड़बड़ाने पर पीलिया, पेट के रोग जैसी कई परेशानियां सामने आती हैं। कफ का संतुलन बिगड़े तो सीने में जकड़न, बुखार आदि दिक्कतें आती हैं। वात अगर असंतुलित हो गया तो गैस, जोड़ों में दर्द, शरीर का टूटना, असमय बुढ़ापा जैसी परेशानियां आती हैं, गिलोय का काढ़ा इन विकारों में लाभकारी है।
- इसको सोंठ के साथ खाने से गठिया रोग ठीक हो जाता है।

गिलाय के तने

और तने में स्टार्च पाया जाता है। सोडियम सेलिसिलेट होने के कारण अधिक मात्रा में इसमें दर्द निवारक गुण पाए जाते हैं।

गिलोय की खेती

इसकी खेती के लिए रेतीली, दोमट, बलुई दोमट, हल्की चिकनी मृदा तथा अच्छी जल निकास वाली चिकनी मृदा उपयुक्त होती है। गिलोय की खेती इसके बीज एवं कलम दोनों से की जाती है। कलम से इसकी खेती ज्यादा सफलतापूर्वक की जाती है। गिलोय एक लता है, इसलिए इसकी वृद्धि अधिक होती है तथा इसको सहारे की आवश्यकता होती है। गिलोय के लिए नीम व आम सर्वोत्तम सहारा वृक्ष हैं। गिलोय की नर्सरी तैयार की जाती है और एक वर्ष के बाद नर्सरी में तैयार पौधों का रोपण किया जाना उचित रहता है। गिलोय के तने सर्वोत्तम औषधीय रूप में उपयोग में आते हैं।

इसके तने का उत्पादन लगभग 8-10 क्विंटल प्रति हैक्टर होता है। ताजे गिलोय में से गिलोय अर्क प्राप्त होता है। 10 कि.ग्रा. गिलोय के तने से एक से दो कि.ग्रा. तक के सत् में ग्लूकोसाइन एवं गिलोइन मुख्य तत्व पाए जाते हैं।

चूसने वाले आम की प्रमाणित किस्में

इंदिरा देवी*, **नव प्रेम सिंह*** और **सुमनजीत कौर***

आम (मेंगिफेरा इंडिका) को 'फलों का राजा' के रूप में जाना जाता है। यह भारत के फल उद्योग में अलग स्थान रखता है। आम इकलौता ऐसा फल है, जिसे कई तरह से इस्तेमाल किया जाता है जैसे-कच्चे फल की चटनी, अचार, अमचूर और आम पापड़ बनाने के लिए। पके फलों को खाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। यहां तक कि इसके बीज को स्टार्च और छिलके को पेक्टिन एवं एनार्डिका एसिड के स्रोतों के रूप में उपयोग किया जाता है। पंजाब में, आम की बागवानी मुख्य रूप से उपपर्वतीय क्षेत्रों तक ही सीमित है। ये क्षेत्र चूसने वाले आम की विविधता के लिए प्रसिद्ध हैं। इन क्षेत्रों में, पुराने आम के बागान मुख्य रूप से अंकुर उत्पत्ति से 19वीं और 20वीं शताब्दी के दौरान स्थानीय फल प्रेमियों द्वारा लगाए गए थे। इसके अलावा इसकी बागवानी कंडी इलाकों में भी सफलतापूर्वक की जाती है। पंजाब में आम की बागवानी का नीबू प्रजाति और अमरूद के बाद तीसरा स्थान है।

कंडी और नीम पहाड़ी इलाकों में पैदा होने वाले देसी आमों में कई तरह की विभिन्नताएं पाई जाती हैं। ये विविधताएं फल के आकार, रंग, जूस की मात्रा, गुठली की लंबाई, गूदा और रेशे के आकार पर होती हैं। 70 के दशक की शुरुआत में डा. महिंदर सिंह रंधावा, उप कुलपति, पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना ने इन प्राकृतिक विभिन्नताओं वाले देसी आमों को उपयोग में लाने और इनकी बागवानी करने के प्रयास किए। देसी आम की 60 से अधिक किस्में, जिनमें फल लंबे आकार के, छिलका कसा हुआ, रसदार गूदा, छोटा बीज, कम रेशे और छिलका हल्का लाल इत्यादि जैसे गुणों वाली प्रजातियों को अलग-अलग जगहों से लाकर पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, फल खोज केंद्र, गंगीआं (दसुआ) जिला होशियारपुर में लगाया गया था।

पंजाब कृषि विश्वविद्यालय और पंजाब बायोडायवर्सिटी बोर्ड, चंडीगढ़ द्वारा विलुप्त हो रही आम की किस्मों में विभिन्नता और इनकी बागवानी की संभावनाओं के लिए कंडी और नीम पहाड़ी इलाकों में एक संयुक्त सर्वेक्षण किया गया। इसके पीछे उद्देश्य था कि इन किस्मों की कुदरती तौर से उग रहे वातावरण में ही बागवानी की जा सके। इस सर्वेक्षण के दौरान आम की विभिन्न प्रजातियों को इनके बाहरी और अंदरूनी रासायनिक गुणों के अनुसार देसी नामों के साथ साझा किया गया। आम की कुछ दिलचस्प किस्मों को उनके स्थानीय नामों से जाना जाता है जैसे-अंडा दशहरी (स्वाद और सुगंध आम की लोकप्रिय किस्म 'दशहरी', की तरह लेकिन फल आकृति अंडे की तरह), लड्डू आम, गोला घासीपुर और बेर आम (फल बेर के आकार की तरह)। पंजाब में लंबे आकार के आम को 'छल्ली' कहा जाता है (फलों का आकार एक छोटे मक्के की तरह होने के कारण)। आम की सात प्रजातियों में (इनामी छल्ली, चोई सिंधुरी, घासीपुर दी छल्ली, लड्डू अंब, महंतां दी लालटेन, सिंदूरी चौसा) आकर्षक पीला रंग और छिलके के ऊपर वाली तरफ लाल रंग देखा गया है। चुनी हुई बाकी किस्मों में फलों का रंग पीले से हल्का पीला, गहरा क्रीमी, हरा, पालक की तरह हरा और गाढ़ा हरा पाया गया। पूरी तरह से रंगीन फलों को स्थानीय रूप से पसंद किया जाता है और उन्हें आडू आम तथा पेन्सिल आम कहा जाता है। इन प्रजातियों को चूसने के लिए पसंद किया जाता है। इनमें छिलका पतला, रस प्रचुर मात्रा, गूदा नरम और रेशेदार तथा ये फल अधिक कीमत पर बिकते हैं।

आम 'जीएन-1'

उन्नीसवीं शताब्दी में कप्तान मोंटोगोमरी द्वारा होशियारपुर जिला गजेटियर में बताया गया है कि बड़ी संख्या में आम की किस्में इस क्षेत्र में उगाई गईं थीं। इनमें शामिल हैं, **पंचपाया आम:** बड़ा फल, पांच तोले का, जो कि एक पाउंड के बराबर था; **खरबूजा:**

गंगीआं सिंदूरी (जीएन-19)

पेड़ मध्यम ऊंचाई का और फल आकार में बड़े (9.72 × 6.54 सें.मी.) होते हैं। फल का औसत वजन 188.0 ग्राम, आकार में अंडाकार आयताकार, बेसल साइनस अनुपस्थित और पीठ सपाट। पकने पर कंधों पर थोड़े से सिंदूरी ब्लश के साथ फलों का रंग पीला होता है। इसमें प्रचुर मात्रा में रस, सुगंध और बहुत अच्छे स्वाद के साथ मध्यम रेशे, गुठली मध्यम, मिठास 20.2 प्रतिशत होती है। यह देर से पकने वाली किस्म है और जुलाई के अंत में पक जाती है।

*पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, एम.एस. रंधावा फल खोज केंद्र, गंगीआं दसुआ, जिला होशियारपुर (पंजाब)

सिंदूरी समराली (जीएन-2)

एक वर्ष ज्यादा और दूसरे वर्ष कम फल देने वाली किस्म। फल मध्यम से थोड़ा बड़ा (7.01 × 6.77 सें.मी.), औसत वजन 123.0 ग्राम, अंडाकार, बीच वाला हिस्सा थोड़ा उभरा हुआ, फल पीले रंग का परन्तु ऊपर से सिंदूरी ब्लश वाला। साइनस अनुपस्थित और देखने में बहुत आकर्षक, उच्च मिठास वाला 25 प्रतिशत गुठली छोटी, आयताकार और रेशेदार। फल जुलाई के मध्य में पककर तैयार होता है।

फल औसत आकार का, अंदरूनी रंग एक खरबूजे की तरह माना जाता है; **कसुंबला:** छोटा फल, बाहरी रंग जैसे कुसुम के फूल की तरह) **बसंतिया:** छोटे फल, गूदा पीला **पेड़ा:** छोटा और बहुत मीठा, आकार और

जीएन-3

स्वाद पेड़ा मिठाई की तरह माना जाता है; **दिहलू:** बड़े फल, अंदर से दही जैसा और रेशेरहित; **मरबला:** बड़ा फल, मीठा, गुठली छोटी और इसको मुरब्बा बनाने में इस्तेमाल किया जाता है; **पथर:** फल का औसत आकार, वजन और छिलके की कठोरता पत्थर जैसी, लंबे समय तक खराब नहीं होता; **ललेर:** एक नारियल की तरह आकार, फल, बड़े और मीठे; **भदौरिया:** औसत आकार, भादो (सितंबर) के महीने में पकने वाला, अन्य आम खत्म होने के बाद; **संदुरिआ:** औसत आकार और रंग लाल सिन्दूर की तरह; **केसरी:** बड़े फल, रंग केसर की तरह; **केला:** लंबा फल केले की तरह, गुठली बड़े आकार की; **मिश्री:** बड़े फल, सबसे मीठे मिश्री की तरह; **जवैनिया:** बड़े फल अजवाइन की तरह खुशबू वाले; **शहातिआ:** बड़े फल, शहद की तरह मीठे; **गोरा:** बड़े और भूरे रंग का जैसे साफ किए गए कपास के गुच्छे की तरह।

उपरोक्त किस्में उच्चतम मूल्य प्राप्त करती हैं, विशेष रूप से भदौरिया बाजार में तब आता है, जब अन्य फल उपलब्ध नहीं होते हैं। अन्य किस्में जो कम प्रचलित थीं; **सरू:** छोटा फल, बहुत जल्दी खराब होने वाला; **हरड़:** छोटा सा हरड़ के फल की तरह; **दोहकी:** छोटा फल और स्वाद तारपीन से मिलता हुआ; **सफेदा:** फल छोटा और सफेद रंग का; **राड़ा:** आकार में छोटा और मीठा बहेड़ा के फल की तरह; **खाला:** औसत आकार और स्वाद में खट्टा; **काला:** औसत आकार, गहरे रंग की त्वचा पकने के बाद भी; **इलाइची:** छोटे फल, गुच्छों में लगने वाले और सुगंध इलायची की तरह; **दुधिया:** छोटे फल, अंदरूनी रंग सफेद दूध की तरह; **छल्ली:** मक्के की तरह लंबे फल; **काकड़ा:** बड़े लंबे फल, अज्ञात नाम से उत्पत्ति।

पिछले कुछ वर्षों से आम के बाग अनुपजाऊ या कम फायदा होने की वजह से काटे गए और काटे जा रहे हैं। पंजाब कृषि विश्वविद्यालय ने आम की अच्छी पैदावार और गुणवत्ता वाली चूसने वाली 8 किस्मों जैसे-जीएन-1 से लेके जीएन-7 और गंगीआं सिंदूरी की बागवानी की सिफारिश की है। इन प्रजातियों के विशेष गुण इस तरह हैं:

गुरमेल दा अम्ब (जीएन-1)

पेड़ बड़े, फैले हुए गुंबद के आकार का, एक वर्ष ज्यादा और दूसरे वर्ष कम फल देने वाला होता है। इसका फल

पंजाब ब्यूटी (जीएन-6)

पेड़ छोटा, फैला हुआ और एक वर्ष छोड़ के फल देने वाला, फल बड़ा (208.0 ग्राम), अत्यधिक रंग वाला, गूदा 53.5 प्रतिशत, फल का आकार तिरछा, पृष्ठीय और उदर कंधे झुके हुए, पीछे की ओर मुड़ा हुआ, चोंच और साइनस प्रमुख। बेसल छोर पर लाल ब्लश के साथ रंग पीला, त्वचा ग्रंथियां प्रमुख, गूदा पीले रंग का, रसदार, मिठास 17 प्रतिशत और खटास 0.83 प्रतिशत, गुठली आयताकार, मध्यम और अत्यधिक रेशेदार होती है। यह किस्म जुलाई के मध्य में पकती है।

मध्यम आकार का (5.57×4.67 सें.मी.), अंडाकार, बेसल साइनस उथला, पीठ वाला हिस्सा थोड़ा उभरा हुआ। ढलानदार होता है। चोंच और सिरा तीखा, छिलका नरम, पकने के समय रंग हरा, गूदा संतरी रंग का व 55.4 प्रतिशत, रस पतला, मिठास 19 प्रतिशत और खटास 0.38 प्रतिशत,

जीएन-5

जीएन-7

गुठली छोटी, अंडाकार और रेशेदार होती है। फल जुलाई के दूसरे सप्ताह के दौरान पक जाता है।

कुकिआं दी छल्ली (जीएन-3)

इसका वृक्ष बड़े आकार का और फैलावदार, लगभग प्रत्येक वर्ष फल देने वाला परंतु दूसरे वर्ष ज्यादा फल देने वाला होता है। जुलाई के दूसरे सप्ताह में पकने वाला। फल मध्यम आकार के (8.93 × 5.85 सें.मी.), आकार में अंडाकार, बेसल साइनस अनुपस्थित, चोंच सिरा नुकीला, छिलका मोटा और नरम होता है। फलों का रंग पालक हरा, खाने योग्य हिस्सा 51 प्रतिशत, गूदा पीला, रस पतला, मिठास 22 प्रतिशत और खटास 0.70 प्रतिशत होती है। गुठली मध्यम आकार की आयताकार और किनारों पर रेशेदार।

हरियाणे दी कंघी (जीएन-5)

पेड़ मध्यम आकार का और फैलावदार, एक वर्ष छोड़ के फल देने वाला, फल मध्यम आकार (7.47 × 6.21 सें.मी.), वजन 124.1 ग्राम, अंडाकार, बेसल साइनस उथला, चोंच नुकीली, पृष्ठीय कंधे टेढ़े और उदर प्रमुख, खाने योग्य भाग 58 प्रतिशत, छिलका पीला हरे रंग का, चमकीले लाल ब्लश के साथ, रस थोड़ा सा गाढ़ा, मिठास 22 प्रतिशत, गुठली मध्यम आकार की और रेशेरहित होती है। यह देर से पकने वाली किस्म है और अगस्त के प्रथम सप्ताह में पकती है।

मलिया वाली छल्ली (जीएन-7)

पेड़ मध्यम ऊंचाई का और प्रत्येक वर्ष औसत उपज देने वाला, फल का आकार मध्यम, औसत वजन 126 ग्राम, आकार में लंबा, बेसल साइनस और पृष्ठीय शोल्डर अनुपस्थित, वेंट्रल शोल्डर स्लोपिंग, साइनस उथला, शीर्ष गोल, छिलका नरम, गूदा नारंगी रंग का, प्रचुर मात्रा में रस, मिठास 19 प्रतिशत तथा खटास 0.40 प्रतिशत। गुठली बड़ी, आयताकार व रेशेदार और फल जुलाई के मध्य में पक जाते हैं।

आम के पौधे लगाने का समय, विधि और देखरेख

आम का पौधा वर्ष में दो बार लगाया जा सकता है। फरवरी-मार्च और अगस्त-सितंबर, पौधे लगाने के लिए सबसे उपयुक्त समय होता है। आम को सामान्यत: 9 × 9 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है, लेकिन चूसने वाली किस्मों के लिए 10 × 10 मीटर की दूरी उपयुक्त होती है। पौधे लगाने के लिए गड्ढा (1×1×1 मीटर) लगभग एक महीने पहले तैयार कर लें। फिर गड्ढे को ऊपर वाली मृदा को बराबर भागों में मिलाकर दोबारा जमीन से थोड़ा ऊंचा भर दें। प्रत्येक गड्ढे में 15 मि.ली. क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. 2 कि.ग्रा. मृदा में मिलाकर डालें। पौधा लगाने से कुछ दिनों पहले गड्ढे में पानी देना चाहिए, ताकि मृदा अच्छी तरह से बैठ जाए। पौधों को गड्ढों के ठीक मध्य में प्लांटिंग बोर्ड की सहायता से उतनी ही ऊंचाई पर लगाएं जितना कि वह पौधशाला में था। पौधरोपण के बाद इसके आसपास की मृदा पैरों से दबा दें, ताकि पौधे की मृदा जड़ों के साथ ठीक से बैठ जाए। पौधा लगाने के बाद सिंचाई अवश्य करें। छोटे पौधों को सहारा देने के लिए इस तरह से स्टेक (डण्डे) लगाएं, ताकि जड़ों को क्षति न पहुंचे और उन्हें तने के साथ बांध दें। बहुत ज्यादा गर्मी और ठण्ड से बचाने के लिए पौधों को जरूर ढक देना चाहिए। नए लगाए पौधों का सर्वेक्षण लगातार करते रहें, ताकि पानी समय पर मिले और कीट एवं रोगों से पौधों को बचाया जा सके। आम के छोटे पौधों को पाले से बचाने के लिए घास या सरकण्डों के डंठल का छप्पर बनाएं। ध्यान रखें कि दक्षिण-पूर्व दिशा को खुला रखें, ताकि पौधों को धूप मिलती रहे। आम की नर्सरी को सर्दियों में कोहरे से बचाने के लिए नायलॉन की छायादार जाली से ढक देना चाहिए। नए लगाए पौधों को खाद और पानी समय पर लगाएं और पौधों को स्वस्थ रखें।

■

बिजरोर दी बड (जीएन-4)

पेड़ बड़े आकार का, टहनियां झुकी हुईं और प्रत्येक वर्ष फल देने वाली किस्म है। फल बड़े आकार के (9.98 × 5.51 सें.मी.) और वजन 187 ग्राम, गूदा 60.5 प्रतिशत, अंडाकार, प्रमुख उदर कंधे, बेसल साइनस गहरी, चोंच तीखी। फलों का रंग पीले हरे रंग का और जुलाई के तीसरे सप्ताह में तैयार हो जाते हैं। रस प्रचुर मात्रा में, थोड़ा गाढ़ा, मिठास 21 प्रतिशत और खटास 0.57 प्रतिशत होती है। गुठली बड़ी, आकार में आयताकार, औसत वजन 36.6 ग्राम और कम रेशेदार।

निवेदन

लेखक बंधु *फलफूल* पत्रिका के लिए अपने लेख और संबंधित फोटो, कवरिंग लैटर के साथ सिर्फ ई-मेल पर ही भेजें। ध्यान रखें कि फोटो जेपीजे फॉर्मेट में और उच्च रेज्योल्यूशन की हों। लेख में अधिकतम 1200 शब्दों की संख्या रखने का प्रयास करें। इसके अतिरिक्त सुझाव और प्रतिक्रियाएं भी ई-मेल के माध्यम से भेज सकते हैं। भेजने के लिए कृपया कृतिदेव 010 टाइप फेस का प्रयोग करें।

हमारा ई-मेल है :

phalphul@gmail.com

—संपादक

खाद्य कोटिंग से फल भंडारण गुणवत्ता में वृद्धि

अर्चना महापात्र, मनोज कुमार महावर, ज्योति ढाकणे-लाड, शर्मिला पाटिल और **अशोक कुमार भारीमल**

फल और सब्जियां जल्दी खराब होने वाले कृषि उत्पाद हैं। इनमें 80-90 प्रतिशत तक पानी होता है। ताजे फल और सब्जियों की गुणवत्ता व मात्रा में अधिक नुकसान उपज तथा उपयोग के दौरान होता है। उपज के बाद, फलों में ऑक्सीजन की खपत और कार्बनडाइऑक्साइड उत्पादन के बीच गैसीय संतुलन बदल जाता है। गैस हस्तांतरण दरों में वृद्धि से मेटबॉलिज्म दर की हानि होती है और अंततः फल परिपक्व होते हैं। गैस अंतरण दर प्रजाति, परिपक्वता जैसे-आंतरिक कारक और वायुमंडलीय रचना (ऑक्सीजन, कार्बनडाइऑक्साइड और एथिलीन अनुपात), तापमान तथा अन्य बाहरी कारकों पर निर्भर करती है। बागवानी फसलों का कटाई उपरान्त का शेल्फ जीवन उनकी शुष्कता, परिपक्वता और जीर्णता की दर में कमी के साथ-साथ सूक्ष्मजीव वृद्धि पर निर्भर करता है।

नियंत्रित वातावरण भंडारण और संशोधित वातावरण भंडारण जैसी तकनीकों का उपयोग गुणवत्ता परिवर्तन तथा नुकसान को कम करके फलों को संरक्षित करने के लिए किया जाता है। खाद्य कोटिंग, प्राकृतिक सुरक्षात्मक कोटिंग के लिए या इसके प्रतिस्थापन के रूप में उत्पाद की सतह पर निहित खाद्य सामग्री की पतली परतें हैं, जिन्हें डुबोकर, छिड़काव या ब्रश करके फल की सतह पर लगाया जाता है। खाद्य कोटिंग नमी और विलेय प्रवास, गैस विनिमय, श्वसन दर तथा ऑक्सीडेटिव प्रतिक्रिया दर को कम करने शारीरिक विकारों को कम करके फल और सब्जियों के शेल्फ जीवन का विस्तार करते हैं। खाद्य कोटिंग एंटीब्राउनिंग एजेंट, रंग, स्वाद, पोषक तत्व और रोगाणुरोधी यौगिकों जैसे सक्रिय अवयवों के संभावित वाहक के रूप में कार्य कर सकते हैं। इससे शेल्फ जीवन को बढ़ाया जा सकता है और उत्पाद की सतह पर माइक्रोबियल विकास को कम किया जा सकता है। इसके अलावा खाद्य कोटिंग एक प्राथमिक पैकेजिंग सामग्री के रूप में कार्य करता है और बायोडिग्रेडेबल होने के साथ, सिंथेटिक पैकेजिंग से होने वाले अपशिष्ट को कम करता है।

खाद्य कोटिंग संरचना

खाद्य कोटिंग निर्माण के लिए फिल्म बनाने की गुणवत्ता वाले घटकों को पानी या एल्कोहल के एक विलायक में घोल दिया जाता है और कम मात्रा में प्लास्टिसाइजर मिलाया जाता है। सक्रिय तत्व खनिज, विटामिन, रोगाणुरोधी एजेंट, रंग, स्वाद, एंटीऑक्सीडेंट आदि भी मिश्रित किया जाता है और पी-एच को समायोजित करके या गर्म करके एक समान फैलाव तैयार किया जाता है। कोटिंग का प्राथमिक घटक आमतौर पर पॉलीसेकेराइड, प्रोटीन, लिपिड या इनमें से एक संयोजन होता है।

सब्जियों की शेल्फ लाइफ में खाद्य कोटिंग से सुधार

पॉलीसेकेराइड प्राकृतिक पॉलीमर है, जो ज्यादातर पशुओं, पौधों और मरीन से निकाले जाते हैं तथा कोटिंग के लिए उपयोग किए जाते हैं। इनमें उत्कृष्ट गैस अवरोधक क्षमता है। हाइड्रोफिलिक प्रकृति के कारण, इनमें नमी अवरोधक गुण नहीं होते हैं। कोटिंग के लिए प्रमुख पॉलीसेकेराइड में सेल्यूलोज, स्टार्च, पेक्टिन, चिटोसन, एल्गिनेट्स आदि शामिल हैं। प्रोटीन आधारित खाद्य कोटिंग आमतौर पर हाइड्रोफिलिक होते हैं। ये नमी को अवशोषित करते हैं और तापमान तथा सापेक्षिक आर्द्रता द्वारा प्रभावित होते हैं। अमीनो अम्ल के पॉलीमर होने के नाते, प्रोटीन में साइड चेन रासायनिक संशोधन के लिए ये उपयुक्त हैं, जिससे पैकेजिंग सामग्री को आवश्यक गुण प्रदान करने में सुविधा होती है। प्रोटीन आधारित फिल्मों को एसिड, बेस, ऊष्मा द्वारा प्रोटीन के विकृतीकरण द्वारा विस्तारित संरचना के रूप में निर्मित किया जाता है। आयोनिक और हाइड्रोजन बॉन्ड आधारित फिल्मों में उत्कृष्ट गैस अवरोधक क्षमता होती है, लेकिन नमी की आशंका होती है। कम सापेक्ष आर्द्रता

फल खराब होने से बचाती है खाद्य कोटिंग

भाकृअनुप-केंद्रीय कपास प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान, मुंबई-400019 (महाराष्ट्र)

खाद्य कोटिंग के लाभ

खाद्य कोटिंग के गुण कण आकार और रासायनिक संरचना के साथ आण्विक संरचना पर निर्भर करते हैं। एक आदर्श कोटिंग में निम्न विशेषताओं का होना जरूरी है:

- गैसीय विनिमय इष्टतम होना चाहिए।
- कोटिंग फिल्म में पानी का प्रतिरोध होना चाहिए।
- जल वाष्प पारगम्यता कम होनी चाहिए।
- उत्पाद को समान रूप से कवर करना चाहिए।
- इमल्सिफाइंग विशिष्टता होनी चाहिए, ताकि सक्रिय तत्व को शामिल करके किफायती बनाया जा सके।

फलों को टिकाऊ बनाने से अधिक कमाई

की स्थिति में, ऐसी फिल्में अच्छे ऑक्सीजन अवरोध के रूप में कार्य करती हैं और उपज की गुणवत्ता को संरक्षित करने में मदद करती हैं। खाद्य कोटिंग और फिल्मों में प्रयुक्त प्रोटीन, दोनों पशु आधारित (जिलेटिन, मट्ठा, कैसिइन, कोलेजन) और वनस्पति आधारित (सोया प्रोटीन, जीन, लस) हैं। लिपिड, कोटिंग में सबसे मुख्य रूप से इस्तेमाल किया जाने वाला पदार्थ है, जिसका उपयोग लंबे समय से किया जा रहा है। इनका उपयोग फलों और कन्फेक्शनरी उत्पादों के लेप के लिए किया जाता है। लिपिड आधारित कोटिंग हाइड्रोफोबिसिटी और कम श्वसन के कारण अच्छी नमी अवरोधक है। इससे उत्पाद का शेल्फ जीवन बढ़ता है। वे फल को चमक प्रदान करते हैं। कोटिंग के रूप में उपयोग किए जाने वाले लिपिड में वैक्स (पैराफिन, कार्नुबा, कैंडेलिला और मधुमक्खी मोम), फैटी एसिड, मोनोग्लिसराइड्स, रेजिन आदि शामिल हैं।

कोटिंग की प्रभावकारिता को बढ़ाने के लिए इसमें नैनोटेक्नोलॉजी के उपयोग से आवश्यक तेल, विटामिन, पॉलीफेनोल्स, फ्लेवोनोइड्स, एंजाइम, एंटी-ब्राउनिंग एजेंट जैसे सक्रिय एजेंट शामिल किए जा सकते हैं। छोटे आकार के कारण, ज्यादा सतह का क्षेत्र नैनो पार्टिकल्स को सक्रिय और स्थिर बनाता है। इससे उनके पास बेहतर अवरोधक, यांत्रिक, ऑप्टीकल गुण हैं। इनका उपयोग नैनोइमल्शन, नैनोट्यूब, नैनोकॉम्पोसिट, सॉलिड लिपिड नैनोपार्टिकल्स या नैनोफाइबर के रूप में कोटिंग मैट्रिक्स में किया जा सकता है।

खाद्य कोटिंग के उपयोग से फल की सतह पर चमक आती है और ये फलों को ठोस रखते हैं। भंडारण के दौरान इनके वजन में कमी नहीं होती। श्वसन दर और एथिलीन उत्पादन दर धीमी हो जाती है। इसलिए उत्पाद के पकने और खराब होने में देरी होती है। यह ठंड से लगने वाली क्षति और निर्वहन क्षति से भी फलों को बचाता है। इसके अलावा, गैस परिवहन के खिलाफ अवरोधक के रूप में और विटामिन, पोषक तत्व, एंटीऑक्सीडेंट, एंटीऑक्सीडेंट एजेंट, एंटीमाइक्रोबियल आदि के वाहक के रूप में कार्य करता है। यह फलों और सब्जियों के लिए प्राथमिक पैकेजिंग के रूप में काम करता है। इसके अलावा सिंथेटिक पैकेजिंग सामग्री के उपयोग को कम करने में मदद करता है। खाद्य कोटिंग का मुख्य लाभ यह है कि इनका भोजन के साथ-साथ सेवन किया जा सकता है और ये अतिरिक्त पोषक तत्व प्रदान कर सकते हैं। इसमें एंटीमाइक्रोबियल को बढ़ाने वाली गुणवत्ता शामिल हो सकती है।

फलों का व्यावसायिक महत्व बढ़ाएं कोटिंग से

विकासशील देशों में फलों और सब्जियों की कटाई के उपरान्त लगभग 40 प्रतिशत उपज का नुकसान होता है। यह नुकसान प्रत्येक क्षेत्र और उसके आर्थिक संसाधनों में मौजूद प्रबंधन की स्थितियों पर निर्भर करता है। फिल्म और कोटिंग खाद्य गुणवत्ता, शेल्फ जीवन, सुरक्षा और कार्यक्षमता में सुधार के लिए एक आशाजनक प्रणाली है। उनका उपयोग व्यक्तिगत पैकेजिंग सामग्री, खाद्य कोटिंग सामग्री और सक्रिय संघटक वाहक के रूप में और खाद्य पदार्थों के भीतर विषम अवयवों को अलग करने के लिए किया जा सकता है। फिल्म और कोटिंग की दक्षता और कार्यात्मक गुण फिल्म बनाने वाली सामग्री की अंतर्निहित विशेषताओं पर अत्यधिक निर्भर हैं। इन तकनीकों का व्यावसायिक अनुकूलन देश में खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए आर्थिक और व्यवहार्य तरीके के रूप में कार्य कर सकता है।

आधुनिक तकनीक से सब्जी पौध उत्पादन

आर.एन. शर्मा*; **एस.के. बैरवा**** और **बी.एल. कुम्हार*****

टमाटर, बैंगन, शिमला मिर्च, मिर्च, फूलगोभी, बंदगोभी, ब्रोकली, गांठगोभी, चाइनीज बंदगोभी, प्याज आदि पौध से उगाई जाने वाली प्रमुख सब्जियां हैं। अच्छी फसल उगाने के लिए पौध का स्वस्थ होना आवश्यक है। ऐसे में सब्जियों के पौध उत्पादन के लिए विभिन्न प्रकार की नई और उन्नत तकनीकों का विकास किया गया है। इन तकनीकों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि किसान संरक्षित वातावरण में सब्जियों की स्वस्थ पौध तैयार कर सकते हैं। इनमें खरपतवार निकालने तथा अन्य कृषि कार्यों को संपन्न करने में सुविधा रहती है। आधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग कर किसान अधिक लाभ कमा सकते हैं।

सब्जियों की खेती में पौधशाला (नर्सरी) में पौध तैयार करना एक कला है। इसे सुचारू रूप से तैयार करने के लिए तकनीकी जानकारी का होना आवश्यक है। एक सफल किसान का प्रयास रहता है कि कम से कम लागत में अधिक से अधिक उत्पाद प्राप्त कर सके। सामान्य मौसम की दशाओं में सब्जियों का खुले वातावरण में साधारण देखभाल के साथ पौध उत्पादन किया जाना संभव है। प्रतिकूल मौसम में खुले वातावरण में सब्जियों की पौधशाला उगाने पर पौधा के नष्ट होने की आशंका रहती है। इसके लिए सब्जी-उत्पादन में आधुनिक तकनीक के रूप में प्रयोग में ली गई विधियों को उच्च तकनीक या हाईटेक कहते हैं। ये तकनीकें आधुनिक मौसम और वातावरण पर कम निर्भरता वाली एवं अधिक लाभ देने वाली हैं। सब्जियों की पौध को साधारण और असाधारण मौसम की दशाओं में सफलतापूर्वक उगाने के लिए अब उन्नत वैज्ञानिक तकनीकें उपलब्ध हैं, जिन्हें अपनाकर सब्जियों की व्यावसायिक खेती करके किसान अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं।

हरितगृह

इस विधि द्वारा हरितगृह (ग्रीनहाउस) की पौधशाला में प्रो ट्रे में पौध तैयार की जाती है। ग्रीनहाउस में विभिन्न प्रकार के उत्पादों-कपड़ा, जालीनुमा अलग-अलग रंग का जाल, कांच आदि का उपयोग लोहे के फ्रेमों को ढकने के लिए किया जाता है। हरितगृह में 40 मेश का कीट अवरोधी नायलॉन नेट लगाकर छत को प्लास्टिक से ढका जाता है। इस नायलॉन नेट के कारण रसचूसक कीट जैसे-सफेद मक्खी, एफिड (माहूं), जैसिड, थ्रिप्स आदि हरितगृह में प्रवेश नहीं कर सकते हैं, जिसके कारण विषाणु रोगों से भी सुरक्षा होती है। ग्रीनहाउस में दो दरवाजे लगाने चाहिए तथा दोनों दरवाजों के बीच कुछ स्थान खाली होना चाहिए। पहला दरवाजा खोलने के बाद अन्दर घुसकर दरवाजा बंद करने के बाद ही दूसरा दरवाजा खोलना चाहिए, ताकि दरवाजों के द्वारा भी कीटों का प्रवेश पूर्ण रूप से रुक सके। हरितगृह में आवश्यकतानुसार 50-75 प्रतिशत छाया करने वाले शेडनेट का उपयोग किया जाता है। इसे गर्मियों में दिन के समय फैलाकर बाहर से आने वाली अत्यधिक धूप को रोककर अन्दर 50-75 प्रतिशत तक छाया की जा सकती है। सर्दी के मौसम में इसे दिन में खुला रखा जा सकता है। सायंकाल (4-5 बजे के बाद) में इसे बंद कर देना चाहिए, ताकि दिन के समय हरितगृह के अंदर अर्जित गर्मी को रात के समय उपयोग करके तापमान को संतुलित किया जा सके। छाया करने वाले

*आचार्य (प्रसार शिक्षा) एवं उपनिदेशक अनुसंधान एवं विपणन, ***सहायक आचार्य (पादप प्रजनन एवं आनुवंशिक) एवं सहायक निदेशक (अनुसंधान), श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर (राजस्थान); **सहायक आचार्य (उद्यान विज्ञान), उद्यान विभाग, एस.के.एन. कृषि महाविद्यालय, जोबनेर, जयपुर (राजस्थान)

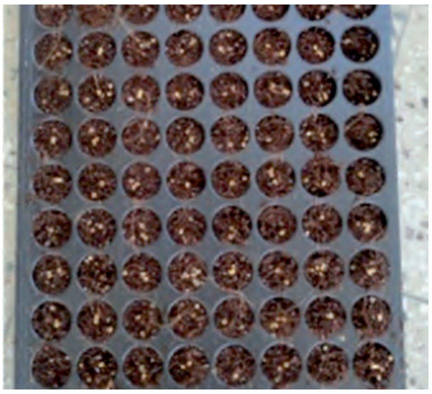

प्रो-ट्रे में बीज की बुआई

नेट को हाथ से या मशीनों द्वारा बंद किया जाता है। लगभग 500 वर्ग मीटर के क्षेत्रफल में हरितगृह में लगभग 2-2.5 लाख सब्जियों की पौध तैयार कर अपनी आय को दोगुना कर सकते हैं।

माध्यम

प्रो-ट्रे में कोकोपीट, परलाइट व वर्मीकुलाइट 3:1:1 अनुपात का मिश्रण (आयतन के आधार पर) तैयार करके भरा जाता है। प्लास्टिक की खानेदार ट्रे के प्रत्येक खाने में एक ही बीज बोया जाता है। इसके बाद बीज के ऊपर माध्यम मिश्रण को पतली परत के रूप में डालते हैं। सर्दी में बीज बोने के बाद ट्रे को अंकुरण कक्ष में रखा जाता है, ताकि बीजों का अंकुरण जल्दी व अधिक हो सके। अंकुरण के बाद सभी प्रो-ट्रे हरितगृह में बने फर्श, जमीन से उठी हुई क्यारियों या लोहे के बने प्लेटफार्म आदि पर या ईंटों से बने फर्श पर रखते हैं। उपरोक्त माध्यमों में से कोकोपीट को नारियल के फलों की जटा में उपस्थित रेशों को गलाकर बनाया जाता है। यह जड़ों की बढ़वार के लिए माध्यम का कार्य करता है। वर्मीकुलाइट माइका चट्टानों के अत्यधिक तापमान पर गर्मी के फलस्वरूप फैलाव से बनता है। यह एक प्रकार का खनिज होता है। इसमें मैग्नीशियम व पोटेशियम लवण आंशिक मात्रा में होते हैं, जो माध्यम में उचित नमी बनाये रखने का काम करता है। परलाइट ज्वालामुखी फटने से विकसित चट्टानों से निकाले गये पदार्थ से विकसित हुआ है। यह माध्यम भी उचित जल निकास व माध्यमों के मिश्रण के बीच उचित हवा उपलब्ध करवाने में सहायता करता है। यह सफेद रंग का बहुत हल्का माध्यम है, जिसका एक भाग (आयतन के अनुसार) मिश्रण में मिलाया जाता है। इसके अलावा प्रो-ट्रे में पौध तैयार करने के लिए केंचुए की खाद, कोकोपीट आदि का भी उपयोग हो रहा है। माध्यम के मिश्रण को प्रो-ट्रे में भरने से पूर्व अच्छी तरह से रोग एवं कीटाणु मुक्त करना चाहिए, ताकि पौध गलन रोगों से बचाव हो सके।

सर्दी के मौसम में पौध की प्रारंभिक अवस्था में 50-70 पीपीएम (50-70 मि.ग्रा. प्रति लीटर), नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश को मिलाकर बने घोल को दिया जाता है। इसके बाद में यह मात्रा 150 पी.पी.एम. प्रति सप्ताह तीन से चार बार घोल बनाकर दें। उर्वरक व पानी बूंद-बूंद सिंचाई प्रणाली द्वारा दिया जाता है, जिससे उर्वरक व पानी की मात्रा समान रूप से पौध को मिले। इससे पौध की बढ़वार अच्छी व गुणवत्तापूर्ण होती है। इस विधि द्वारा पौध तैयार होने में लगभग 25-30 दिन लगते हैं। पौध को माध्यम सहित निकालकर खेत में रोपाई सायंकाल के समय कर, झारे की सहायता से हल्की सिंचाई करें। पौध को एक स्थान से दूसरे स्थान तक माध्यम सहित ले जाने के लिए आसानी से पैकिंग करके ले जाया जा सकता है। इस विधि को अपनाकर कद्दूवर्गीय सब्जियों की पौध 15 से 18 दिनों में तैयार कर सकते हैं। कीट व्याधियों की समस्या होने पर रसचूषक कीट के प्रकोप से बचाव के लिए मैलाथियॉन 50 ई.सी. नामक कीटनाशी दवा 1.25 मि.ली. प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें। जड़ एवं तनागलन आदि रोगों से बचाव के लिए प्रो-ट्रे के माध्यम को कार्बेडाजिम नामक फफूंदनाशी दवा 1.5 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल से उपचारित या छिड़काव अवश्य कर लें।

कोको-पीट

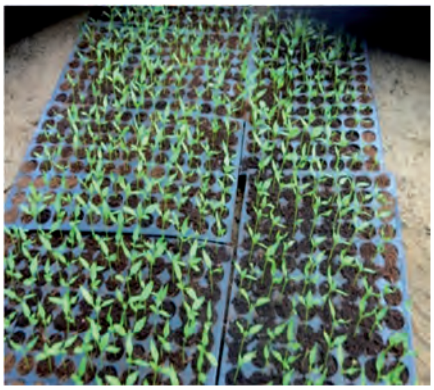

मिर्च की प्रो-ट्रे में तैयार पौध

ट्रे पौध उत्पादन प्रौद्योगिकी का आर्थिक विश्लेषण

500 वर्ग मीटर क्षेत्र वाले साधारण हरितगृह में एक बार में 2.0 लाख तक विभिन्न प्रकार की सब्जियों की पौध तैयार करना संभव है। इससे वर्षभर में 6 से 8 किश्तों में पौध तैयार करना भी संभव है। इस प्रकार एक वर्ष में हरितगृह में 15 से 20 लाख पौध तैयार की जा सकती है। पौध तैयार करने में 30 से 35 पैसे की सम्पूर्ण लागत (जिसमें बीज की कीमत सम्मिलित नहीं है) आती है। यदि उस पौध को उत्पादक 50 पैसे में बेचता है, तो उसे वर्षभर में 3.0 से 4.0 लाख रुपये का लाभ अर्जित हो सकता है। पौध उत्पादन की यह विधि एक लघु उद्योग के रूप में अपनाने से बेरोजगार युवकों को स्वरोजगार का अवसर मिलेगा। इसके साथ ही साथ दो से तीन लोगों को वर्षभर रोजगार देने में

पौध उगाने के लिए प्लास्टिक ट्रे (प्रो-ट्रे)

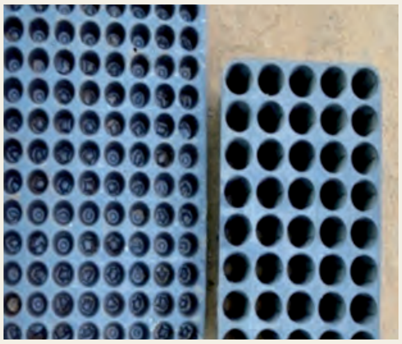

सब्जियों की पौध सामान्यत: दो आकार की प्लास्टिक प्रो-ट्रे में तैयार की जाती है। छोटे आकार की प्रो-ट्रे में खानों का आकार 1.0 इंच (10 घन सें.मी.) व खानों की संख्या कुल 98 से 104 तक होती है। इसमें शिमला मिर्च, टमाटर, बैंगन, फूलगोभी, पत्तागोभी, गांठगोभी, ब्रोकली, मिर्च व टी.पी.एस., आलू की पौध तैयार की जाती है। दूसरी प्लास्टिक प्रो-ट्रे में खानों का आकार 1.5 इंच (20 घन सें.मी.) एवं खानों की कुल संख्या 50 होती हैं। इसमें खीरा, खरबूजा, तरबूज, चप्पन कद्दू आदि की पौध तैयार की जाती है। पहले इन प्रो-ट्रे को थर्मोकोल के ढांचे में रखा जाता है, जो कि ट्रे के खानों के आकार के अनुसार ही होती हैं। आजकल भारतीय बाजारों में प्लास्टिक प्रो-ट्रे आसानी से मिल जाती है, जिनका उपयोग पौध उगाने में किया जाता है।

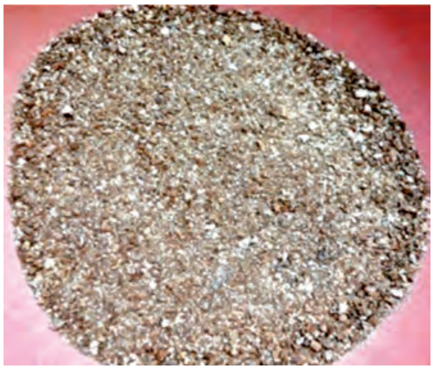

वर्मीक्यूलाइट

सक्षम हो सकेंगे। रोजगार के इस तरीके से पौध उत्पादन कर शिक्षित नवयुवक सब्जी उत्पादन व बीज उत्पादन को एक नई दिशा दें सकते हैं।

कम लागत वाले शेड नेट हाउस में सब्जियों की पौध तैयार करना

सब्जियों की स्वस्थ (विषाणु रोग रहित) व बेमौसमी पौध को विभिन्न प्रकार की अलग-अलग लागत वाली संरक्षित संरचनाओं में भी सफलतापूर्वक तैयार किया जा सकता है। इसके लिए कृषक बरसात के मौसम में जी.आई. पाइप, जिनका व्यास 2 इंच का हो, को अर्द्ध गोलाकार में मोड़कर उन्हें जमीन में सीमेन्ट, कंक्रीट की सहायता से (40 से 50 मेश आकार) से ढक लेते हैं। यह धूपरोधी होनी चाहिए। इस प्रकार 50 वर्ग मीटर के शेड नेटहाउस बनाने में 6 जी.आई. पाईप व 100 वर्ग मीटर नेट लगेगा, जिसकी कुल कीमत लगभग 5000 से 5500 रुपये होगी। इस प्रकार सब्जी उत्पादक विषाणु रोगरहित एवं स्वस्थ पौध तैयार कर सकते हैं। शेड नेटहाउस के अंदर क्यारियां बनाकर उनमें भी पौध तैयार की जा सकती है। इसमें मृदाजनित रोगों की भी रोकथाम की जा सकती है। खेत में विषाणु रोग से बचाव संभव नहीं है। पौधे को प्लास्टिक प्रो-ट्रे में मृदारहित माध्यम में तैयार किया जा सकता है। मृदारहित माध्यम में पौध

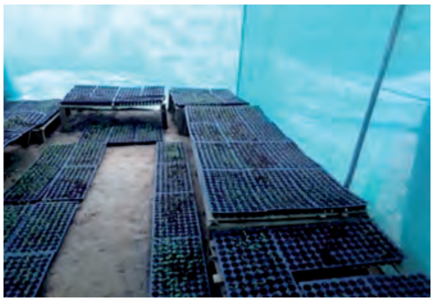

शेड नेट हाउस में

जड़ों का विकसित पिंड

तैयार करने के लिए प्लास्टिक प्रो-ट्रे का उपयोग किया जाता है। इसमें यहां तक कि कद्दूवर्गीय सब्जियों की पौध को भी तैयार कर सकते हैं, जिसे परम्परागत विधि द्वारा तैयार करना संभव नहीं है।

परम्परागत विधि द्वारा अन्य सब्जियों की स्वस्थ पौध तैयार करने के लिए पौधशाला की मृदा को फार्मेल्डिहाइड के घोल (0.1 प्रतिशत) द्वारा कीटाणुरहित किया जा सकता है। सर्दी के दिनों में पौध कम समय में वातावरण की प्रतिकूल परिस्थितियों में भी कम लागत वाले पॉलीहाउस में पौध तैयार की जाती है। इसमें नेटहाउस की तरह ही जी.आई. पाइपों का ढांचा तैयार करके ऊपर से ढकने के लिए 180 से 200 माइक्रॉन की पॉलीथीन, जो सूर्य के प्रकाश व तापमान से प्रभावित नहीं हो, का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार फ्रेम को ऊपर से ढककर कम लागत का पॉलीहाउस तैयार किया जा सकता है। पॉलीहाउस में सर्दी के दिनों में पौध को दिसम्बर से जनवरी में ही तैयार कर लिया जाता है। इससे यह परम्परागत विधि की अपेक्षा पहले तैयार हो जाती है तथा उन्हें फरवरी में खेत में रोपित करके, सब्जी उत्पादक अपने उत्पाद को 30 से 40 दिन अगेती पैदा कर बाजार में बेचकर अधिक लाभ कमा सकते हैं। ठीक इसी प्रकार यदि सब्जियों की पौध को मई या जून में तैयार करना है, खासकर फूलगोभी की, तो इस कीट अवरोधी नेट के ऊपर 50-75 प्रतिशत छाया करने वाले नेट ढककर सफलतापूर्वक तैयार किया जा सकता है। इस समय हमारा उद्देश्य तापमान तथा प्रकाश की तीव्रता को कम करना होता है। इसके लिए काले रंग का छाया करने वाला नेट ज्यादा उपयोगी रहता है। छाया करने वाले नेट को मई, जून, जुलाई तथा अगस्त में ही उपयोग में लिया जा सकता है, बाद में इसे हटा लिया जाता है।

लाभ

- पौध जल्दी समय रहते 20 से 25 दिनों में तैयार की जा सकती है।
- सब्जी की पौध वर्षभर में तैयार की जा सकती है। खासकर मौसम से पहले फसल उगाने के लिए ताकि बेमौसमी उत्पादन द्वारा अधिक लाभ कमाया जा सके।
- कद्दूवर्गीय सब्जियों की पौध को भी इस विधि द्वारा सरलतापूर्वक तैयार किया जाता है, जो परंपरागत विधि द्वारा तैयार करना संभव नहीं होता है।
- बीज की मात्रा को भी काफी कम (40-60 प्रतिशत) किया जा सकता है। इस विधि द्वारा प्रत्येक खाने में 1-2 बीज बोया जाता है।
- पौध को मृदाजनित रोगों, कीटाणुओं एवं विषाणु रोगों से बचाया जा सकता है। खेत में विषाणु रोगों का फैलाव का एक कारण संक्रमित पौध भी होता है।
- जब पौध बाहर पौधशाला में तैयार की जाती है, तो पौध रोपण के समय जड़ों आदि के टूटने से पौधों की रोपण उपरांत मरण क्षमता में लगभग 15 से 20 प्रतिशत बढ़ोतरी हो जाती है। प्लग ट्रे विधि द्वारा पौध तैयार करने में पौध के मरने की आशंका बहुत कम रहती है। इससे पौधे को रोपण उपरांत घात नहीं लगता है।
- पौधे में जड़तंत्र का विकास अच्छा होता है, जिसके कारण पौधे ओजस्वी होते हैं। पौध मुख्य खेत में रोपाई के बाद बहुत जल्दी स्थापित होती है।
- पौध की गुणवत्ता अच्छी होने से उत्पादन अधिक प्राप्त होता है।
- पौध को उचित पैकिंग के बाद दूरस्थ स्थानों तक भेजा जा सकता है, जहां इनको उगाया जाना मुश्किल एवं उपलब्धता बहुत कम हो।
- सब्जियों में संकर किस्मों के बीज बहुत महंगे होने के कारण इस विधि द्वारा वातावरण की प्रतिकूल दशाओं में भी उचित प्रबंधन आसान होता है।
- उर्वरक व पानी का समुचित उपयोग होता है।
- इस विधि से तैयार पौध की बढ़वार एक समान होने के कारण खेत में रोपाई के बाद फसल की बढ़वार भी एक समान होती है।
- सब्जियों की संरक्षित खेती के लिए पौध तैयार करने की यह आवश्यक एवं आधुनिक विधि है।

पुष्प

सिम्बिडियम ऑर्किड्स की जैविक खेती

राकेश कुमार सिंह*, **लक्ष्मण चन्द्र डे*** और **मीना छेत्री***

ऑर्किड्स लंबे समय से मनुष्य के आकर्षण का केंद्र रहा है और इनके फूल अपने अद्भुत आकार, रंग, रूप और सुगन्ध के लिए विश्वविख्यात हैं। इन फूलों में एक अद्भुत आकर्षण क्षमता होती है, जो सभी को अपनी ओर आकर्षित करती है। इसमें अन्य फूलों की अपेक्षा अधिक लंबे समय तक ताजे अवस्था में बने रहने की भी क्षमता होती है। कट फूलों के रूप में उपयोग किए जाने वाले फूलों में सबे ज्यादा ऑर्किड्स के सिम्बिडियम के फूलों का इस्तेमाल किया जाता है, जिससे इसको पहला स्थान प्राप्त है।

भारत में सिम्बिडियम ऑर्किड्स की खेती सिक्किम और बंगाल के क्रमश: कलिम्पोंग, दार्जिलिंग और मिरिक के क्षेत्रों में की जाती है। अन्य उत्तर-पूर्वी राज्यों जैसे-नगालैंड और अरुणाचल प्रदेश भी इसके फूलों की खेती को बढ़ावा दे रहे हैं। 1500-2000 मीटर से ऊपर की ऊंचाई और रात्रि के समय ठंड, गर्मी तथा मानसून की बारिश सिम्बिडियम ऑर्किड्स की खेती के लिए आदर्श मानी जाती है।

महत्व और उपयोग

सिम्बिडियम ऑर्किड्स आनुवंशिक संसाधनों के लिए अत्यधिक मूल्यवान है। कट फूलों, गमला पौधों, लटकते पौधों तथा हर्बल दवाएं बनाने में भी इसका बहुत महत्व है।

रोशनी

सिम्बिडियम ऑर्किड्स की खेती के लिए सूर्योदय के समय की रोशनी और शाम के समय की रोशनी आदर्श मानी जाती है। परिपक्व पौधों के लिए 50 प्रतिशत प्रकाश आवश्यक होता है। गर्मी के समय एवं बढ़ते मौसम के दैरान में 50 प्रतिशत छाया या 5000-6000 एफ.सी. प्रकाश की आवश्यकता होती है। फूलों के मौसम में 2000-3000 एफ.सी. प्रकाश और पत्ते हल्के पीले और हरे रंग के होने चाहिए।

तापमान

सामान्य तौर पर सिम्बिडियम ऑर्किड्स 7 डिग्री सेल्सियस से भी कम तापमान सहन कर सकता है। पौधों के विकास के लिए रात्रि का औसतन तापमान 18 डिग्री सेल्सियस तथा दिन का औसतन तापमान 24-30 डिग्री सेल्सियस होना आवश्यक है। फूलों की कीलें निकलने की अवस्था में औसतन तापमान 10-15 डिग्री सेल्सियस आवश्यक होता है। सर्दियों का मौसम (अक्टूबर के अंत से फरवरी के अंत तक) रात्रि का औसतन तापमान 12 डिग्री सेल्सियस तथा दिन का औसतन तापमान 18-24 डिग्री सेल्सियस तक सबसे अच्छा माना जाता है।

आर्द्रता

ऑर्किड्स के लिए आर्द्रता का बहुत महत्व है। 50 प्रतिशत से कम सापेक्ष आर्द्रता नहीं होनी चाहिए। पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए 80 प्रतिशत सापेक्ष आर्द्रता आवश्यक है। गर्मी के मौसम में आर्द्रता को बनाये रखने के लिए दिन में कम से कम एक बार पॉलीघर की जमीन को अवश्य भीगना चाहिए। घर के भीतर जगह-जगह किसी पात्र में पानी भरकर रखने से भी नमी को संरक्षित किया जा सकता है।

उत्पादन

सिम्बिडियम ऑर्किड्स को बीजों के माध्यम से प्रसारित किया जा सकता है। ऑर्किड्स के विभाजन के लिए मुख्य रूप से ऊतक संवर्धन विधि सबसे उत्तम मानी जाता है। इसमें विभाजन बैकवल्व के द्वारा अथवा पुराने पौधे को विभाजित करके भी

पौध रोपण सामग्री की तैयारी

आय

सिम्बिडियम ऑर्किड्स फूल के एक कीलें की कीमत लगभग 100-200 रुपये के आसपास होती है। अत: 500 वर्गमीटर का पॉलीघर है, तो इसमें लगभग 1500 पौधे होने चाहिए। इसको तैयार करने में लगभग 8 से 10 लाख रुपये का खर्च आएगा। इससे 8 से 10 वर्ष में 55,000 से 60,000 तक फूल किले ले सकते हैं। इससे लगभग 40 लाख रुपये तक की आय प्राप्त हो सकती है।

*भाकृअनुप-राष्ट्रीय ऑर्किड्स अनुसंधान केन्द्र, पाक्यांग (सिक्किम)

रोपण सामग्री

नए पौधे तैयार किए जा सकते हैं। इस विधि में पौधा तैयार होने में कम से कम 3-4 वर्षों का समय लग जाता है। रोगमुक्त पौधे तैयार करना है, तो ऊतक संवर्धन ही सबसे उत्तम विधि है।

पौधघर

पौधघर (ग्रीनहाउस) को बनवाते समय बहुत सी बातों का ध्यान रखना होता है जैसे-हवा का आवागमन, पानी और परिवहन आदि की उचित व्यवस्था। पौधघर को ऐसे बनाएं, जो चारों तरफ से खुला हो और हवा का आवागमन अच्छा हो। ऐसा घर सिम्बिडियम ऑर्किड्स के लिए सबसे उपयुक्त माना जाता है।

गमला

पौधे को अगर मिट्टी के गमले में लगाया जाए, तो सबसे अच्छा होता है। प्लास्टिक के गमले का आजकल बहुतायत में प्रयोग किया जा रहा है। गमले चाहे प्लास्टिक के हों या मिट्टी के, गमलों में छिद्र होना बहुत जरूरी होता है। जड़ों के लिए हवा का आवागमन बहुत जरूरी होता है। छिद्रों से अतिरिक्त पानी भी बाहर निकल जाता है। पौधों की आयु के हिसाब से गमले रखने चाहिए जैसे-15 सें.मी. से छोटे पौधे को 6 इंच के गमले में और वयस्क पौधा लगभग 3 वर्ष का 10-12 इंच के गमले में होना चाहिए।

रोपण सामग्री

पौधे के स्वस्थ एवं सम्पूर्ण विकास के लिए पौधरोपण सामग्री में कटी हुई पत्ती, कटे हुए नारियल के छिलके, भूसी, पेड़ की छाल तथा ईंट के टुकड़े (1:1:1:1) निर्धारित अनुपात में होने चाहिए। रोपण सामग्री का पी-एच मान 5.5-6.5 तक होना चाहिए।

वयस्क पौध को विभाजित करके पौधे तैयार करना

पौध लगाना और पुनः भराई

ऑर्किड्स के पौधों की रोपाई का समय अप्रैल से लेकर जून के प्रथम सप्ताह तक का होता है। पौध रोपाई से पहले रोपण सामग्री को अच्छी तरह से पानी में भिगोकर साफ कर लेना चाहिए। इसमें से सोडियम बहुत निकलता है, जो पौधों की जड़ों को काफी नुकसान पहुंचाता है। फफूंदीनाशक को भली प्रकार से मिला लेना चाहिए, जिससे किसी रोग का डर न रह जाए। इसके बाद रोपाई करनी चाहिए।

रोपण सामग्री तभी पुनः भरनी चाहिए, जब रोपाई किए हुए गमले की रोपण सामग्री लगभग आधा सड़ चुकी हो। गमले में भरी रोपण सामग्री लगभग 2-3 वर्ष के बाद ही पूर्ण रूप से सड़ती है। फिर पुनः भराई भी अप्रैल से लेकर जून के प्रथम सप्ताह तक ही करनी होती है।

गमले से गमले का अंतराल

लगभग एक वर्ष उम्र के 15 से 20 पौधों को एक वर्गमीटर में रखा जा सकता है। 3 से 4 वर्ष उम्र के वयस्क पौध (10-12 इंच के गमले में हो) तो एक वर्गमीटर में लगभग 3 से 4 पौधे ही रखे जा सकते हैं।

सिंचाई

ऑर्किड्स को पूरे वर्ष पानी देने की आवश्यकता होती है, जिससे इनके स्यूडोबल्ब हरा और चिकने बने रहें। पानी की आवश्यकता वर्ष के ऋतुओं के ऊपर निर्भर करती है जैसे-

फूल

- गर्मी के मौसम में प्रति सप्ताह 2 से 3 बार
- शरद ऋतु में प्रति सप्ताह 1 से 2 बार
- जाड़े के दिनों में प्रति सप्ताह एक बार
- वसंत ऋतु में प्रति सप्ताह 1 से 2 बार

कटाई

फूलों की कटाई करते समय यह ध्यान रखें, कि जब 70 प्रतिशत फूल खिल जाएं तभी कटाई करें। कटाई करते समय किसी बाल्टी में पानी जरूर रखें। इन कट फ्लावर को काटने के तुरंत बाद पानी में डाला जाना चाहिए, जिससे फूलों की गुणवत्ता खराब न होने पाए। कटाई करने का सबसे उचित समय सुबह का होता है। यह कटाई किसी धारदार औजार से ही करनी चाहिए। ■

जैविक पोषक तत्व प्रबंधन

पौधों के पोषक तत्वों के संभावित स्रोत हैं खाद्य फसलों के अवशेष, जैविक खाद, सड़ी हुई गोबर की खाद, वर्मीकम्पोस्ट और कृषि अपशिष्ट पदार्थ इत्यादि। ऑर्किड्स में सड़ी हुई गोबर की खाद की आवश्यकता न के बराबर होती है। इसलिए गौमूत्र का उपयोग छिड़काव के लिए किया जा सकता है। गौमूत्र का 1:20 के अनुपात में छिड़काव करने से पौधों का अच्छा विकास होता है। इससे कीट-पतंगों से नुकसान का डर भी कम होता है। इसके साथ ही अगर मुर्गी के मल को सुखाकर 5 कि.ग्रा. (गोबर) को 95 लीटर पानी में भिगोकर 15 दिनों के लिए रख दें और इसके बाद 1:20 के अनुपात में छिड़काव करें, तो लाभ मिलता है। ऑर्किड्स को अवस्था के अनुसार अलग-अलग पोषक तत्वों की मात्रा की आवश्यकता होती है। वृद्धि के समय में नाइट्रोजन उर्वरक की जरूरत ज्यादा होती है। जब पुष्प निकल रहा होता है, तो फॉस्फोरस उर्वरक की मात्रा की ज्यादा आवश्यकता होती है। सिम्बिडियम ऑर्किड्स के लिए जैविक खाद तैयार करने के लिए सरसों तेल की खली, सूखी हुई मछली और हड्डी के चूरे को शामिल करके (8:0.5:4 कि.ग्रा. के अनुपात में) भी बनाया जा सकता है। इससे 3.5 प्रतिशत नाइट्रोजन, 2.1 प्रतिशत फॉस्फोरस, 2.7 प्रतिशत पोटाश, 4.5 प्रतिशत कैल्शियम और 1.6 प्रतिशत मैग्नीशियम दिया जा सकता है।

ट्यूबरस बिगोनिया है पहाड़ी राज्यों का कंदीय पुष्प

जसबीर सिंह वजीर* और **अजय कुमार****

ट्यूबरस या कंदीय बिगोनिया विश्वभर के ठण्डे इलाकों में तैयार होने वाला एक प्रसिद्ध एवं प्रमुख पुष्प है। यह गमलों तथा टोकरियों में तैयार होने वाला पौधा है। इसके खिलने का समय पहाड़ों में जुलाई से लेकर अक्टूबर-नवंबर तक है। मैदानी इलाकों के लिए पहाड़ में बसे किसान अक्टूबर-नवंबर में तैयार करके अच्छा आर्थिक लाभ अर्जित कर सकते हैं। मैदानी इलाकों में रहने वाले पुष्प प्रशंसकों ने अभी तक इस फूल को देखा ही नहीं है। पर्वतीय क्षेत्रों में उपलब्ध शोभाकारी कंद पुष्पों में आर्थिक दृष्टि से ट्यूबरस बिगोनिया अतुलनीय है। इसके फूलों की नैसर्गिक सुन्दरता की जितनी तारीफ की जाए कम है। कंदीय बिगोनिया क्यारियों, वृक्षों की लटकती डालियों, झाड़ियों के आगे दीवारों में लटकते वर्टीकल गमलों और भांति-भांति के आकारों वाले गमलों में लगाया जा सकता है। खिलते हुए पुष्प सिंगल, सेमी डबल और डबल पंखुड़ियों वाले हो सकते हैं, जो विभिन्न तरह की आकृतियों में गुलाब की तरह, कैमीलियानुमा, कार्नेशन जैसा तथा डैफोडिल के समान होते हैं।

पर्वतीय क्षेत्रों में सक्रिय पुष्प उत्पादक अगर वैज्ञानिक तरीके से छायादार ग्रीन हाउसों या संरक्षित स्थानों पर ट्यूबरस बिगोनिया के कंद या खिलते हुए फूल 6 इंच से लेकर 12 इंच प्लास्टिक वाले गमले तैयार करके बेचें, तो मालामाल हो सकते हैं। इसमें उन्हें एक ही बात का ध्यान रखना होगा कि वे व्यावसायिक दृष्टि से केवल संकर प्रजातियों/किस्मों का बीज बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से प्रत्येक वर्ष मंगवाते रहें, उन्हीं से खिलते हुए फूल अथवा कंद उत्पादन करते रहें। संकर बीज से तैयार पुष्पीय पौधे अत्यन्त आकर्षक होते हैं, जिनकी मार्केट में बहुत मांग रहती है। संकर किस्मों का एक हजार बीज का पैकेट लगभग 2500 रुपये से लेकर तीन हजार रुपये तक मिल जाता है। अगर एक किसान न्यूनतम 1000 बीजों में से 500 पौधे भी तैयार कर पाता है, तो प्रति पौधा कीमत लगभग 5 से 6 रुपये पड़ती है। यही पौधा 6 इंच के प्लास्टिक गमले में न्यूनतम 100 रुपये

ट्यूबरस बिगोनिया के पनपते छोटे पौधे

*प्रमुख प्रसार विशेषज्ञ (पुष्प विज्ञान), क्षेत्रीय बागवानी अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केन्द्र, मशोबरा-शिमला, डा. यशवंत परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी-सोलन (हिमाचल प्रदेश); **अनुसंधान सहयोगी, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली-110012

प्रति गमला बिक जाता है, जिसमें लगभग 6 महीने का समय लग जाता है। अगर किसान कंद बेचना चाहता है, तो प्रति कंद न्यूनतम 50 रुपये कीमत उसको मिल सकती है, जिससे उसकी आर्थिक स्थिति सुधर सकती है। अक्टूबर-नवंबर में पहाड़ के किसान इसके खिलते हुए फूलों के गमले दिल्ली तथा इसके आसपास के क्षेत्रों या चण्डीगढ़ और पंजाब, हरियाणा की प्रमुख फूलों वाली नर्सरियों को 75 रुपये से लेकर 150 रुपये प्रति गमला बेच सकते हैं। सर्दियों में इसके कंदों को हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, जम्मू और कश्मीर, पूर्वोत्तर वाले राज्यों जैसे-सिक्किम, मेघालय, दार्जिलिंग इत्यादि में स्थित नर्सरियों को हजारों की तादाद में अच्छे मूल्यों पर बेचा जा सकता है। इसके अतिरिक्त भविष्य में इसके कंदों की निर्यात की भी प्रबल संभावनाएं हैं।

प्रजनन

कंदीय बिगोनिया के प्रजनन की अनेक विधियां हैं। प्रफुल्लन के बाद बनने वाले बीज से जहां नयी किस्मों का विकास किया जाना संभव है, वहीं पुरानी किस्मों के लिए कंदीय भाग को छोटे टुकड़ों में बांटकर, कंदीय शाखाओं अथवा उनकी पत्तियों द्वारा इसे प्रजनित किया जाता है।

वर्धी प्रजनन

इस प्रकार का प्रजनन निम्न विधियों से किया जाता है:

कंदीय भाग से प्रजनन

प्रजनन की यह विधि महत्वपूर्ण है, क्योंकि 3-4 वर्षों के बाद कंद का आकार बढ़ने से फूलों का आकार छोटा होने के साथ उनके रंग भी फीके पड़ने लगते हैं। अत: आकार में बड़े इन कंदों को किसी तेज धार के औजार से आंखों के आधार पर छोटे कंदों में काटा जाता है। कटे हुए भाग में सूखा फफूंदनाशक पाउडर (कार्बेण्डाजिम-बाविस्टिन) का हल्का लेप लगाकर धूप में 3-4 घंटे सुखा लेना चाहिए। उसके बाद इन्हें ट्रे में बालू और सड़ी पत्तियों की खाद में 2-3 सें.मी. की दूरी पर रखना चाहिए। नयी कोंपलें आने तक ट्रेनुमा बर्तन में बालू और सड़ी पत्तियों की खाद में 2-3 सें.मी. की दूरी रखनी चाहिए। नयी कोंपलें आने तक ट्रे को 15-18 डिग्री सेल्सियस के स्थान पर रखना चाहिए। नियमित रूप से हल्के पानी का छिड़काव करना चाहिए। कोंपलें 3-4 सें.मी. लम्बी होने पर इन्हें गमलों या टोकरियों में लगाना चाहिए। छोटे कंदों को बिना काटे ही लगाना चाहिए। जलवायु की दृष्टि से कंदों को फरवरी से अप्रैल तक गमलों में लगाया जा सकता है।

बीज बुआई के 5-6 माह बाद खिलता हुआ ट्यूबरस बिगोनिया

बीज बुआई बाद लगभग 4 महीने पुराना पौधा

छोटे फूल वाला मल्टिफ्लोरा ट्यूबरस बिगोनिया

बीज द्वारा प्रजनन

बीज संकर किस्मों से या किसान द्वारा खुद तैयार किए जा सकते हैं। संकर किस्में, गमलों के लिए उपयुक्त हैं और उनकी पुष्प डंडियां छोटी और मोटी होती हैं। ये डबल फूल को सीधा रखने में अति सहायक होती हैं। इससे संकर किस्मों के फूल ऊपर की ओर खिलते हुए और आकर्षक दिखते हैं, जिनमें सहारे की जरूरत नहीं रहती है। ट्यूबरस बिगोनिया का बीज आकार में अत्यन्त बारीक और लाल पाउडर के समान दिखाई देता है। एक ग्राम में लगभग 35,000 बीज हो सकते हैं। ये बीज की महीनता को दर्शाते हैं। इसलिए बीज को छनी बालू के साथ मिलाकर बोया जाता है।

बीज में अंकुरण के लिए दो-तीन बातों का किसान/बागवान जरूर ध्यान रखें। बीज में तुरन्त अंकुरण 10 से 15 दिनों के उपरान्त तभी होता है, जब बीज उपयुक्त बीज मिश्रण जैसे सड़ी छनी हुई लीफ मोल्ड (2 भाग) अथवा पुरानी गली-सड़ी गोबर की खाद (1 भाग) और रेत (1 भाग) से बना हुआ हो। इन सबको बारीक छननी में छानना होता है और इसके बाद निर्धारित भागों में मिलाना होता है। लकड़ी की पेटियों या बड़े गमलों में या सीमेन्ट की ट्रे में इस मिश्रण को बिछा दें। पूरी तरह से सतह को समतल बनाएं और बीजने वाले स्थान पर ऐसे रख दें कि बीज वाली सतह पूरी तरह से समतल दिखे। अन्यथा बीज बोने के बाद सिंचाई करते समय किनारों की तरफ भाग सकता है। बीज मिश्रण को उसके बाद बिल्कुल बारीक पानी की बूंदें या मिस्ट छोड़ने वाले स्प्रे पम्प से सिंचाई करें,

ताकि ऊपर की कम से कम 2 इंच सतह पूरी तरह से भीग जाए। बीज को बोने से पहले यह सुनिश्चित कर लें कि ग्रीनहाउस का दिन और रात का तापमान क्या रहता है। बिगोनिया का बीज 10 से 12 दिन में अंकुरित होता है, जब ग्लासहाउस या पॉलीहाउस का दिन का औसतन तापमान 22-24 डिग्री सेल्सियस हो और रात का औसतन तापमान 14-16 डिग्री सेल्सियस होता है। इसके अतिरिक्त बीज वाले कक्ष में 95-100 प्रतिशत नमी का रहना बीज के अंकुरण के लिए अति आवश्यक होता है। छोटा बीज भीगी सतह पर एक दम चिपक जाता है। इसके ऊपर किसान बिल्कुल बारीक छनी हुई कोकोपीट और रेत के मिश्रण को लगभग 1/2 मि.मी. मिलाएं और फिर बारीक स्प्रे पम्प से बीज वाली ट्रे को ऐसे भिगोएं कि पम्प की नोजल बीज से कम से कम दो फीट दूर रहे। अधिक नजदीक से पानी डालने पर बीज पानी के तेज प्रवाह से हिल सकता है। जब पौधों की लम्बाई 2-3 सें.मी. हो जाये, तो उन्हें झाडू की तिल्ली से सावधानीपूर्वक अलग-अलग निकालकर ट्रेनुमा पात्र में स्थानांतरित करना चाहिए। कुछ और बढ़ने पर इन्हें मिट्टी सहित अंतिम रूप से गमलों में प्रत्यारोपित किया जाता है। प्रत्यारोपण, बीज बोने के लगभग दो महीने बाद करें। इस प्रकार अगस्त तक बीज द्वारा प्राप्त पौधे अक्टूबर तक फूलने लगते हैं तथा प्रत्येक पौधे से कंद भी बन जाता है।

प्रत्यारोपण तथा अन्य सस्योतर क्रियाएं

प्रजनन के विविध तरीकों से तैयार किये गए बिगोनिया के पौधों की देखरेख में सिंचाई का महत्व सबसे अधिक है। यह आवश्यक है कि पौधों को उचित मात्रा में तथा अनुकूल समय पर (गर्मियों में प्रतिदिन और वर्षा वाले महीनों में 2-3 दिनों बाद) सिंचाई देनी चाहिए। पतझड़ में 3-4 दिनों उपरांत तथा नवंबर-दिसंबर में 7-10 दिनों के बाद सिंचाई करें। पानी सायंकाल के समय देने से पौधों की पत्तियों तथा फूलों का आकर्षण दिन भर बना रहता है।

अप्रैल में बोये गए बीज से लगभग दो महीने में पौध में 3-4 पत्तियां जब आ जाती हैं, तो उन्हें 5 इंच प्लास्टिक के गमलों में प्रत्यारोपित करें। इसके लगभग 40 दिनों बाद इन्हीं पौधों को 5 इंच के गमलों से निकालकर 6 इंच वाले प्लास्टिक गमलों में डालें और प्रत्येक पौधे में पिंचिंग कर लें। ऐसा करने से प्रत्येक पौधे में नई शाखाओं का उदय होगा, जिससे प्रत्येक गमला पत्तों और फूलों

लाल संकर ट्यूबरस बिगोनिया

प्रमुख व्यावसायिक किस्में

पूरे विश्व में बेनरी (जर्मनी) एक बहुराष्ट्रीय पुष्प बीज कम्पनी के रूप में प्रसिद्ध है। इसी कम्पनी ने ट्यूबरस बिगोनिया की सबसे अधिक प्रचलित किस्मों का विकास किया है, जिनमें प्रमुख संकर किस्मों का विवरण नीचे दिया जा रहा है। प्रत्येक सीरीज में न्यूनतम पांच से छः रंग वाले फूल होते हैं, जो मुख्य रूप से पीले, गुलाबी, सफेद, लाल, नारंगी, सुर्ख लाल रंगो में उपलब्ध रहते हैं:

- **मेमोरी सीरीजः** सबसे बड़े आकार के डबल पंखुड़ियों वाले फूल इस सीरीज की विशेषता हैं।
- **पेनोरमा सीरीजः** इस सीरीज के फूल लटकते हुए डबल पुष्प टोकरियों में अति सुन्दर नजर आते हैं।
- **ऑर्नामेन्ट सीरीजः** इसके डबल लटकने वाले पुष्प टोकरियों के लिए उपयुक्त हैं।
- **इल्लुमिनेशन सीरीजः** यह सबसे मशहूर सीरीज है, जिसके लटकते हुए पुष्प टोकरियों के लिए अति उपयुक्त हैं। इसके अतिरिक्त गमलों में भी इसके पौधों को लगाया जाता है।
- **प्राइमरी सीरीजः** इस सीरीज की खासियत गहरे लाल रंग के अत्यंत आकर्षक बड़े आकार वाले डबल फूलों का होना है। इसके साथ-साथ पीला, गुलाबी तथा सफेद रंग भी होता है।
- **न्यू स्टार सीरीजः** यह भी एक अत्यन्त आकर्षक डबल फूलों वाली गमलों के लिए उपयुक्त सीरीज है।
- **पिन अप सीरीजः** यह एक मात्र सिंगल बड़े फूलों वाली सीरीज है, जिसमें पिन अप गुलाबी और पिन अप संतरी प्रख्यात हैं।

खिलता हुआ डबल ट्यूबरस बिगोनिया पुष्प

से भरा हुआ नजर आएगा। गमले की मृदा तैयार करने के लिए छना हुआ जंगल का सड़ा-गला लीफ मोल्ड (2 भाग), अच्छी छनी हुई दोमट मृदा (1 भाग) और छनी हुई गली-सड़ी गोबर की खाद (1 भाग) लें और इन सबको अच्छी तरह से मिला लें। पौधे लगाने के लगभग 15 दिनों उपरान्त कैल्शियम नाइट्रेट घुलनशील खाद 1.5 ग्राम पति लीटर पानी में मिलाकर पौधों पर स्प्रे करें। उसके प्रत्येक 10 दिनों बाद घुलनशील एन:पी:के (19:19:19) 2 ग्राम प्रति लीटर और कैल्शियम नाइट्रेट/1.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में बदल-बदल कर डालें। फूल आने से लगभग 20 दिनों पहले एन:पी:के (13:0:45)

ताजा खिले पुष्प

घुलनशील खाद 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर पौधों पर डालने से फूलों की गुणवत्ता पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

अप्रैल के पहले सप्ताह में की गई बुआई से 6 इंच के प्लास्टिक गमलों में खिलते पौधे में कम से कम पांच महीनों और ज्यादा से ज्यादा छः महीनों में बढ़िया फूल आ जाते हैं। किसान एवं बागवान मार्केट को देखते हुए बुआई का समय फरवरी से लेकर मई तक बदल सकते हैं। मई में बुआई करने से फूल अक्टूबर-नवंबर में लिए जा सकते हैं। इसके लिए किसानों को बरसात में पौधों को अधिक नमी से बचाए रखना होगा । सितंबर से लेकर नवंबर तक शाम के पांच बजे से लेकर रात के 10 बजे तक पौधों को और अतिरिक्त रोशनी प्रदान करनी होगी, ताकि पौधे वानस्पतिक और फूलों वाली अवस्था में रहें।

नवंबर में फूल लेने के लिए रात का तापमान कभी भी 14-15 डिग्री सेल्सियस

ट्यूबरस बिगोनिया के ट्यूबर/बल्ब

से नीचे न जाने दें। ऐसा करने से ट्यूबरस बिगोनिया के खिलते हुए फूल गमलों में दिल्ली, चण्डीगढ़ इत्यादि स्थानों पर मन चाहे दामों पर हमारे किसानों द्वारा बेचे जा सकते हैं। नवंबर-दिसंबर में गमलों या क्यारियों से

कंदीय शाखाओं से प्रजनन

ग्लेडियोलस, फ्रीजिया, डहेलिया आदि कंदीय पुष्पों की तरह बिगोनिया में छोटे-छोटे कंद नहीं बनते हैं। किसी विशेष किस्म में नए कंद को प्राप्त करने के लिए पौधे से निकलती शाखाओं को कर्तन कर लगाया जा सकता है। इस प्रकार की शाखाओं (4-10 सें.मी.) को उसी गमले के कोने में तिरछा लगाने से अधिक सफलता प्राप्त हो सकती है। कटी शाखाओं पर रूटिंग हार्मोन लगाने से जड़ें बनने की प्रक्रिया तेजी पकड़ने लगती है। 20-25 दिनों में इन शाखाओं के नीचे एक ठोस गोलाकार आवरण (कैल्लस) बन जाता है। शीघ्र ही इस भाग से जड़ें फूटने लगती हैं, तब इन्हें मिट्टी सहित दूसरे गमलों में प्रत्यारोपित किया जाना चाहिए। जून-जुलाई मध्य तक लगायी कटिंग अक्टूबर-नवंबर में फूलना प्रारम्भ कर देती है तथा नए वर्ष के लिए कंद भी तैयार हो जाता है।

मनोहारी छटा ट्यूबरस बिगोनिया पुष्पों की

सूखे कंदों को उखाड़ लें। बाविस्टिन 2 ग्राम और डाइथेन एम-45, 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से मिलाकर कंदों को इनमें डुबोएं। लगभग आधे घण्टे तक फंफूदनाशक मिश्रण से ड्रेंचिंग करें। ऐसा करने से कंदों से मिट्टी और फंफूद का नाश हो जाएगा। इसके बाद कंदों/ट्यूबरस को दो-तीन दिनों तक हल्की छाया और हवादार जगह पर पूरी तरह से सुखा लें, ताकि प्रत्येक कंद से नमी पूरी तरह निकल जाए। इन सूखे कंदों को शून्य प्रतिशत नमी वाली सूखी कोकोपीट या रेत में गमलों या पेटियों में परतदार तरीके से रख दें। इसके बाद कंदों को कोकोपीट/रेत में दबाने के बाद घर के सूखे ठण्डे छायादार जगह पर नवंबर से लेकर फरवरी तक भंडारित करके रखें।

कंदों को चूहों या दूसरे पशुओं से बचाने का उचित प्रबंध करें। फरवरी में इन कंदों को बाहर निकालें। अब प्रत्येक कंद को हल्के छायादार स्थान पर मोटी खुरदरी लीफ मोल्ड और रेत के मिश्रण वाली क्यारियों/पेटियों में फुटाव के लिए डालें। इस दौरान कंदों में हल्की सिंचाई करें। लीफ मोल्ड और रेत मिश्रण में हल्की सी नमी सिर्फ अंकुरण और जड़ फुटाव के लिए पर्याप्त रहे। 15-20 दिनों बाद अंकुरित कंदों को अपनी इच्छानुसार गमलों/टोकरियों, ट्रे या क्यारियों में प्रत्यारोपित करें, ताकि अगली गर्मियों-बरसात तथा पतझड़ तक ये खूब खिलते रहें। कंद वाले पौधे दूसरे वर्ष पूरे यौवन से खिलते रहेंगे। ऐसा चक्र प्रत्येक वर्ष अपनाएं। प्रत्येक वर्ष कंद लगभग आधे से एक इंच आकार में बढ़ जाएगा। एक कंद की आयु 4-5 वर्ष तक देखी गई है। कंदों को गमलों में प्रत्यारोपित करने के बाद फफूंदनाशकों तथा कीटनाशकों से ड्रेंच अवश्य करें।

आम की 'सदाबहार' किस्म

राजस्थान के कोटा निवासी किसान **श्री श्रीकृष्ण सुमन** (55 वर्ष) ने आम की एक ऐसी नई किस्म विकसित की है, जिसमें नियमित तौर पर पूरे वर्ष फल लगते हैं। आम की इस प्रजाति को 'सदाबहार' नाम दिया गया है। यह किस्म ज्यादातर प्रमुख रोगों से मुक्त है। इसका फल स्वाद में ज्यादा मीठा और लंगड़ा आम जैसा होता है। इस प्रजाति के पेड़ बौने कद के होते हैं और इसलिए किचन गार्डन में लगाने के लिए उपयुक्त हैं। इसका पेड़ काफी घना होता है और इसे कुछ वर्षों तक गमले में भी लगाया जा सकता है। इसके अलावा इसका गूदा गहरा नारंगी रंग का और स्वाद में मीठा होता है। इसके गूदे में बहुत कम रेशा होता है, जो इसे अन्य किस्मों से अलग करता है।

आम की 'सदाबहार' किस्म का विकास करने वाले किसान श्री सुमन ने कक्षा दो तक पढ़ाई करने के बाद स्कूल छोड़ दिया था। उनकी दिलचस्पी फूलों और फलों के बागान के प्रबंधन में थी, जबकि उनका परिवार सिर्फ गेहूं और धान की खेती करता था। उन्होंने यह जान लिया था कि गेहूं और धान की अच्छी फसल लेने के लिए कुछ बाहरी कारकों जैसे-बारिश, पशुओं के हमले से रोकथाम और इसी तरह की बातों पर निर्भर रहना होगा और इससे सीमित लाभ ही मिलेगा। श्रीकृष्ण सुमन ने परिवार की आमदनी बढ़ाने के लिए फूलों की खेती शुरू की। सबसे पहले उन्होंने विभिन्न किस्म के गुलाबों की खेती की और उन्हें बाजार में बेचा। इसके साथ ही आम के पेड़ लगाने भी शुरू किये। वर्ष 2000 में श्रीकृष्ण सुमन ने बागान में आम के एक ऐसे पेड़ को देखा, जिसके बढ़ने की दर बहुत तेज थी एवं पत्तियां गहरे हरे रंग की थीं। उन्होंने देखा कि इस पेड़ में पूरे वर्ष बौर आते हैं। यह देखने के बाद उन्होंने आम की इस किस्म की पांच कलमें तैयार कीं। इस किस्म को विकसित करने में उन्हें लगभग 15 वर्षों का समय लगा। इस बीच उन्होंने कलम से बने इन पौधों का संरक्षण और विकास किया। श्री सुमन ने पाया कि कलम लगाने के बाद पेड़ में दूसरे ही वर्ष से फल लगने शुरू हो गए।

इस नई किस्म को नेशनल इन्नोवेशन फाउंडेशन (एनआईएफ) इंडिया ने भी मान्यता दी हैं। एनआईएफ भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के तहत एक स्वायत्तशासी संस्थान है। एनआईएफ ने भाकृअनुप-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु को भी इस किस्म का स्थल पर जाकर मूल्यांकन करने की सुविधा दी। इसके अलावा राजस्थान के जयपुर के जोबनेर स्थित एसकेएन एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी ने इसकी फील्ड टेस्टिंग भी की। आम की इस नई प्रजाति की, पौध किस्म एवं कृषक अधिकार संरक्षण अधिनियम तथा भाकृअनुप-राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, नई दिल्ली के तहत पंजीकरण करवाने की प्रक्रिया चल रही है। एनआईएफ ने नई दिल्ली के राष्ट्रपति भवन स्थित मुगल गार्डन में इस आम की किस्म का पौधा लगाने में भी सहायता की है। 'सदाबहार' किस्म के आम का विकास करने के लिए श्री श्रीकृष्ण सुमन को एनआईएफ का नौवां राष्ट्रीय तृणमूल नवप्रवर्तन एवं विशिष्ट पारंपरिक ज्ञान पुरस्कार दिया गया है और इसे कई अन्य मंचों पर भी मान्यता दी गई है।

श्री श्रीकृष्ण सुमन को वर्ष 2017 से 2020 तक देशभर से और अन्य देशों से भी 'सदाबहार' आम के पौधों के 8000 से ज्यादा ऑर्डर मिल चुके हैं। वे वर्ष 2018 से 2020 तक विभिन्न राज्यों को 6000 से ज्यादा पौधों की आपूर्ति कर चुके हैं। 500 से ज्यादा पौधे राजस्थान और मध्य प्रदेश स्थित कृषि विज्ञान केंद्रों और अनुसंधान संस्थानों में वे खुद लगा चुके हैं। इसके अलावा राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और गुजरात के विभिन्न अनुसंधान संस्थानों को भी 400 से ज्यादा कलमें भेज चुके हैं। ■

जानकारी

नवंबर-दिसंबर में बागों के कार्यकलाप

हरे कृष्ण*

शरद के पश्चात हेमंत ऋतु का आगमन होता है, जो ठंड के आरंभ का संकेत होता है। यह मौसम नवंबर से दिसंबर के दौरान रहता है। इस ऋतु का आगमन होते ही पेड़ों से पत्ते झड़ने लगते हैं। पुराने पत्ते पीले होकर गिरते हैं, ताकि नए पत्ते उनकी जगह ले सकें। नवनिर्माण का सन्देश देने वाली यह ऋतु प्राकृतिक एवं उद्यानिकी दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। इसके आरंभ के साथ ही उद्यान में किए जाने वाले कृषि कार्यकलापों का महत्व भी बढ़ जाता है। इस अवधि के दौरान जहां अमरूद और नीबूवर्गीय पके फलों के विपणन की व्यवस्था करनी होती है, वहीं बागों में खाद का प्रयोग भी करना होता है।

नवंबर से दिसंबर की द्विमाही में छोटे पौधों को पाले से बचाने की भी विशेष व्यवस्था करनी होती है। पाले की समस्या शीतोष्ण फलों की अपेक्षा उष्ण और उपोष्ण कटिबंधीय फलों विशेषकर केला, पपीता, लीची, आम इत्यादि में ज्यादा प्रबल होती है। पौधों को छप्पर लगाकर, धुआं देकर या सिंचाई करके पाले से बचाने की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त फलों को कीटों और रोगों से बचाने की पूरी तैयारी भी करनी पड़ती है। इस द्विमाही में बागों में किए जाने वाले प्रमुख कृषि कार्यों का विवरण इस लेख में दिया जा रहा है।

*भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी-221001 (उत्तर प्रदेश)

कीट-व्याधि का समुचित प्रबंधन, आम में सुनिश्चित करें भरपूर उत्पादन

आम में इस अवधि के दौरान बहुत सारे आवश्यक कृषि-कार्य करने होते हैं, जिनका फलोत्पादन की दृष्टि से दूरगामी प्रभाव पड़ता है। नवंबर में शीर्षारंभी क्षय अथवा डाइबैक के लक्षण दिखना सामान्य है। इसलिए सबसे पहले मृत ऊतकों से लेकर स्वस्थ हरे भाग की 5-10 सें.मी. कटाई करनी चाहिए और फिर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) का 15 दिनों के अंतराल पर दो बार छिड़काव करना चाहिए। इस माह बगीचे में जुताई कर खरपतवार को निकाल दें। जुताई से मिलीबग कीट के अण्डे और प्यूपा नष्ट हो जाते हैं। इससे इस कीट को नियंत्रित करने में सहायता मिलती है। मिलीबग

आम में गमोसिस

अमरूद

पौधों को पाले से बचाने के लिए उन्हें छप्पर से ढक देना चाहिए। नए बाग के छोटे पौधों को पुआल अथवा एल्काथीन की चादरों से बने छप्परों से ढक दें। उन्हें पूर्व दिशा में खुला छोड़ दें, जिससे पौधों को उचित मात्रा में प्रकाश तथा हवा प्राप्त हो सके। दिसंबर में 10 वर्ष से ज्यादा आयु के वृक्षों में 1500 ग्राम फॉस्फोरस तथा 1000 ग्राम पोटाश प्रति वृक्ष की दर से दें। इसके साथ ही गोबर की अच्छी तरह से सड़ी हुई खाद (30 से 40 कि.ग्रा./वृक्ष) का प्रयोग अवश्य करें।

रहना चाहें जो खुशहाल, इस द्विमाही करें अमरूद की विशेष देखभाल

अमरूद के लिए यह द्विमाही बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इस दौरान बाग में कीट को पेड़ों पर चढ़ने से रोकने के लिए 30-45 सें.मी. चौड़ी 400 गेज की एल्काथीन पॉलीथीन को जमीन से 40-60 सें.मी. ऊपर तने पर बांधना चाहिए। पॉलीथीन को बांधने से पहले छाल के सभी छिद्रों और दरारों को मिट्टी से पलस्तर करना अथवा पॉलीथीन के निचले सिरे की तरफ ग्रीस का प्रयोग करना चाहिए, अन्यथा कीट उन दरारों से होकर पेड़ों पर चढ़ सकते हैं। जब निम्फ वृक्ष पर चढ़ चुके हों, उसमें वहां नीम बीज गिरी के सत्त (5 मि.ली. प्रति लीटर) अथवा नीम के तेल (5 मि.ली. प्रति लीटर डिटर्जेंट पाउडर 1 ग्राम प्रति लीटर) के घोल का छिड़काव करना चाहिए। वैकल्पिक रूप से, कार्बोसल्फॉन (1 मि.ली. प्रति लीटर पानी) का छिड़काव अथवा थालों में क्लोरोपाइरीफॉस कणिकाओं (250 ग्राम प्रतिवृक्ष) का प्रयोग किया जाना चाहिए।

इसके अतिरिक्त, जिन पेड़ों पर गोंदार्ति (गमोसिस) की समस्या दिखाई दे, उनके प्रभावित भागों को खुरचकर बोर्डो लेप (कॉपर सल्फेट : बुझा चूना: पानी: 1:1:10) का प्रयोग करें। यह ऋतु, छाल खाने वाले कीटों को नियंत्रित करने के लिए भी सर्वथा उपयुक्त है। कीट द्वारा बनाए गए छिद्रों की पहचान कर उनमें मिट्टी के तेल अथवा पेट्रोल से भीगी रुई को डालें। इसके बाद उन्हें गीली मिट्टी से बंद कर दें। समय से पहले निकलने वाले पुष्पगुच्छों को काटकर अलग कर दें, ताकि गुच्छा रोग के प्रकोप को कम किया जा सके। नवंबर-दिसंबर में, आम के बाग में सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। भूमि की आवश्यक निराई-गुड़ाई के पश्चात हल्की सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। वृक्षों को पाले से बचाने के लिए धुआं और हल्की सिंचाई करें। नर्सरी में

लीची

लीची में पुष्पण का मनोरम दृश्य

नवंबर में प्ररोह से निकलने वाले नए सांकुरों को निकाल दें। यदि छाल खाने वाले कीटों का प्रकोप दिखाई दे, तो उनकी व्यवस्था करें। दिसंबर में जिंक सल्फेट (2 ग्राम प्रति लीटर) का छिड़काव अथवा प्रति वृक्ष 20-25 ग्राम की दर से मृदा में मिलाएं। जिंक की उपलब्धता के कारण मादा पुष्पों की संख्या बढ़ जाती है। नवंबर-दिसंबर में लीची में पुष्पण आरंभ हो जाता है। इस अवधि में उद्यान में नमी की उचित मात्रा को बनाए रखना आवश्यक है। लीची में 'मिलीबग' की रोकथाम के लिए प्रति वृक्ष 250 ग्राम क्लोरोपाइरीफॉस का बुरकाव पेड़ के एक मीटर के घेरे में कर दें। फिर पेड़ के तने पर जमीन से 30-40 सें.मी. की ऊंचाई पर 400 गेज वाली एल्काथीन की 30 सें.मी. चौड़ी पट्टी सुतली कसकर बांध दें और उसके दोनों सिरों पर गीली मिट्टी या ग्रीस से लेप कर दें। इससे पेड़ पर मिलीबग का प्रकोप नहीं होगा। दिसंबर में गोबर की अच्छी तरह से सड़ी खाद (25 से 30 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष) का उद्यान में प्रयोग करें। तनाबेधक कीट का प्रकोप हो, तो साइपरमेथ्रिन (1 मि.ली. प्रति लीटर) का छिड़काव करें। नए बागों में, छोटे पौधों को पाले से बचाने के लिए समुचित व्यवस्था करें। पाले से बचाने के लिए पौधों को पुआल से बने छप्परों से ढकें और बागों में हल्की सिंचाई की व्यवस्था करें।

निराई-गुड़ाई, खाद एवं उर्वरक प्रबंधन, कीट प्रबंधन से लेकर तुड़ाई तथा विपणन की भी व्यवस्था करनी पड़ती है। नवंबर में अमरूद के बागों में निराई-गुड़ाई और सिंचाई की व्यवस्था की जानी चाहिए। इसके साथ ही इस द्विमाही में गोबर की अच्छी तरह से सड़ी-गली खाद को रासायनिक उर्वरकों जैसे-सिंगल सुपर फॉस्फेट (एसएसपी) और म्यूरेट ऑफ पोटाश (एमओपी) के साथ दिया जाना चाहिए। यूरिया की आधी मात्रा भी नवंबर में देनी चाहिए, जबकि शेष आधी मात्रा जुलाई में देनी चाहिए। छह वर्ष के पौधे को, सामान्यत:, 60 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 1 कि.ग्रा. यूरिया, 2.5 कि.ग्रा. एसएसपी और आधा कि.ग्रा. एमओपी दिया जा सकता है। 75 ग्राम नाइट्रोजन, 65 ग्राम फॉस्फोरस 50 ग्राम पोटेशियम प्रति वृक्ष प्रतिवर्ष की दर से भी दिया जा सकता है। यह भी ध्यान देना आवश्यक है कि उर्वरकों की खुराक केवल मृदा परीक्षण के आधार पर ही निर्धारित हो। अमरूद की पोषी जड़ें 25 सें.मी. गहराई तक मिट्टी की सतह में पाई जाती हैं। इसलिए उर्वरकों के बेहतर उपयोग के लिए उन्हें पेड़ के तने से 1 मीटर की दूरी पर 25 सें.मी. गहराई में दिया जाना चाहिए।

नवंबर-दिसंबर में वृक्षों तथा छोटे पौधों को पाले से बचाने की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए। छाल खाने वाले कीटों की रोकथाम के लिए कीट द्वारा बनाए गए छिद्रों की पहचान कर उनमें मिट्टी के तेल अथवा पेट्रोल से भीगी रुई को डालें। इसके बाद उन्हें गीली मिट्टी से बंद कर दें। पके फलों को पक्षियों के प्रकोप से बचाने की तैयारी होनी चाहिए। इसके लिए वृक्षों पर पक्षियों को डराने वाला चमकीला फीता लगाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, मानवाकार पुतलों (बिजूका) या पटाखों की ध्वनि से भी पक्षियों को बागों से दूर रखा जा सकता है। तैयार पके फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। फलों की किस्मों एवं आकार के आधार पर श्रेणीकरण कर लें, जिससे बाजार में उत्पाद का उचित मूल्य प्राप्त हो सके। स्टूलिंग विधि से पौधे तैयार करने के लिए 2-3 वर्ष के पौधों को जमीन से 4-5 इंच ऊंचाई पर काट दें। इससे उनमें अगली तिमाही में फुटाव आएगा।

पपीते की ठंड से करें पूरी सुरक्षा

पिछले माह लगाए गए पौधों की सिंचाई करनी चाहिए। उद्यान की सफाई करके खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। नवंबर के पहले और तीसरे सप्ताह में हल्की सिंचाई करने के पश्चात उद्यान में निराई-गुड़ाई करें। दिसंबर में फॉस्फोरस तथा पोटाशयुक्त उर्वरक को मृदा में भलीभांति मिलाएं तथा गोबर की अच्छी तरह से सड़ी हुई खाद का प्रयोग करें। पौधों को पाले से बचाने के लिए उद्यान में धुआं करें एवं पौधों को पुआल या पॉलीथीन से ढकने की व्यवस्था करें।

पपीता

केले का पाले से बचाव

नवंबर-दिसंबर में केले में प्रति पौधा 55 ग्राम यूरिया का प्रयोग करें। 10 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करें। पर्णचित्ती एवं फल सड़न रोग के लिए 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें। 15 दिनों के अंतराल पर हल्की सिंचाई अवश्य करें। यदि पौधों पर पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई दें, तो क्रमश: फेरस सल्फेट (0.5 प्रतिशत), जिंक सल्फेट (0.5 प्रतिशत) और बोरेक्स (0.5 प्रतिशत) का पर्णीय छिड़काव करें। केला पाले के प्रति बहुत संवेदनशील होता है। अत: दिसंबर में पौधों को पाले से बचाने की विशेष व्यवस्था करें। इसके लिए उद्यान में रात के समय धुआं करें एवं समय-समय पर ओवरहैड फव्वारा विधि द्वारा बाग में पानी का छिड़काव करते रहें।

हार्मोन के प्रयोग से अनन्नास में पुष्पण

नवंबर-दिसंबर में फसल निर्धारण के लिए पौधों की पत्तियों में 25 पीपीएम नेफ्थेलिन एसिटिक अम्ल का घोल रात के समय डालें। तैयार फलों की समय पर तुड़ाई कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। अनन्नास में रोग या कीट से ग्रस्त भागों और पौधों को इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए। खरपतवार को हटाएं एवं बागों में पलवार का प्रबंध करें। इससे मृदा में पर्याप्त नमी बनी रहेगी एवं खरपतवार भी नियंत्रित रहेंगे। अक्टूबर में अनन्नास फसल के अवशेषों को निकाल कर नष्ट कर देना चाहिए। मृदा की स्थिति, प्रकार, पौधे की आयु एवं अवस्था तथा मौसम की स्थिति के अनुसार सिंचाई करें। पौधे की आयु के अनुसार फॉस्फोरस और पोटाश दें। कीट एवं रोगों से बचाने के लिए 2 प्रतिशत नीम के तेल का छिड़काव करें। जिन फसलों में कीट तथा रोग कम लगते हैं, उन्हें बाग की सीमा के पास लगाएं।

समय पर सिंचाई और पीड़कनाशी प्रयोग से बेर में फलों का विकास

फलों के समुचित विकास के लिए, बागों में सिंचाई की पूरी व्यवस्था होनी चाहिए। तीन से चार हफ्तों के अंतराल पर मौसम के अनुसार सिंचाई करें। नवंबर और दिसंबर में बेर में फलमक्खी का प्रकोप ज्यादा होता है। ये विकसित हो रहे फलों में अण्डे देती हैं। प्रभावित फलों को इकट्ठा कर नष्ट कर देना चाहिए तथा फलमक्खी की रोकथाम के लिए क्रमश: मोनोक्रोटोफॉस और रोगर के घोल का 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त बागों में 4-5 जगहों पर यूजीनॉल+मेलाथियान+गुड़ का घोल बनाकर खुले बर्तनों में रखें। फलमक्खियां इस घोल की ओर आकर्षित होती हैं और पीकर मर जाती हैं। तनाछेदक कीट का प्रकोप होने की अवस्था में रुई को मोनोक्रोटोफॉस अथवा पेट्रोल से भिगोकर कीटों द्वारा तने में बनाए गए छिद्रों को भर दें। इसके बाद इसे मिट्टी से बंद कर दें, ताकि कीट उसी में मर जाएं। इस द्विमाही के दौरान बेर में चूर्णिल आसिता का भी प्रकोप होने की आशंका रहती है। सल्फर (0.25 प्रतिशत) अथवा केराथेन (0.05 प्रतिशत) या टेबुकोनाजोल के छिड़काव से इसकी रोकथाम की जा सकती है। बेर में फलों का झड़ना एक प्रमुख समस्या है। इसकी रोकथाम के लिए 2, 4 डी (10-15 पी.पी.एम.) अथवा एनएए (20-30 पी.पी.एम.) का छिड़काव लाभदायक है। इन रसायनों के छिड़काव से फलों के झड़ने में अभूतपूर्व कमी होती है। प्रथम छिड़काव सितंबर या अक्टूबर में हो जाना चाहिए, जब वृक्ष पर फूल पूरी तरह से आ जाएं। दूसरा छिड़काव प्रथम छिड़काव के एक माह पश्चात करें। उत्पादन तथा फलों के आकार में वृद्धि के लिए मध्य नवंबर में 1.5 प्रतिशत की दर से पोटेशियम नाइट्रेट का छिड़काव करें।

आंवला

विभिन्न क्षेत्रों में, आंवला के फलों की तुड़ाई नवंबर-फरवरी के बीच होती है। जिन क्षेत्रों में इसकी तुड़ाई का कार्य नवंबर-दिसंबर में हो, उन क्षेत्रों में इस दौरान फलों से लदे वृक्षों को बांस-बल्ली की सहायता से सहारा देने की व्यवस्था की जानी चाहिए, ताकि शाखाओं को टूटने से रोका जा सके। इस दौरान फलों का भी विकास होता है। इसलिए सिंचाई की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। ध्यान रहे कि तुड़ाई से 15 दिनों पूर्व सिंचाई रोक दी जाए, ताकि फल समय से तैयार हो सकें।

दीमक से बचाव हेतु फोरेट 10 जी प्रति पौधा 25-30 ग्राम डालकर मृदा में मिला दें। शूटगॉल कीट से ग्रस्त टहनियों को काटकर जला दें एवं पेड़ों पर डाइमेथोएट 2 मि.ली. एवं मैंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। फलों के झड़ने की समस्या होने पर बोरेक्स (0.6 प्रतिशत) का छिड़काव करें। दिसंबर में फलगलन की समस्या होने पर ब्लाइटॉक्स (3 ग्राम/लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें। तैयार हो चुके फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था भी करें।

जी ललचाते बेर

अनार कीट-व्याधि से बचाव

इस द्विमाही में अनार को बैक्टीरियल ब्लाइट, कवक रोगों और हानिकारक कीटों से बचाने के लिए स्ट्रैप्टोसाइक्लिन (0.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में), मैंकोजेब 75 घुलनशील चूर्ण (2 ग्राम प्रति लीटर पानी में) में टीपोल या ट्वीन 20 (0.5 मि.ली. प्रति लीटर की दर से) का छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त बोर्डो मिश्रण (0.5 प्रतिशत) तथा ब्रोनोपोल (0.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में) कैप्टॉन 50 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण (2

स्वाद और पोषण का खजाना अनार

ऊर्जा से भरपूर खजूर

ग्राम प्रति लीटर पानी में) का पांच से सात दिनों के अंतराल पर छिड़काव भी लाभकारी होता है। मृदा की स्थिति, प्रकार, पौधे की आयु एवं अवस्था तथा मौसम की स्थिति के अनुसार सिंचाई करें।

चीकू में सिंचाई, निराई और गुड़ाई

इस द्विमाही में चीकू को दीमक से बचाने के लिए क्लोरोपाइरीफॉस (2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में) का छिड़काव करें। जमीन के नीचे तथा मुख्य शाखा के निचले हिस्से से निकलने वाले अंकुरों और मूलवृंत से निकलने वाली शाखाओं को निकाल दें। मृदा की स्थिति, प्रकार, पौधे की आयु एवं अवस्था तथा मौसम की स्थिति के अनुसार सिंचाई करें। बाग से खरपतवारों को निकालते रहें तथा बाग में सफाई का ध्यान रखें, ताकि कीटों से होने वाली हानि से बचा जा सके।

खजूर पर ध्यान देना है जरूरी

इस द्विमाही खजूर के बागों में कोई विशेष कार्य नहीं किया जाता है। इस दौरान 15 दिन के अंतराल पर वृक्षों की सिंचाई की जानी चाहिए। खजूर में इस दौरान कोई व्याधि नहीं होती है, फिर भी यदि किसी व्याधि अथवा कीट का प्रकोप हो तो उसकी निगरानी रखी जानी चाहिए, ताकि समय पर उचित प्रबंधन किया जा सके।

कटहल में करें प्रवर्धन

इस द्विमाही पेड़ की पतली शाखाओं पर नर पुष्प निकलते हैं, जो कालांतर में झड़ जाते हैं। ग्राफ्टिंग द्वारा प्रवर्धन के लिए नवंबर उपयुक्त होता है। चूर्णिल रोग का प्रकोप होने पर डाइथेन एम-45 (2 ग्राम/लीटर पानी में) का छिड़काव करें। मिलीबग कीट की रोकथाम के लिए वृक्षों पर आम की भंति पॉलीथीन लगाएं।

लोकाट की देखभाल

नवंबर में लोकाट में फूल आते

कटहल

नए सेब के बाग लगाएं

नवंबर में उद्यान की सफाई कर निराई-गुड़ाई कर देनी चाहिए। दिसंबर में नए बाग लगाने के लिए गड्ढों को प्रथम सप्ताह तक भर देना चाहिए। निचले पहाड़ी इलाकों में जहां ठंड ज्यादा नहीं रहती है, इसकी रोपाई इस माह के अंत तक कर सकते हैं। अच्छी फसल के लिए उद्यान में 2-3 किस्मों का होना आवश्यक है। अधिक ठंड वाले क्षेत्रों में इसी माह पौधों की काट-छांट का कार्य भी करें। इसके बाद कटे हुए भाग को चौबटिया लेप से लेपन करें। चौबटिया लेप कॉपर-कार्बोनेट, रेड लेड और अलसी के तेल को 4:4:6 के अनुपात में मिलाकर तैयार कर सकते हैं। तनासड़न रोग की रोकथाम के लिए डायथेन एम-45 अथवा बाविस्टिन के घोल का तने के चारों ओर छिड़काव करें। सेंजोस स्केल कीट की रोकथाम के लिए हिन्दुस्तान पेट्रोलियम, स्प्रे ऑयल अथवा एग्रो स्प्रे ऑयल का छिड़काव दिसंबर में अवश्य करें।

हैं। इस दौरान बागों में सिंचाई नहीं की जानी चाहिए। दिसंबर में फल लगने शुरू होने के बाद 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की जानी चाहिए, ताकि फलों का समुचित विकास हो सके। पुष्पण के दौरान किसी कीटनाशी का प्रयोग न करें, नहीं तो परागणकर्ता प्रभावित होंगे। ये बाद में परागण की क्रिया को प्रभावित करेंगे और अंतत:फलन भी कम होगा।

लोकाट

लोकाट की किस्मों-गोल्डन येलो और पेल येलो के लिए बगीचे में कैलिफोर्निया एडवांस किस्म को परागण के रूप में लगाना चाहिए, क्योंकि उपरोक्त किस्मों में स्वपरागण क्षमता नहीं होती है। नवंबर में ही पॉलीथीन की चादरों से पलवार लगानी चाहिए, ताकि भूमि की नमी को संरक्षित किया जा सके।

नीबूवर्गीय फल

नवंबर-दिसंबर में बहुत से नीबूवर्गीय फल तुड़ाई के लिए तैयार होना शुरू हो जाते हैं। इसी समय फलों का तुड़ाई-पूर्व गिरना एक गंभीर समस्या है। फलों को गिरने से रोकने के लिए 10 पी.पी.एम. 2,4-डी (1ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव अवश्य करें। दिसंबर में नीबूवर्गीय फलों में गोंदार्ति रोग की आशंका बढ़ जाती है। इसकी रोकथाम के लिए तने के प्रभावित हिस्से वाली छाल को खुरचकर निकाल दें। इसके बाद बोर्डो लेप (1:2:20) का प्रयोग खुरचे भाग एवं इसके चारों ओर के स्वस्थ भाग पर करना चाहिए। दिसंबर में तैयार फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें।

स्ट्रॉबेरी की रोपाई की तैयारी

खेत तैयार करने से पहले 40-50 टन प्रति हैक्टर की दर से गोबर की गली-सड़ी खाद डाल दें। इसके बाद खेत की जुताई करें। बाग लगाने के लिए 10 × 3 × 0.5 फीट आकार की क्यारियां तैयार कर लें। अक्टूबर के अंत या नवंबर के शुरू में उद्यान में स्ट्रॉबेरी के पौधों की रोपाई करें। नवंबर में रोपित पौधों से फुटाव शुरू हो जाएगा। फुटाव शुरू होने पर बाग की निराई-गुड़ाई करके खरपतवार आदि निकाल दें। पौधों में जब 4-5 पत्तियां आ जाएं, तो नाइट्रोजन की प्रथम मात्रा का प्रयोग करना चाहिए। दिसंबर में पत्तियों का धब्बा रोग दिखने पर डाइथेन एम-45 (2 ग्राम/लीटर पानी में) या बाविस्टिन (1 ग्राम/लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें। यदि संभव हो, तो क्यारियों पर पॉलीथीन का टेंट लगा दें, ताकि पौधों की अच्छी बढ़त हो। दिसंबर में नाइट्रोजन व पोटाश की शेष मात्रा अवश्य दें। पौधों में नियमित अंतराल पर सिंचाई करते रहें। पौधों में पलवार (मल्चिंग) की भी उचित व्यवस्था करें। पलवार के लिए सुविधानुसार पुआल, पौधों की पत्तियों, पॉलीथीन आदि का प्रयोग करें।

आड़ू, खुबानी और आलूबुखारा

दिसंबर में नए बाग लगाने के लिए गड्ढों को भर देना चाहिए। गड्ढा भरने के लिए गोबर की खाद 15 से 20 कि.ग्रा./गड्ढा तथा फॉस्फोरसयुक्त उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। इसी माह पौधों की काट-छांट का कार्य भी करें। जड़छेदक कीट से बचाव के लिए क्लोरोपाइरीफॉस का प्रयोग करें। तराई और मैदानी क्षेत्रों में आड़ू की रोपाई का कार्य दिसंबर के अंत तक समाप्त कर लें।

अंगूर में कटाई-छंटाई और निराई-गुड़ाई

नवंबर में अंगूर के बाग की सफाई कर इसे खरपतवारमुक्त रखें। हल्की सिंचाई के बाद निराई-गुड़ाई अवश्य करें। दिसंबर नए उद्यान लगाने के लिए अच्छा माह होता है। इस माह के अंतिम सप्ताह में एक वर्ष पुरानी जड़सहित लताओं को गड्ढों के बीच में लगाकर सिंचाई करनी चाहिए। रोपाई के बाद नीचे से 15 सें.मी. की ऊंचाई से पौधों को छांटना चाहिए। दिसंबर में अंगूर की लताएं सुषुप्तावस्था में आ जाती हैं। इस अवस्था में लताओं से पत्तियां पीली होकर झड़ जाती हैं। इसी अवस्था में अंगूर की कटाई-छंटाई (प्रूनिंग) का कार्य किया जा सकता है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के चुनिंदा हिन्दी प्रकाशन

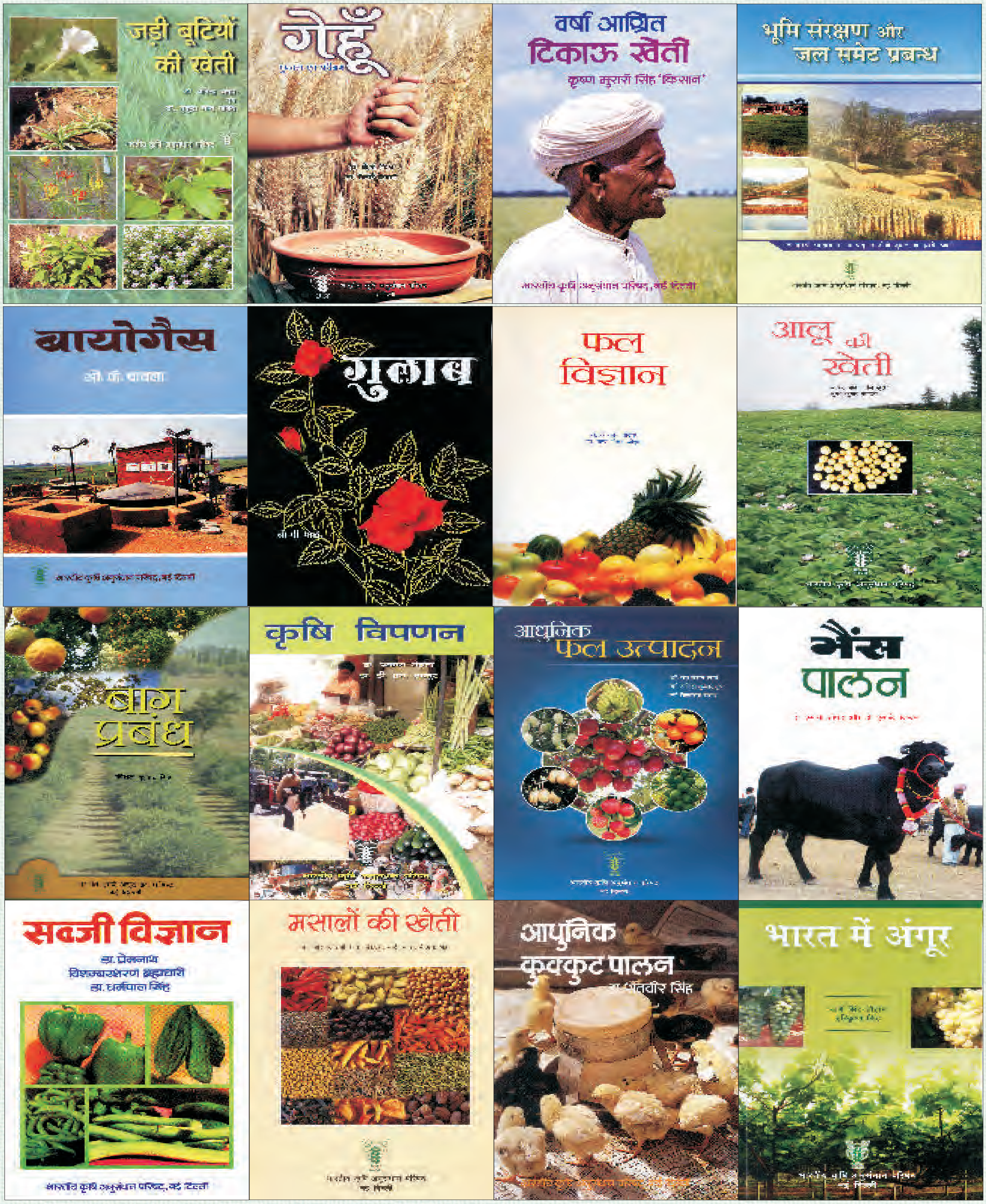

संपर्क सूत्र: प्रभारी, व्यवसाय एकक

कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन, पूसा, नई दिल्ली -110 012

दूरभाष: 011-25843657, E-mail: bmicar.org.in

परिषद की पत्रिकाओं की सदस्यता व नवीनीकरण हेतु फॉर्म

प्रिय ग्राहकों

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा प्रकाशित विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं की सदस्यता प्राप्त करने हेतु अनुरोध है कि आप पत्रिकाओं का वार्षिक सदस्यता शुल्क 'व्यवसाय प्रबंधक, भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद, नई दिल्ली' के नाम देय बैंक ड्राफ्ट या NEFT द्वारा भेजने की व्यवस्था करें। इस प्रकार आपको पत्रिकाएं सुचारू रूप से मिलती रहेंगी और आप कृषि, बागवानी, पशुपालन, मछली पालन व अन्य सम्बद्ध क्षेत्रों में किये जा रहे अनुसंधान कार्यो से विकसित उन्नत तकनीकों को अपनाकर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त कर अपनी आय दोगुनी कर सकेंगे। परिषद की विभिन्न चयनित पत्रिकाओं के लिए नीचे दिए गए बॉक्स में चिन्ह (✓) लगाएं। पत्रिकाओं का वार्षिक सदस्यता निम्न है:-

पत्रिकाओं का नाम	वार्षिक शुल्क	
खेती (मासिक)	रु. 300	☐
फल फूल (द्विमासिक)	रु. 150	☐
इंडियन फार्मिंग (अंग्रेजी मासिक)	रु. 300	☐
इंडियन हॉर्टिकल्चर (अंग्रेजी द्विमासिक)	रु. 150	☐

रिसर्च जर्नल	व्यक्तिगत		संस्थागत	
इंडियन जर्नल ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज (अंग्रेजी मासिक)	रु. 1000	☐	रु. 3000	☐
इंडियन जर्नल ऑफ एनिमल साइंसेज (अंग्रेजी मासिक)	रु. 1000	☐	रु. 3000	☐

उपरोक्त चिन्हित (✓) पत्रिकाओं। रिसर्च जर्नल की अग्रिम धन राशि रुपये .... का एन.ई.एफ.टी./आर.टी.जी.एस. या बैंक ड्राफ्ट संख्या न. ....दिनांक..........................बैंक का नाम एवं कोड..भेज रहें हैं, कृपया स्वीकार करें ।

नाम...

पूरा पता...

....

पिन कोड.................................फोन न. अथवा मोबाइल न. ....ई-मेल...

प्रकाशन मंगवाने की नियमावली

1. कृपया अपने ऑर्डर के साथ अपना नाम, पता, डाकघर आदि का पूर्ण विवरण, पिन कोड नंबर के साथ अवश्य लिखें।
2. भुगतान ''व्यवसाय प्रबंधक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली'' के नाम बैंक ड्राफ्ट द्वारा भेजें।
3. आरटीजीएस (RTGS) तथा एनईएफटी (NEFT) द्वारा ऑनलाइन अग्रिम भुगतान के लिए निम्नलिखित जानकारी देखें:-

	पुस्तकों के लिए	पत्रिकाओं और जर्नल के लिए
संस्था का नाम व पता	DKMA Revolving Fund Scheme	परियोजना निदेशक (DKMA)
बैंक का नाम	सिंडिकेंट बैंक (केनरा बैंक)	सिंडिकेंट बैंक (केनरा बैंक)
बैंक का पता	कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा, नई दिल्ली-110012	कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा, नई दिल्ली-110012
आईएफएससी कोड	SYNB0002413	SYNB0002413
एमआईसीआर संख्या	110025166	110025166
चालू खाता संख्या	24131010000043	24133050000040

PFMS Unique Code : DLND00001925 भारत सरकार एवं परिषद के संस्थानों के लिये।

नोट: कृपया एनईएफटी/आरटीजीएस से अग्रिम राशि भेजने के पश्चात हमें पत्र अथवा ई-मेल businessuniticar@gmail.com द्वारा अपने नाम व पते के साथ अपनी मांगी गई पुस्तकों, पत्रिकाओं एवं जर्नल के नाम और अवधि NEFT/RTGS नम्बर, राशि एवं बैंक का नाम इत्यादि सूचित करना आवश्यक है।

संपर्क सूत्र

प्रभारी, व्यवसाय एकक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा, नई दिल्ली-110012

दूरभाष: 91-11-25843657 (D) 25841993 (Extn. 657 & 220)

ई-मेल: businessuniticar@gmail.com

वेबसाइट: www.icar.org.in

भारत की सबसे तीखी मिर्च 'किंग चिली' का लंदन में निर्यात

पूर्वोत्तर क्षेत्र के कृषि उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा देने के उद्देश्य से नगालैंड की 'राजा मिर्च', जिसे 'किंग चिली' भी कहा जाता है, की एक खेप को पहली बार लंदन निर्यात किया गया है। इस मिर्च को स्कोविल हीट यूनिट्स (एसएचयू) के आधार पर दुनिया की सबसे तीखी मिर्च में से एक माना जाता है। नगालैंड की इस मिर्च को भूत जोलोकिया और घोस्ट पेपर भी कहा जाता है। इसे वर्ष 2008 में जीआई सर्टिफिकेशन मिला था। 'राजा मिर्च' सोलानेसी परिवार के शिमला मिर्च की प्रजाति से संबंधित है। यह चार-पांच इंच लंबी होती है और हरे रंग के अलावा लाल और चॉकलेटी रंग की भी होती है। इसका इस्तेमाल खाने में मसाले की तरह और अचार में होता है। इससे बने व्यंजन काफी स्वादिष्ट होते हैं। पूर्वोत्तर भारत में इसका इस्तेमाल सॉस बनाने में भी किया जाता है। देश के बाजारों में इसकी कीमत 300 रुपए प्रति कि.ग्रा. है, लेकिन लंदन के बाजारों में यह 600 रुपए प्रति कि.ग्रा. की दर से बिकती है।

खानपान विशेषज्ञों के अनुसार, आमतौर पर माना जाता है कि मिर्च, भारत में पुर्तगाली, दक्षिण अमेरिका से लेकर आए थे। 'राजा मिर्च' का नगालैंड में पाया जाना इस मिथक को झूठा साबित करता है। पुर्तगाली भारत में 500 वर्ष पहले वर्ष 1498 में पहले केरल पहुंचे और फिर गोवा में जमे और फिर धीरे-धीरे मिर्च भारत के अलग अलग हिस्सों में फैली। वनस्पतिशास्त्री इस बात पर एकमत हैं कि भारत में जंगली मिर्च पुर्तगालियों के आने के पहले उगती थी और वो है 'राजा मिर्च'। इस लिहाज से देखें तो 'राजा मिर्च' भारत की सबसे पुरानी मिर्च की प्रजाति है। मिर्च को अंग्रेजी में 'चिली' कहा जाता है, जो मेक्सिकन शब्द है। मिर्च का वानस्पतिक नाम 'कैप्सिकम एनम' है। मिर्च का तीखापन इसमें पाए जाने वाले एल्केलायड रसायन 'कैप्सेसिन' (ओलियोरेजिन) की वजह से होता है। मिर्च के पक जाने पर लाल रंग 'कैप्सेन्थिन' के कारण होता है। भारत, दुनिया में मिर्च का न सिर्फ सबसे बड़ा उत्पादक देश है, बल्कि सबसे बड़े उपभोक्ता देशों में से भी एक है। देश में मिर्च पूरे वर्ष कई प्रदेशों में उगाई जाती है। फिलहाल नगालैंड और असोम में छोटे पैमाने पर यह उगाई जाती है। उम्मीद है कि एक बार निर्यात शुरू होने पर, स्थानीय लोग बड़ी मात्रा में इसे उगाएंगे। ■

लीची की तीन नई किस्में विकसित

देश के अलग-अलग हिस्सों में लीची की बागवानी को बढ़ावा देने के लिए भाकृअनुप-राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केंद्र, मुजफ्फरपुर ने लीची की तीन किस्मों-*गंडकी योगिता, गंडकी लालिम* और *गंडकी संपदा* को विकसित किया है। अनुसंधान केंद्र के वैज्ञानिकों के अनुसार अखिल भारतीय समन्वित फल अनुसंधान परियोजना के तहत तीनों प्रजातियों के पौधों को पश्चिम बंगाल, कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, उत्तराखंड, झारखंड, छत्तीसगढ़ और पूर्वोत्तर के राज्यों में भेजने की तैयारी चल रही है। भाकृअनुप-राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केंद्र, मुजफ्फरपुर में इन किस्मों के सैकड़ों पौधे तैयार किए जा रहे हैं। भाकृअनुप-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु के अनुसार, इस समय पूरे देश में लगभग 83 हजार हैक्टर क्षेत्रफल में लीची की बागवानी होती है। ■

नवविकसित लीची किस्मों की विशेषताएं

गंडकी संपदा: इसमें मध्य जून में फल तैयार होते हैं। बड़े आकार के फल का वजन लगभग 35-42 ग्राम तक होता है। पल्प रिकवरी 80 से 85 प्रतिशत होती है। उत्पादन 120-140 कि.ग्रा. प्रति पेड़ मिलता है।

गंडकी योगिता: इसके पेड़ बौने होते हैं। मध्य जुलाई में इसके फल पकने लगते हैं। इसमें पल्प रिकवरी 70-75 प्रतिशत तक होती है और उत्पादन प्रति 70-80 कि.ग्रा. प्रति पेड़ मिलता है।

गंडकी लालिमा: यह देर से तैयार होने वाली किस्म है। जून के दूसरे सप्ताह में फल पकने लगते हैं। इसके फल का वजन 28-32 ग्राम होता है। 60 प्रतिशत से ज्यादा पल्प रिकवरी होती है और उत्पादन 130-140 कि.ग्रा. प्रति पेड़ मिलता है।

ISSN 0971-2984 पंजी. सं. (क्यू)-437

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की लोकप्रिय मासिक हिंदी पत्रिका

खेती

- निरंतर 73 वर्षों से प्रकाशित आपकी अपनी लोकप्रिय हिंदी मासिक पत्रिका **खेती** में खेती-बाड़ी के आधुनिक तौर-तरीकों, पशुपालन की उन्नत विधियों, कृषि वानिकी, औषधीय पौधों की खेती तथा प्रगतिशील किसानों की सफलता गाथाओं से जुड़े अनुभवी कृषि वैज्ञानिकों के लेखों को अत्यंत सरल भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। इस जानकारी का लाभ किसान भाई अपनी कृषि आय बढ़ाने के लिए उठा सकते हैं।
- संपूर्ण रंगीन पृष्ठों से सुसज्जित इस प्रतिष्ठित पत्रिका में **'अगले माह के कृषि कार्यकलाप'** तथा 'कृषि खबरें, देश विदेश की' जैसे अत्यंत उपयोगी नियमित स्तंभ भी हैं जो रोचक होने के साथ नई जानकारियां भी प्रदान करते हैं। यही नहीं विभिन्न किसानोपयोगी विषयों पर पत्रिका के विशेषांकों का भी समय-समय पर प्रकाशन किया जाता है।

पत्रिका मूल्यः

एक प्रति : 30 रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्क : 300 रुपये

संपर्क सूत्रः

प्रभारी, व्यवसाय एकक
कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-110012
दूरभाष : 011-25843657, ईमेल : bmicar@icar.org.in

डा. एस. के. सिंह, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली 110 092 से मुद्रित। सम्पादक: अशोक सिंह